नारायण भट्ट

(तेलुगु का उत्तम ऐतिहासिक उपन्यास)

रचयिता

कवि सम्राट

श्री नोरि नरसिंह शास्त्री

अनुवादक

श्री बालशौरि रेड्डी

प्रकाशक

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

मद्रास–17

हिन्दी प्रचार पुस्तकमाला, पुष्प-294
पहला सस्करण
अगस्त, 1971
2,

दाम रु० 4·00

O. No. 595

मुद्रक : दक्षिण भारत प्रेस,
हैदराबाद-4

प्रकाशकीय

सभा की स्थापना पूज्य बापू के सकल्पो को रूपायित करने के लिए हुई थी। तदनुसार सभा ने दक्षिण मे हिन्दी प्रचार-प्रसार को अपना लक्ष्य माना और उपलक्ष्य माना, दक्षिण पथ और उत्तरापथ के बीच हिन्दी तथा दक्षिण-भाषाओ के माध्यम से साहित्यिक आदान-प्रदान हो। अत दक्षिण के उत्तम साहित्य का परिचय न केवल हिन्दी भाषी क्षेत्र को बल्कि हिंदी द्वारा समस्त भारत को कराने का महत्वपूर्ण कार्य भी सभा द्वारा होता आया है। अपने इस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए सभा अब दक्षिणी साहित्य माला, दक्षिणी अनुवाद साहित्य माला, दक्षिण-सत जीवनियाँ दक्षिण की प्रतिनिधि कहानियाँ आदि प्रकाशन के सिरीज के रूप मे काफी आगे बढ चुकी है। सभा का दृढ विश्वास है कि उक्त प्रकाशन-योजनाओ द्वारा दक्षिण की चारो भाषाओ के ओजस्वी साहित्य का हिंदी-भारत मे तथा राष्ट्रभाषा के मौलिक और वीर्यवान साहित्य का प्रादेशिक भाषाओ के माध्यम से दक्षिण मे प्रसार सफलीभूत होगा।

इस सिलसिले मे आध्र सस्कृति, तेलुगु की प्रतिनिधि कहानियाँ, एकवीरा आदि मौलिक तथा अनूदित कृतियो द्वारा सभी हिन्दी के सहृदय पाठको को आध्र सस्कृति व तेलुगु साहित्य-गरिमा की किंचित झाँकी करा चुकी है। अब उसी शृखला मे तेलुगु के मूर्धन्य उपन्यासकार श्री नोरि नरसिह शास्त्री की प्रसिद्ध उपन्यास कृति "नारायण भट्ट" को प्रकाशित करते हुए हमे बडी प्रसन्नता हो रही है। इस कृति के मूल लेखक नयी-पुरानी पीढियो के सशक्त कविवर भी है। आपने सभा द्वारा इस उपन्यास को प्रकाशित करने की अनुमति उदारतापूर्वक दी है, तदर्थ हम उनके अत्यत आभारी है।

इस उपन्यास का अनुवाद श्री बालशौरि रेड्डी ने किया है जो अहिन्दी प्रदेशीय हिन्दी लेखकों मे गणनीय है साथ ही हिन्दी-तेलुगु साहित्यो के सधे हुए सधिवाहक भी माने जाते है। अतएव मूलकृति के अनुवाद की प्रामाणिकता मे सदेह की गुजाइश नही हो सकती है। साथ ही इस पुस्तक के प्रारभ मे, श्री रेड्डीजी द्वारा लिखित आमुख भी सलग्न है जिससे प्रस्तुत उपन्यास के सरस पाठको को उद्दीपन हासिल हो सकता है। इस सहयोग के लिए सभा श्री रेड्डी के प्रति भी अपनी कृतज्ञता प्रकट करती है।

केन्द्रीय प्रेस की व्यस्तता के कारण इस पुस्तक की पाडुलिपि की छपाई-व्यवस्था सभा को अपनी आध्र शाखा के प्रेस मे करनी पडी है।

हमारी पूर्ण आशा है कि पूर्व पुस्तको की तरह इस पुस्तक का भी हिन्दी जगत मे समुचित स्वागत होगा तथा उससे सभा को इस दिशा में अधिकाधिक कार्य करने के लिए अपेक्षित प्रोत्साहन भी प्राप्त होता रहेगा।

—प्रकाशक

आमुख

भारतीय भाषाओ मे महाभारत का स्थान गणनीय है। महर्षि व्यास ने तत्कालिन इतिहास को प्रौढ काव्य का रूप दिया। व्यास कृत सस्कृत महाभारत का प्राय समस्त भारतीय भाषाओ मे रूपातर हुआ है। तेलुगु के तीन महाकवियो ने जो कवित्रय नाम से विख्यात है, इस काव्य का प्रणयन किया है। वे क्रमश नन्नय भट्ट, तिक्कन्न सोमयाजी तथा एर्राप्रेगडा थे। इन तीनो महाकवियो के व्यक्तित्व एव कृतित्व का विपुल परिचय तत्कालीन इतिहास की पृष्ठभूमि पर कवि सम्राट नोरि नरसिंह शास्त्री ने कराया है। उन महाकवियो की काव्य साधना का समग्र वृत्तात हमे कवि सम्राट द्वारा प्रणीत नारायण भट्ट, रुद्रमदेवी तथा मल्लारेड्डी नामक ऐतिहासिक बृहत उपन्यासो के द्वारा विदित होता है।

नारायण भट्ट सस्कृत, तेलुगु व कन्नड के प्रकाड पडित तथा महाकवि थे। चालुक्य वशी नरेश राज राजनरेन्द्र वेगी राज्य के अधिपति थे तथा चोळ राजा गगैकोड राजेन्द्र चोळ के जामाता थे। उन्ही के आदेश पर नन्नय भट्ट ने नारायण भट्ट की सहायता से सस्कृत महाभारत के तेलुगु रूपातर कार्य अपने हाथ मे लिया। तथा आदि पर्व, सभा पर्व समाप्त किया और वनपर्व की रचना के समय उनका देहात हो गया। महाकवि तिक्कना ने एक शताब्द के पश्चात शेष पन्द्रह पर्वों की रचना समाप्त की। एर्रा-प्रेगडा ने वनपर्व के शेषाश की पूर्ति की।

तिक्कना के रचना काल मे काकतीयवशी रानी रुद्रमा आन्ध्र पर शासन करती थी। एर्राप्रेगडा के रचना काल में आन्ध्र पर रेड्डी राजाओ का शासन था। कवि सम्राट ने तिक्कना के युग का समग्र परिचय देते हुए"रुद्रमदेवी" प्रस्तुत किया तथा रेड्डी राजाओ के युग का इतिहास "मल्लारेड्डी" उपन्यास मे प्रतिबिबित किया। इनके अतिरिक्त रेड्डी राजाओ के युग को प्रतिबिबित करने वाला एक और उपन्यास "कवि सार्व भौम" नाम से प्रस्तुत किया है। अत श्री नरसिह शास्त्री जी ऐतिहासिक उपन्यास सम्राट नाम से विख्यात हुए।

तेलुगु महाभारत के सृजन सबधी जो सदेहास्पद बाते थी, उनका निराकरण नोरि नरसिह शास्त्री ने इस उपन्यास के माध्यम से किया है।

एक हजार वर्ष पूर्व का आन्ध्र इतिहास इस उपन्यास के इतिवृत्त मे समाहृत है।

साप्ताहिक आन्ध्र पत्रिका मे यह उपन्यास धारावाही प्रकाशित हुआ। तदनतर पुस्तकाकार मे। यह उपन्यास उस बृहत्काय उपन्यास का सक्षिप्तीकरण है। उपन्यास का इतिहास ई० सन् १०३३ के आसपास का है।

इस उपन्यास मे सदर्भानुसार अश्वो की प्रतियोगिता, खड्ग युद्ध, अथर्वणपडित तथा चीनी पडित का शास्त्रार्थ, जैन तथा बौद्ध धर्मों के सप्रदाय, वाणिज्य एव व्यापार, उत्सव, सार्थवाहो के वृत्तात, युद्धो की व्यूह रचना, न्यायालय, सामाजिक रीति-नीतियाँ, इत्यादि यथावत चित्रित है।

प्रमुख पात्रो मे राज राजनरेन्द्र, नारायण भट्ट, नन्नय भट्ट, वज्जिय, अथर्वण, जेतारीनाथ, अम्मगदेवी, सोमिदेवी, कुपमा, विन्ध्यवासिनी, सुजाता इत्यादि पात्रो का चरित्र-चित्रण अत्यत मनोज्ञ बन पडा है।

महाभारत की रचना मे नन्नय भट्ट को नारायण भट्ट की सहायता इस प्रकार प्राप्त हुई थी, जैसे महाभारत के युद्ध मे अर्जुन को श्रीकृष्ण की

सहायता प्राप्त थी। अत इस उपन्यास मे नारायण भट्ट के महत्व को स्वीकार करते हुए लेखक ने इस का नामकरण नारायण भट्ट ही किया है।

'नारायण भट्ट' की लोक प्रियता का मूल्याकन हम इसी आधार पर कर सकते है कि १९५० मे तेलुगु भाषा समिति ने इसे श्रेष्ठ उपन्यास घोषित कर पुरस्कृत किया है तथा आन्ध्र, मद्रास उस्मानिया उत्कल इत्यादि विश्वविद्यालयो ने इसे पाठ्यक्रम मे स्थान देकर पुस्तक की उपयोगिता एव महत्व को स्वीकार किया है।

मुझे इस बात का बडा आनद हो रहा है कि मैंने शास्त्री के रुद्रम-देवी का अनुवाद साहित्य अकादमी, दिल्ली के लिए कई वर्ष पूर्व किया था, अब सभा ने नारायण भट्ट का अनुवाद करने का अवसर प्रदान किया।

मेरे गुरु श्री पी नारायण, साहित्य मत्री ने इस उपन्यास का आमुख लिखने का अवसर प्रदान किया, अत मैं उनके प्रति अपना हार्दिक आभार प्रदर्शित करता हूँ।

सभा के प्रति आभार प्रदर्शित करके मैं उसके महत्व को कम करना नही चाहता। क्योकि करीब पद्रह वर्ष तक सभा के विभिन्न विभागो मे कार्य करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैं सभा का ही हूँ। इस वक्त भले ही मैं कायिक दृष्टि से सभा की सेवा मे न हूँ, फिर भी मानसिक दृष्टि से मैं सभा के आदर्शो के पालन मे सलग्न हूँ।

साहित्य समिति ने मुझे यह जो कार्य सौपा, इसके लिए मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

'चन्दामामा"
मद्रास-२६

—बालशौरि रेड्डी
१३-९-७१

1

राजमहेन्द्रपुर कोलाहलपूर्ण था । विद्यार्थियो तथा सरकारी कर्मचारियो के लिए छुट्टी थी । विभिन्न प्रकार की क्रीडाओ के कुशल खिलाडियो को अपना कौशल प्रदर्शित करने का अच्छा अवसर था । एक सप्ताह तक क्रीडाओ का आयोजन किया गया था । आज से पाँच वर्ष पूर्व राजराजनरेन्द्र ने अपने प्रताप के बल पर कर्नाटक की सेनाओ को भगा दिया था । साथ ही कर्नाटको के मित्र बनकर आये हुए अपने सौतेले भाई विजयादित्य को अपने वात्सल्य के बल पर वश मे कर लिया था । उन्ही विजयो की स्मृति मे प्रतिवर्ष ऐसे उत्सव चैत्र शुक्ला दशमी से मनाये जाते थे । 'विजय-सवत्सर' के चैत्र मास मे अत्यन्त वैभव के साथ उत्सव मनाने का आयोजन किया गया था ।

उत्सवो को देखने के लिए वेगीराज्य के कोने-कोने मे ही नही, बल्कि अन्य राज्यो से राजपुत्र, वीर तथा सपन्न परिवारो के लोग आये हुए थे । उन सबके ठहरने के लिए राजमहेन्द्रपुर के विश्रामगृह पर्याप्त नही थे । इसीलिए नगर के बाहर धवलगिरि तक पट-कुटीर बनाये गये थे । समर्थ शिल्पियो ने उस प्रदेश को अत्यन्त सुन्दर, शोभायमान एव निवासयोग्य बनाया था ।

नगर के चतुर्दिक मे व्याप्त जनपदो से अपार जनता उमड पडी थी । नगर का राजपथ इतना विशाल था, जिसपर रथ, गज, तुरग इत्यादि

स्वेच्छापूर्वक विहार कर सकते थे। परतु आज लोगो की भीड से वह पथ खचाखच भरा हुआ था। इसलिए मनुष्यो का यातायात भी कठिन था।

लेकिन जैसे-तैसे जगह बना कर एक जादूगर अपनी अनोखी विद्या का प्रदर्शन कर रहा था। उसने तत्काल आम की एक गुठली बोयी, उसे पौधा बनाया, दूसरे पल मे उसे एक वृक्ष बनाया। उसमे फल लगा कर सब मे बाँटने भी लगा। वे फल एक से न थे, कुछ लोगो ने चख कर कहा कि आम खट्टे हैं, कुछ लोगो ने मीठा बताया तो कतिपय लोगो ने कडुआ। जादूगर यह बताते हुए प्रेक्षको का मनोरजन कर रहा था कि उनके स्वभाव के अनुरूप फलो का स्वाद भी बदलता रहेगा।

महाराजा के अंगरक्षको में राजमय्या एक था। उस रास्ते से गुजरते उसने भीड इकट्ठी देखी, तो पूछा, बात क्या है। जादू का नाम सुनते ही उसकी बाँहे खिल गयी। उसने भी भीड को चीरते हुये जादूगर के निकट पहुँच कर आम का टुकडा लिया। चख कर देखा तो कडुआ निकला। इसलिए मुंह सिकोड कर वह चलता बना। उसके थोडी दूर चलने के बाद जादूगर ने जल्द-जल्द डग भरते उसका अनुकरण किया और विकृत चेष्टाएँ करते सबको हँसाने लगा।

एक-दूसरे स्थान पर करनट ढोल बजाते बाँस पर चढ कर विचित्र ढग से पल्थियाँ मार रहे थे, जिसे देख प्रेक्षक आश्चर्य चकित हो जाते थे। एक करनट नवयुवती की नज़र और बोली भी उपस्थित युवको के दिलो मे गुदगुदाहट पैदा कर रही थी।

एक जगह उछल-कूद करते एक व्यक्ति बौद्धजातक कथाओ को कथा के रूप मे गा-गाकर सुना रहा था। उस कथा को सुनने के लिए गरीब लोग धक्का-मुक्की कर रहे थे।

एक और जगह पंडित वेश मे गद्दी पर बैठे एक व्यक्ति नाथ पुराण गद्य-पद्य समन्वित बना कर सुना रहा था। वह अत्यत ही कर्ण मधुर था।

3

असख्य प्रजा की अवहेलना करते तरह-तरह के वेष धारण कर नगर के चतुर्दिक घूमा करते थे। उनमे से एक ने राजमय्या को देख उसकी स्तुति करना प्रारभ किया—"वाह, क्या कहे! आपका कैसा सुन्दर चेहरा है। स्वभावत: विकृत दृष्टि वाला वह अगरक्षक और विकृत दृष्टि डालते क्रीडा-द्वीप की ओर आगे बढ़ा।

एक ओर उस नगर मे असख्य मनोरजनो का आयोजन था तो दूसरी ओर बहुत बडी हाट लगी हुई थी। फिर भी अधिकाश लोग बडी उत्कठा के साथ क्रीडा-द्वीप नामक गोदावरी टापू की ओर जा रहे थे। वह द्वीप धवलगिरि के सामने गोदावरी मे नगर के समीप मे ही था। वह टापू विशाल न था। राजबन्धु, सरकारी कर्मचारी अपनी-अपनी नौकाओं पर उस टापू मे पहुँच रहे थे। वे नौकाएँ मनोज्ञ थी और बडे हँसों की भाति गोदावरी मे अत्यत शोभायमान दीख रही थी। गरीब लोग नौकाओ से बनाये गये पुल पर पैदल चल कर उस टापू मे पहुँच रहे थे। राजमय्या भी पैदल चल रहा था। कोई नया व्यक्ति छाया की भाति उसका अनुसरण कर रहा था। मगर उसने उस द्वीप मे पहुँचने तक यह बात नही जानी। उसके मुड कर देखते ही वह छाया पुरुष भीड मे अदृश्य हो गया।

उस द्वीप मे उत्सव समय के अतिरिक्त अन्य दिनो मे कोई भी विशेष अनुमति के बिना प्रवेश नही कर सकता था। यही पर राजपुरुष तथा सिपाही युद्ध विद्या का अभ्यास करते हैं। नाना प्रकार के शस्त्रो का प्रयोग वहाँ पर देखा जा सकता है। खड्ग-युद्ध, बाण-प्रयोग, मल्ल-युद्ध इत्यादि का प्रदर्शन होता है। पुराण युग से भी आन्ध्र मल्ल-योद्धा ही अग्रणी हो भारतवर्ष के मल्ल-विद्याचार्य रहे है। उनको पराजित करने के विचार से पाचाल, केरल आदि राज्यो से मल्ल-योद्धा आये हुये थे। उस द्वीप मे अश्वारोहण का चातुर्य गज-विद्या प्रदर्शन आदि का आयोजन था। साथ ही सर्वसाधारण जनता के विनोदार्थ भेड, कुक्कुटश्येन इत्यादि की लडाइयो का भी प्रबंध किया गया था।

4

उपर्युक्त क्रीडाओं के प्रदर्शन के लिए अर्ध चन्द्राकृति मे एक रगमच का निर्माण किया गया था। असख्य वर्णों की ध्वजाओ से उसका अलकार किया गया था। प्रत्येक सामत वश के लिए अपनी एक अलग ध्वजा थी। इसी भाति प्रत्येक श्रेणी के लिए एक भिन्न प्रकार की ध्वजा थी। परतु समस्त ध्वजाओ से उन्नत एव प्रकाशमान हो चालुक्यवशी नरेशो की वराह-ध्वजा फहरा रही थी।

रगमच पर प्रदर्शित होने वाली क्रीडाओ को समस्त प्रकार की जाति वालो के देखने योग्य ढग से, प्रत्येक वश व श्रेणी की विशिष्टता को कायत रखते हुये उचित स्थानो की व्यवस्था की गयी थी। सर्वत्र राजभट उप-स्थित जनता के प्रति आदर-भाव प्रदर्शित करते हुए राजा के आदेशो का पालन कर रहे थे।

एक ओर राज परिवार के लोगो तथा दूसरी तरफ राजाधिकारियो के लिए छोटे टीले पर उचित आसन सजाये गये थे। मध्य भाग मे राज-राजनरेन्द्र के लिए नवरत्न खचित सिहासन शोभायमान था। उन आसनो के समीप मे ही रनिवास की नारियो के लिए अत पुर की मर्यादाओ के अनुरूप क्रीडाओ के अवलोकन के लिए उचित प्रबध किया गया था।

राज-राजनरेन्द्र की नाव के उस किनारे से रवाना होने का समाचार मद मारुत की भाति जन-समूह मे फैल गया। तत्काल ही सबकी दृष्टि उस राज-नौका की तरफ खिच गयी। मगल सूचक ध्वनियो से गगनमडल गूँज उठा।

राज-नोका मयूर आकृति वाली थी। उसके मध्य भाग मे एक सुन्दर कक्ष था। उसमे उचित आसन पर राज-राजनरेन्द्र विराजमान थे। उनके दक्षिण-पार्श्व मे युवराज राजेन्द्रदेव तथा वाम-पार्श्व मे सौतेला भाई विजयादित्य आसीन थे। नाविक विभिन्न रगो वाली डाडें चला रहे थे, इस प्रकार वह नाव मजुल नादो के साथ जल-तरगो पर नृत्य करती-सी हुई आगे बढ रही थी।

5

राज नौका के आगे मार्ग दर्शन करते एक छोटी नाव चल रही थी, उसके मुख द्वार के सामने एक नर्तकी राजा के अभिमुखी हो मद्राभान्त की 'कुमार अस्त्र विद्या-प्रदर्शन' घटना अभिनय कर रही थी।

राज-नौका के निर्णीत प्रदेश पर पहुँचने ही राजराज नौका से बाहर आये। नर्तकी ने अपना नृत्य समाप्त कर कर्पूर की आरती उतारी, अन्य कन्याओ के साथ मिल कर मगल गीत गाये। इसके उपरान्त पुन तीन बार आरती उतार कर आँखो से लगाया तब वह पार्श्व मे जा खडी हुई।

राजराज के आगमन के साथ सभी नागरिक उठ खडे हुये। बन्दी-जन ने विरुदावलियाँ गाकर स्तुति की। मागध ने चालुक्यवर्मा नरेशो के इतिहास का गान किया

"श्री धाम्न पुरुषोत्तमस्य महतो नारायणम्य प्रभो
नाभी पकरुहा द्वभूव जगन स्त्रष्टा स्वयभूस्तत
जज्ञे मानससूनु रत्रि रिति यस्त स्मान्मुने रत्रित
सोमो वशकर स्सुधाशु दिन श्रीकठ चूडामणि "

राजराज गज गमन के साथ सिहासन के निकट पहुँचा। सर्वप्रथम उन्होने राजगुरु नन्नय भट्टारक को प्रणाम किया। इसके उपरान्त विद्वान और कवि चीदमार्य, पपन भट्टाचार्य, भीमन भट्ट, चेट्टन भट्ट, मुट्टन भट्ट, मल्लना को, वृद्ध अमात्य वज्जिय प्रेग्गडा तथा नृपकामदण्ड को विनयपूर्वक नमस्कार किये। तदनतर सिंहपीठ का स्पर्श करके उसे प्रणाम किया। तब सबकी अनुमति के साथ सिहासन पर विराजमान हुये।

सभापति नन्नय भट्टारक की आज्ञा लेकर राजपुरोहित ने श्री महा गणाधिपति की पूजा की। पुरोहित ने प्रणवपूर्वक स्पष्ट स्वर मे निम्न श्लोक का उच्चारण किया—

"देवी वाच मजनयत देवा स्ता
विश्वरूपा पशवो वदति
सा नो मद्रेपु मूर्ज दुहाना
धेनु र्वा गस्मा नुप सुष्टुतैतु ।"

इस श्लोक का श्रवण करते ही नन्नय भट्टारक का शरीर आनद के साथ पुलकित हो उठा। पूजा की समाप्ति पर श्री महागणाधिपति का प्रसाद राजराज से लेकर युवराज आदि ने भी भक्तिपूर्वक ग्रहण किया।

अत मे विप्रवरो का पुण्याहवाचन कर्ण पर्व कर उठा।

2

एक साथ मगल कर पच तूर्यारव नभो मण्डल को गुजायमान करने लगे । उस ध्वनि के शात होने पर पार्श्ववर्ती राजदूत ने गभीर स्वर मे उस दिन के कार्यक्रम की घोषणा की—"आज सुबह अश्व-शिक्षण का प्रदर्शन तथा शाम को विद्या-गोष्ठी होगी ।" कुछ ही क्षणो मे अश्व-शिक्षण का कार्यक्रम प्रारभ होगा ।"

तत्क्षण अश्वारूढ राजकुमार एक-एक करके सब उपस्थित हुये और सिहासन के सामने अपने मस्तको के साथ अश्वो के मस्तक झुकवा कर अभिवादन किया ।

अश्व अनेक वर्णों के थे और प्राय सबके सब उत्तम नस्ल के थे । उन पर चमकने वाले पीताम्बर शोभायमान थे । अश्वारोहियो ने उन अश्वो के वर्ण तथा पीताबरो के अनुरूप भाति-भाति के वस्त्र धारण किये हुये थे । उस रगमच पर एक साथ सैकडो की सख्या मे अश्वारोहियो को देख प्रेक्षको के शरीर पुलकित हो उठे । इस प्रकार क्षण भर के लिए अपार जन समूह आनन्द की परवशता मे स्तब्ध रहा ।

राजकुमारो ने दलो मे तथा अलग रूप से भी, अश्वो के तरह-तरह के प्रदर्शन किये । वे अश्वारोही युद्ध-क्रीडाओ का वीरोत्साह तथा नागरक क्रीडाओ का विलास भी जानते । उन लोगो ने अश्वारूढ होकर शूल, कुत

आदि प्रयोगो के साथ बहु विध कदुक-क्रीडाओ का भी प्रदर्शन किया। उनमे अधिकाश चालक्यवशी राजकुमार थे, कतिपय चालुक्यवशी राज-कुमार थे। इनके अतिरिक्त कदब, गगवशी पल्लव तथा उच्च पदो मे स्थित सामत और दण्डनाथ भी थे।

परतु उनमे नागरिको को विशेष रूप से आकृष्ट करने वाले कुमार सप्तक थे। वे क्रमश विमलादित्य, विक्रमादित्य, विष्णुवर्द्धन, मल्लप्पा, काम तथा राजमार्ताड नामधारी सात सहोदर थे। उनके पितामह बेट विजयादित्य ने केवल पन्द्रह दिन ही वेगी राज्य पर शासन किया। फिर भी उस अल्प अवधि मे उन्होने दीनो धार्मिक तथा शिक्षा-सस्थाओ को अपार दान दिये। उन दानो की स्मृति आज भी जनता मे थी। इन राज-कुमारो के पिता सत्याश्रय ने भी शस्त्राधारी हो अनेक देशो का सचार किया। गजनी महम्मद को पराजित करने वाले अनगपाल के मददगार रहे। युद्धो मे अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया। आखिर वृद्धा-वस्था मे अपने कुमार सप्तक को साथ ले राजराज के दरबार मे स्थान पाया। अपने पुत्रो को राजा को सौप कर निश्चिन्तता के साथ स्वर्गवासी हुये। सत्याश्रय के उपदेशानुसार ही राजराज नरेन्द्र ने यह जान लिया कि भविष्य मे अश्वदल की वृद्धि करनी चाहिये। इसीलिए वे इस प्रयत्न मे रहे। अपने पिता की मृत्यु के बाद ये सातो राजकुमार राजराज नरेन्द्र की कृपा प्राप्त करने के साथ जनता का आदर भी पाने लगे।

कुछ समय उपरान्त राजा की अनुमति पाकर युवराज राजेन्द्रदेव, तथा विजयादित्य का पुत्र शक्तिवर्मा भी रग-स्थल पर उपस्थित हुये। उनकी उपस्थिति देख जनता मे कोलाहल उमड पडा। कोलाहल के स्वर मे गोदावरी का घोष दब गया।

राजेन्द्रदेव जिस घोडे पर आरूढ था, वह श्वेत वर्ण का था। उसके भाल पर कल्याण चिह्न अकित था। उस पर झूलने वाला पट नीले रग के किनारो वाले हरिद्रावर्ण का था। उसने जो जरीदार रेशमी वस्त्र पहने थे,

वे दाडिम पुष्पों की कान्ति से शोभायमान थे। उसके शिरस्त्राण के मध्य भाग मे वराह-चिह्न स्पष्ट रूप से दिखायी दे रहा था। उसके नीचे कमल तथा दोनो तरफ दीप-स्तम्भ अकित थे। साथ ही उसके ऊर्ध्व भाग मे विजामर, शख तथा आडी रेखा के रूप मे अकुश, उसके ऊपर अष्टमी वाली चन्द्र रेखा, भाति-भाति के वर्णो से चित्रित थे। उसके कठ मे युव-राज पद का चिह्न वज्र-कठिका सूर्य किरणो को प्रतिफलित करा रही थी।

शक्ति वर्मा का अश्व रक्तवर्ण का था। उसके मुख पर पद्माकृति वाला सफेद दाग था। उस पर झूलने वाला वस्त्र श्वेत वर्ण का था और चमक रहा था। उसने हरे रग के चीनावर धारण किये थे।

दोनो राजकुमार रक्त वर्ण मिश्रित स्वर्णिम देह कान्ति वाले थे दोनो के मुख मण्डल सुन्दर एव मनोज्ञ थे।

शक्ति वर्मा का जन्म आन्ध्र देश मे हुआ और वही पर वह बढा भी। उसकी माता कलिग की राजकुमारी थी। शक्ति वर्मा मे आन्ध्रत्व पूर्ण रूप से मूर्तीभूत था।

युवराज की बात कुछ भिन्न थी। दो पीढियो से उसका मातृ-पक्ष से चोळ देश के साथ अविच्छिन्न सबध रहा है। उसकी पितामही कुदव महा-देवी सिहले पर दिग्विजय करने वाले सम्राट राजराज चोळ की सुपुत्री थी उसकी माता अम्मगदेवी गगा तट तक दिग्विजय करने वाले गगैकोडा राजेन्द्र चोळ की प्यारी पुत्री थी। उस चक्रवर्ती का नामकरण ही युवराज को पसद किया गया था। इसका जन्म मातामह के घर पर ही हुआ था। नामकरण-सस्कार के समय सामुद्रिको ने बताया था कि इस बालक की जन्म-पत्री मे सम्राट बनने के शुभ लक्षण हैं। यही कारण है कि राजेन्द्र चोळ अपने मातामह के लिए विशेष प्रिय पात्र बना तथा चोळ राज्य मे चोळवशी राज-पुत्रों के साहचर्य मे विद्याभ्यास करता रहा। अपने माता-पिता को देखने के लिए वह जब-तब राजमहेन्द्रवर आया करता था। उसने

चोळ देश की राजकुमारी के साथ ही विवाह किया था। इन सब कारणो से युवराज की मुख-मुद्रा, व्यवहार, तथा चाल मे भी दाक्षिणात्य लक्षण अभिव्यक्त हो रहे थे। उसकी तेलुगु मे भी दाक्षिणात्य रीति परिलक्षित हो रही थी।

इस कारण से तेलुगु भाषा-भाषी प्रेक्षक समुदाय शक्ति वर्मा के प्रति पक्षपात भाव प्रदर्शित कर रहा था।

अश्व-विद्या मे दोनो राजकुमारो के बीच थोडा अतर था। असाधारण प्रयोगो के समय भी शक्ति वर्मा के मुख मडल पर मदहास झलकता था। उसमे आत्मविश्वास का भाव भी स्पष्ट दिखायी देता था। नालो को लाघते समय भूल से घोडे के पैर जल पर पड जाते और जल के उछलने पर कपडे भीग जाते, तो भी उसकी परवाह किये बिना इस तरह आगे बढ जाता, मानो उस कला के प्रदर्शन मे वह सफल हुआ हो। ऐसी हालत मे विज्ञ लोगो को छोड सर्वसाधारण जनता उसकी दृष्टि को समझ न पाती। उसके अग-अग मे यौवन छलक रहा था। युवराज राजेन्द्र अवस्था मे शक्ति वर्मा से छोटा था। पूर्ण यौवन मे उसने अभी तक पग न धरा था। अश्व-विद्या मे वह शक्ति वर्मा से किसी बात मे कम न था, परतु शक्ति वर्मा प्रेक्षको की दृष्टि मे सुशिक्षित तथा राजेन्द्र अर्द्ध शिक्षित प्रतीत हो रहे थे।

इतने मे बिजली की कौंध की भाति एक सिधवासी एक सजे हुये घोडे पर रगमच के बीच आ धमका। उसके भाल पर एक सुवर्ण पट लटक रहा था। उस पर अपभ्रश मिश्रित पाकृत भाषा मे यो लिखा था—"इस अश्व पर चढ कर जो सवारी करेगा, यह उसी का होगा।"

निश्चत कार्यक्रम मे विघ्न उपस्थित होने से वृद्ध अमात्य वज्जिय प्रेग्गडा की भृकुटी तन गयी। उसके मुँह से कुछ निकलने के पूर्व ही राजराजनरेन्द्र ने उत्साहपूर्वक इस अवाछित नये विनोद के प्रदर्शन की आज्ञा दे दी।

राजदूत ने राजाज्ञा की घोषणा की। तत्काल ही चारो तरफ से राजकुमार, वीर, अश्व-शिक्षण प्राप्त युवक उत्साह के साथ रगमच पर आ उपस्थि हुये। उनमे विकृत मुँह वाला राजमय्या अनायास ही प्रेक्षको को अपनी ओर आकृष्ट कर रहा था।

दडनाथो मे जननाथ, मुप्पराजु, ओड्डवाडि छोडया, वीरगोट्टन चोडना, वीरगोट्टन सूरया, जतुरुवाटि सूरना, रापर्ति बेतया, तथा सरुदुनाटि वीर चोड आगे आये। अनेक राजकुमार भी आगे आये, जिनमे युवराज राजेन्द्र देव भी था। युवराज को आगे आये देख सभी दडनाथ उसके निकट आये, झुक कर प्रणाम करके अलग हट गये। राजा के अग रक्षको मे से एक राजमय्या जो उसी दिन सेवा से अवकाश ले चुका था, वह भी आदरपूर्वक युवराज को प्रणाम करके लौट गया। उसके लौटते देख जन समुदाय परिहासपूर्वक कोलाहल करने लगा। फिर भी वह इस प्रकार एक कोने मे जाकर दुबक कर विनयपूर्वक खडा रह गया, मानो उस पर ध्यान न देता हो।

इस प्रकार युवराज के साथ होड लगाने की इच्छा न रखने वाले वापस चले गये। शेष लोगो को राजा का आदेश पाकर भटो ने दो कतारो मे खडा किये। एक कतार मे साधारण लोग और दूसरी पक्ति मे राजपूत थे। पहले साधारण लोगो वाली पक्ति मे से लोगो को निमन्त्रण दिया गया।

अपने निकट आने वाले व्यक्ति के कदमो की आहट पाते ही उस अश्व ने विजली की कौंध-सी उसके विमुख हो पिछली टागो से लात मार दी। लात खाकर सवार करने की इच्छा रखने वाला व्यक्ति दूर जा गिरा। दूसरा व्यक्ति सावधान होकर ही हय के निकट आया, तब भी घोडे ने गर्दन हिला कर उसे भी गिरा दिया। तीसरे को सर मार कर गिरा दिया। इस प्रकार अपने को अश्व-कुशल मानने वाले कई लोगो को घोडे ने कई प्रकार से गिरा कर अपमानित किया। इस पर साधारण प्रजा की

पंक्ति से कोई आगे न आया। प्रेक्षक उच्च स्वर मे चिल्ला रहे थे। अब केवल राजपूत ही शेष रह गये थे। उन्हे भी घोडे पर काबू करने का आदेश हुआ।

सर्वप्रथम मेघगिरिनाथ नामक नागवशी राजा आगे आया 'मेल्प कदर्प' तथा 'मलय भास्कर' इनकी उपाधियाँ है। कुछ वर्ष पूर्व इसने राज-राजनरेन्द्र से क्रुद्ध होकर उसके प्रतिद्वन्द्वी विजयादित्य की महायता की। उस युद्ध मे अपने अनुपम पराक्रम का परिचय दे 'कोपुलुग' नामक गाँव पुरस्कार के रूप मे प्राप्त किया था। किन्तु विजयादित्य के साथ जब राज-राजनरेन्द्र की सधि हुई, तब दयाभाव से प्रेरित मेघ गिरिनाथ को दण्ड न दिया, बल्कि अपने भाई के द्वारा प्रदत्त गाँव को निम्नलिखित वेदव्यास कृत श्लोक के अनुसार उसे आजीवन भोगने का अधिकार भी दिया —

"स्वदत्ता पर दत्ता वा यो हरेत वसुधराम्,
षष्ठिर्वर्ष महप्राणि विष्ठाया जायते क्रिमि"

मेघगिरिनाथ के पराक्रम से लोग भलीभाति परिचित हैं, इसलिए रगस्थल पर उसे देखते ही प्रेक्षको मे उत्साह उमड पडा।

नागराज ने भक्ति के साथ बौद्धो के त्रिशरणो का उच्च स्वर मे स्मरण किया, तदनतर बडी कुशलता के साथ उस घोडे की लगाम को पकड लिया। हठात् प्रसन्नता की अवस्था मे जनता कोलाहल कर बैठी। परन्तु वह प्रसन्नता शीघ्र ही विलुप्त हो गयी। अश्वारोहण करने वाले नागराज को घोडे ने दूर गिरा दिया। जनता का कोलाहल परिहास मे परिवर्तित हुआ। इसके उपरात अश्व ने उछलते हुये नागराज को पास पटकने नही दिया। बेचारा वह शर्म के मारे रगस्थल से चला गया।

इसके बाद जिन देव का स्मरण करते कलिग से आये हुये कदबवशी राजकुमार ने अश्व की लगाम पकड कर सवार होने का अनेक प्रकार से

प्रयत्न किया। वह राज-राजनरेन्द्र के साढू कलिग नरेश का रिश्तेदार था। इसलिए उसकी प्रवीणता पर स्वय राजा तथा महाराणी अम्मगदेवी को भी अतिशय आनद हुआ। किन्तु कदब राजकुमार ने अनेक बार अश्व पर सवार होने का प्रयत्न किया, परन्तु उसे सफलता न मिली उसकी देह व्यायाम की वजह से कर्कश बन गयी थी, अत उसने बडी देर तक घोडे के साथ खीचातानी की। आखिर थक कर अपने प्रयत्न को त्याग दिया।

इस प्रकार अनेक राजकुमारो ने अश्व पर आरूढ होने का प्रयत्न किया और थक भी गये, मगर घोडे के चेहरे पर थकावट के लक्षण बिलकुल दिखायी न दिये। बल्कि उसकी फुर्ती बढती जा रही थी। अत: कतिपय राजकुमारो ने निराश होकर अपना प्रयत्न ही त्याग दिया।

सत्याश्रय के सात पुत्रों मे से एक मल्लप्पा ने बडी सरलता के साथ अश्व पर आरोहण किया। इस पर नरेश के साथ राजबन्धु, दण्डनाथ तथा जनसमुदाय भी उसकी प्रस्तुति करने लगा। वह जयघोष उपस्थित जन-समूह को पार कर गोदावरी के पार धवलगिरि की उपत्यकाओ मे प्रति-ध्वनित होने लगा।

प्रशात गोदावरी के गर्भ मे प्रतिध्वनि का गुजार समाप्त होने के पूर्व ही सर्वत्र हाहाकार मच गया। मल्लप्पा स्थूल काय था। वह हठात् गेद की भाति आसमान मे उछलकर निष्प्राण सा पृथ्वी पर गिर पडा। तत्काल राजभट तथा वैद्य घटना-स्थल पर पहुँचे। वैद्यो के यह घोषणा करने के पश्चात कि कोई खतरा नही, बेहोश हो गये है। कोलाहल शात हुआ। मल्लप्पा की सेवा–शुश्रूषा करने के बहाने उसके छठो भाइयो ने अश्वारोहण का प्रयत्न त्याग दिया। उनके साथ शक्तिवर्मा भी मल्लप्पा का परामर्श करने वहाँ उपस्थित हुआ।

केवल युवराज राजेन्द्रदेव शेष रह गया था। वह अपना प्रयत्न छोडने को तैयार न था। उस अश्व के साथ आया हुआ सिंधुवासी अह-

कार पूर्ण मदहास के साथ चतुर्दिक इस प्रकार अवलोकन कर रहा था, मानो उसकी दृष्टि यह बता रही हो कि वेगी राज्य मे इस अश्व पर अरूढ हो सकने वाला क्या एक भी वीर नही है। युवराज सिधवासी पर कठोर दृष्टि डालते अश्व की ओर निश्चलता के साथ कदम वढाने लगा।

युवराज का राजसी ठाठ देख महाराणी अम्मगदेवी की देह पुलकित हुई। युवराज की पितामही कुदवादेवी यह सोच कर व्याकुल होने लगी कि न मालूम युवराज पर क्या बीतेगा। उसी समय विजयादित्य की रानी मेडमहादेवी यह सोच कर सर झुकाये इधर-उधर ताकने लगी कि उस का पुत्र अश्वारोहण किये विना ही हट गया है! शक्तिवर्मा की पत्नी जो वीर राजेन्द्र नामक चोळ राजा के पुत्र की पुत्री है, ने यौवन सहज लज्जा प्रदर्शित की। युवराज की पत्नी मधुरातकी जो परकेसरी राजेन्द्र नामक चोळ सम्राट की भतीजी है, अपने पति के वीरत्व को देख मन ही मन मुग्ध हो रही थी। इसे देख अम्मगदेवी का आनद उमड पडा। यह अत पुर की बात थी। राज सभा मे बैठे विजयादित्य ने अपने भाई राजराजनरेन्द्र पर ऐसी दृष्टि डाली, मानो यह बता रही हो कि क्या राजेन्द्र के लिए अश्वारोहण करना सभव है! राज-राजनरेन्द्रने शिवजी के चरणो का ध्यान करते हुये नन्नय भट्टारक की ओर देखा। नन्नय भट्टारक के अधरो पर अभय वाणी के नृत्य करते देख सम्राट ने युवराज पर आशीर्वाद की दृष्टि डाली। प्रेक्षक समुदाय चिल्लाने लगा— 'वाह, यह कैसा साहस है!' ऐसे अनादर पूर्ण वचन सुन कर राजमय्या सहन न कर सका और जन समुदाय को मौन रहने की अभ्यर्थना करने लगा। ज्यो-ज्यो युवराज अश्व के निकट जाता गया। त्यो-त्यो कोलाहल भी बढता गया।

इस बीच मे पुण्याहवाचन किये हुए ब्राह्मण समूह से एक विप्र आगे बढा और हकलाते हुये बोला—'यु यु युवराज! ठ् ठ् ठ् ठहरो!' उस की देह से पसीना छूट रहा था। राजेन्द्रदेव चकित हो पल-भर ठहर गया।

वज्जिय प्रेग्गडा ने ब्राह्मण से पूछा— "विप्रवर, क्रीडा-भग क्यो कर रहे है?"

"व...वह घो . घोडा मे मे . मेरा है !"

ब्राह्मण की बोली सुनने पर हठात राजबधु तथा अत पुर के प्रागण मे भी हँसी के फव्वारे फूट पडे ।

"मैं . मैं सच बताता हूँ । य यह चो चोर है !" ब्राह्मण ने ये शब्द कहते सिध वासी को ललकारा । वह निस्तब्ध हो कापने लगा ।

वज्जिय प्रेग्गडा कभी उस ब्राह्मण की ओर, कभी उस सिधवासी तथा अश्व की ओर कुतूहल दृष्टि डालता रहा ।

"अब तक आप कहाँ रहे, भूसुर ?" प्रेग्गडा ने पूछा, इस पर सब हँस पड़े ।

"सो सो रहा था ।" बिना सिसके ब्राह्मण ने उत्तर दिया । जनता यह सोच कर हँसते-हँसते लोट-पोट होने लगी कि यह ब्राह्मण कैसे निर्भयता पूर्वक असत्य बोल रहा है ।

युवराज पुनः अश्व की ओर कदम बढाने लगे । वज्जिय प्रेग्गडाने शात व गभीर स्वर मे युवराज से कहा– "युवराज, हमे ब्राह्मण की सपत्ति की कामना नही करनी चाहिये । कहता है कि यह अश्व इस ब्राह्मण का है । उसे अपना अश्व ले जाने दो ।"

युवराज यह समझ न पाया कि मत्री सत्य वचन कह रहा है अथवा परिहास कर रहा है ! अत वह निश्चेष्ट हो खडा रह गया ।

इस बार वज्जिय की कठ-ध्वनि मे गभीरता थी–"युवराज, यह ब्राह्मण कहता है कि यह अश्व उसी का है ! उस घोडे के मालिक का निर्णय होने के पूर्व केवल मुख-पट्ट के आधार पर कोई उस पर अधिकार

नही कर मकता । इसलिए हमारा विचार है कि तुम को उस पर सवार होने का प्रयत्न नही करना चाहिये ।"

राज-राजनरेन्द्रने मत्री वज्जिय पर आदरपूर्ण दृष्टि डाली । कुदवा देवी ने दीर्घ निश्वास लिया । प्रेक्षक समुदाय मे कोलाहल बढता गया । विवश हो युवराज राजेन्द्रदेव रगस्थल से हट गया ।

"इस अश्व पर मुख-पट्ट किसने बाधा है ?" वज्जिय ने पूछा ।

"पट् पट् पट्ट क्या है मत्री महोदय ?" ब्राह्मण ने पूछा ।

वज्जिय प्रेग्गडा ने अश्व के मुख की ओर उगली से सकेत किया ब्राह्मण उम ओर देख क्रोधावेश मे अश्व के निकट पहुँचा । उस के रौद्र-रूप को देख अश्व थर-थर कापने लगा । पल-भर मे उस मुख-पट्ट को ब्राह्मण ने हुँकार करते हुये खीच कर फेक दिया । तदनतर चिल्ला पडा—" मेरे अश्व को दूसरो मे दान करनेवाले उम चोर को बन्दी बनाना चाहिये ।"

"विप्रवर, यह प्रमाणित करने केलिए आप घोडे पर सवारी करके दिखाइये कि यह घोडा आप ही का है । तब मैं महाराजा से निवेदन करके उम मिधवासी को उचित दण्ड दिलाऊँगा ।" मत्री ने कहा ।

मत्री के वचन सुन कर सिधवामी परिहास पूर्वक मुस्कुरा उठा । मत्री के चमत्कार पर उपस्थित लोग भी मदहास कर उठे ।

ब्राह्मणने निस्मकोच अपने शाल को कमर मे कस कर बाँध लिया, तब टेढी चाल चल कर अश्व के समीप पहुँचा । अश्व के मुख-पट्ट को निकालने के बाद वह एक दम थका हुआ प्रतीत हो रहा था । विप्र के निकट पहुँचते ही मानो अश्व के नयनो से आँसू छलक उठे ।

" डरो मत, बेटी !" ये शब्द कहते ब्राह्मण घोडे के मुँह पर स्नेह-पूर्वक हाथ फेरने लगा । तत्काल वह घोडा अविचल इस प्रकार खडा

रहा, मानो अपने मालिक को बडी लबी अवधि के उपरात देख कर चकित हुए हो! ब्राह्मण ने घोडे का आलिगन किया। तब नव सिक्खुवे की भाति उछल कर उस पर सवार हुआ। जनता ने सोचा कि वडी गेंद की भाति वह घोडे द्वारा आसमान मे उछाल दिया जायगा। लेकिन उन्हे बडी निराशा हुई। अश्व ठाठ से चलने लगा, परन्तु अश्वारोही इधर-उधर झुकते उसे हाकने के बहाने तालिया बजाने लगा। इस प्रकार कह वह राज राजनरेन्द्र के आसन के सामने घोडा लाया। घोडे ने सर झुकाया। इस के उपरान ब्राह्मण ने मत्री के निकट जाकर कहा—"मत्री महोदय, अब आप को अपनी प्रतिज्ञा का पालन करना होगा।"

"हमारी प्रतिज्ञा कैसी ?"

"उस घोडे के चोर को दण्ड देना है।"

वज्जिय ने राजराज की ओर देखते हुये पूछा— "विप्रवर, आपका शुभ नाम ?"

"मेर . मेरा ना आ आ म ? मेरे नाम से क्या मतलब ?"

जनता मे "मे मेरा ना आ आ आ" पुकार गूँज उठी।

मत्री ने राजभय्या की ओर देख सकेत किया। राजभय्या सिधुवासी को बन्दी बना कर ले गया। वह चिल्ला रहा था कि मै निर्दोषी हूँ, पर उस की बात सुनने वाला कोई न था।

क्रीडा-प्रदर्शन के विराम की सूचना देते घटी बजी। जनता छट गयी। लोगो मे यह अफवाह फैल गयी कि सिधवासी ने कोई मत्र फूँका तो मत्र कोविद उन ब्राह्मण ने उसे खोल दिया।

पच तूर्यरव के साथ राजराज, राज बधु, सामत, दण्डनाथ इत्यादि अपने-अपने विश्राम गृहो मे चले गये।

3

उस दिन सध्या को क्रीडा द्वीप मे शस्त्रो का प्रदर्शन न हुआ। अनेक देशो से आये हुये मल्लयोद्धाओ ने अपनी मल्ल-विद्या का प्रदर्शन किया। इस विनोद ने साधारण भटो तथा जनता को अधिक आकृष्ट किया। वे सब अपनी दृष्टि मे योग्य मल्लो पर दॉव लगाते और उसमे बडी रकम हारते व जीतते थे। मल्ल-विद्या मे प्रवीण राजमय्या ने विशेष कर यह विनोद देखने केलिए ही उस दिन छुट्टी ली थी।

एक ओर मल्ल-विद्या के प्रदर्शन हो रहे थे। दूसरी तरफ राजराज-नरेन्द्र अपने सुरम्य महल मे विद्या-गोष्ठी मे उपस्थित थे।

उस गोष्ठी मे दिव्य ज्योतियो की भाति प्रकाशमान पडितो की मण्डली के बीच अग्निहोत्र की तरह नन्नय भट्टारक की मूर्ति तेजोवान थी।

नन्नयभट्टारक सत्तावन साल की आयु के थे। पर वे तीस साल की अवस्था के लगते थे। स्वर्णिम रग की देह सुगठित एव अवस्था थी। साथ ही वे स्वाध्ययन वेत्ता, श्रौत स्मार्तवेदी, अविच्छिन्न अग्निहोत्री, सदा जप एव होम मे तत्पर रहनेवाले थे। शब्द शास्त्र उन के लिए करतलामलक था। समस्त पुराण एव इतिहासों के ज्ञाता थे। धर्मशास्त्र के पारगत, तथा सस्कृत और तेलुगु कविता के निधि थे।

पडितो ने वैदिक मत्रो मे महाराजा को आशीर्वाद दिये। इसके उपरात कुछ लोगो ने सस्कृत के श्लोको के साथ, कतिपय लोगो ने प्राकृत तथा तेलुगु के छन्दो मे भी आशीर्वाद एव स्त्रोत्र पठन किये।

तदुपरात भारत की उत्तम सभाओ की चर्चा चल पडी। मालव देश के अधिपति राजा भोज की सभा की अत्यधिक प्रशसा हुई। साथ ही किसी कवि ने भोज राज की रचना चपू-रामायण का उल्लेख किया। इस पर चपू काव्य की विशिष्टता पर तर्क-वितर्क होने लगा।

अनेक कवियो ने अपने विचार व्यक्त किये कि चपू काव्य गद्य-पद्य मिश्रित होता है, अत वह अत्यत अनोज्ञ होता है। ऐसे काव्य प्राकृत भाषा मे हैं, किंतु सस्कृत मे नही है। अत इस अभाव की पूर्ति राजा भोज के चपू रामायण द्वारा होगी।

उपर्युक्त कवियो के विचारो का खण्डन करते हुये चीदमार्य उठ खडा हुआ। वह एक उच्च कोटि का मीमासक था। उस ने कहा—काव्य केवल पद्यात्मक हो, अथवा गद्यात्मक, किंतु उभयात्मक चपू हो तो पद्य तथा गद्य दोनो का सौष्ठव जाता रहेगा। यही कारण है कि कालिदास प्रभृति महाकवियो ने चपू काव्यों का प्रणयन नही किया है। कुछ कवियो ने चीदमार्य की प्रत्यालोचना करने का यत्न किया, किंतु सूक्ष्म बुद्धिकौशलवाले चीदमार्य के तर्क का कोई भी समुचित खडन न कर पाया। मित भाषी नन्नय भट्टारक मौन रहे।

सब के विचारों के प्रकट करने के पश्चात भीमन भट्टने मधुर कठ से निम्न लिखित श्लोक का पठन किया—

"गद्यानुबध रस मिश्रित पद्य सूक्ति
हृद्या हि वाद्य कलया कलितेव गीति
तस्मा द्दधातु कविमार्गजुषा सुखाय
चपू प्रबध रचना रसना मदीया।"

यह श्लोक सुना कर कहा कि भोज का यही अभिमत है। समस्त कवि आनंदित हुये। चीदमार्य मदहास करते बोला– " जो कवि तर्कवाद नही करते, मै उनके हृदय-वाद का खण्डन नही करूँगा।" इन शब्दो के साथ वृद्ध भीमन भट्ट का आदरपूर्ण शब्दो से सत्कार कर अपनी सहृदयता प्रकट की।

इसके उपरात सदर्भवश लाटदेश कवि मोड्डल कृत उदयसुदरी की कथा तथा उस देश के शासक वत्सराजा का प्रसग किसी ने छेडा। परतु राज वैरी कुतल चालुक्य के मित्र लाट प्रभुओ के सबध मे कोई चर्चा करने वाला न रहा, अत: वह प्रसग कट गया।

तदनतर घूर्जर ब्राह्मणने चेदि देश के कविवर कृष्ण मिश्र द्वारा रचे जानेवाले प्रबोध चन्द्रोदय नामक नाटक का प्रसग छेडा। महम्मद गजनवी के आक्रमण से गुजरात मे जो हलचल मची, जिसके कारण वह ब्राह्मण कुछ अन्य परिवारो के साथ भाग कर विजयवाडा चला आया। वहाँ पर यात्रार्थी हो आये हुये राज राजनरेन्द्र के ससुर सम्राट गगैकोड राजेन्द्र चोळ का आश्रय किया।

चोळ सम्राट ने उन लोगो को चोळ मडल मे आने का निमत्रण दिया, परतु उन लोगो ने सम्राट से निवेदन किया कि वे लोग दूर देश से आये हुये, अत थक गये है। अलावा इसके कृष्णा नदी का तटीय प्रदेश उन्हे अत्यत सुखदायक प्रतीत होता है। इस कारण से उन्हे उसी प्रदेश मे जमीन दिलावे। तत्काल ही चोळ सम्राट ने अपने जामाता की अनुमति से उन ब्राह्मणो को जमीन दिलायी। यह ब्राह्मण उन ब्राह्मण आग्रहारो का प्रधान था और वह प्राय राज राजनरेन्द्र के दरबार मे आया-जाया करता था।

उस ब्राह्मण श्रेष्ठ ने बताया कि उसने प्रबोध चन्द्रोदय का श्रवण किया है। उस मे जीव का मिथ्याज्ञान त्यागकर ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की कथा मनोज्ञरूप मे वर्णित है। उसका नायक प्रबोधचन्द्र है, तथा खल-

नायक महामोह है। विष्णु के प्रति भक्ति, शान्ति विराज, काम, दभ अहकार इत्यादि इस के पात्र है।

"ऐसा ग्रन्थ वेदात सबन्धी कहा जायगा, किंतु काव्य कैसे हो सकता है ?" पावुलूरि मल्लना कविने अपना सदेह प्रकट किया।

चेट्टनभट्ट तथा मुट्टनभट्टने मल्लना के अभिप्राय का समर्थन करते हुये उक्त नाटक के प्रति पक्षपात दिखाया कि ऐसा नाटक पडितो द्वारा स्वागतार्ह है।

पूर्वोत्तर मीमासा मे प्रवीण चीदमार्य ने कहा—"समस्त काव्य क्या समस्त पाठको को आनद प्रदान कर सकते है ? योग्य विद्वानो को आनद प्रदान करने वाले काव्य ही उत्तम काव्य कहलाते है। भर्तृहरि कृत श्रृगार-शतक ही कतिपय लोगो के लिए आनद प्रदान करता है। हम जैसे लोगो का वैराग्य सबधी शतक अधिक पसद है। कुछ लोगो के लिए महाकवि कालिदास प्रणीत मेघदूत प्रिय है। किन्तु हमे रघुवश काव्य अधिक अच्छा लगता है। उपनिषद के भाव को नाटक के रूप मे चित्रित किया गया हो, तो उससे बढ कर उदात्त वस्तु क्या हो सकती है ! सभवत वह कवि कोई महान् व्यक्ति होगा।"

सभा भवन मे कोई भी व्यक्ति चीदमार्य के तर्क का उत्तर न दे पाया। सम्राट राज राजनरेन्द्र ने उस घूर्जर ब्राह्मण के सामने कृष्ण मिश्र द्वारा विरचित प्रबोध चन्द्रोदय नाटक सुनने की इच्छा प्रकट की। इस पर उस ब्राह्मण ने यथाशीघ्र उस पडित को राज-दर्शन कराने का आश्वासन दिया।

इसी सदर्भ मे काचीपुर के नटो द्वारा प्रदर्शित होने वाले राज-राजेश्वर नाटक की चर्चा हुई। पावुलूरि मल्लना ने अपनी दक्षिण देश की यात्रा के दौरान मे काचीपुर में उक्त नाटक का प्रदर्शन देखा था। अत

उसने उस नाटक की विशेषता तथा नटो की अभिनय कुशलता की प्रस्तुति की ।

वृद्ध भीमनभट्ट ने उस नाटक की कथा वस्तु का विवरण मागा ।

मल्लना ने सक्षेप मे बताया—'सम्राट राजराज चोळ द्वारा सिहल पर विजय पाने का वृत्तात रामायणार्थ परक मे नाटक की रचना हुई है ।' सम्राट राज राजनरेन्द्र अपने मातामह की प्रशसा सुन कर अत्यन्त आनदित

यह भाप कर पावुलूरि मल्लना ने कन्नड भाषा मे रचित महाकवि पप के महाभारत की प्रशसा की और बताया—उक्त काव्य की रचना विक्रमार्जुन विजय नाम से महाभारत की कथा परक से कवि ने प्रस्तुत की है । कन्नड भाषा के कवि रत्नत्रय मे पप महाकवि एक है । उनके पूर्वज इस वेगीमडल से ही कर्नाटक मे गये थे । मेरे पूर्वजो के साथ महाकवि पप का रिश्ता भी है । पप का महाभारत अत्यत जनप्रिय है, कर्नाटकवासी कहा करते है—"सदा सेव्या सदा सेव्या पप भारत सत्कथा ।" मल्लना के मुँह से पप महाभारत की प्रशसा सुन कर सभासद अत्यत प्रसन्न हुये और उक्त काव्य के उत्कर्ष का विवरण जानना चाहा ।

नन्नयभट्टारक ने इस प्रसग मे भाग नही लिया । इसी समय हकला ब्राह्मण का कठ सुनायी दिया । सबने मदहास के साथ उसकी ओर दृष्टि दौडायी ।

"उ उ उस कवि की जन्मभूमि कौन-सी है ।" हकला ब्राह्मण ने पूछा ।

"वेगी मडल ही है ।" मल्लना ने उत्तर दिया ।

"तब तो उसे अपनी जन्मभूमि त्याग कर क्यो जाना पडा ?" ब्राह्मण ने पूछा ।

"मै नही जानता !" मल्लना ने कहा ।

"उसने अपने काव्य मे अपने प्रभु और अर्जुन मे अभेद दर्शाया

"जी हाँ !"

"अपने प्रभु जो कर्नाटक के राजा है, वेगी मडल के राजा के रूप मे चित्रित किया है न ?" हकला ब्राह्मण ने रोष भरे कठ मे पूछा ।

"इसमे कौन बात ?" मल्लना सकुचाने लगा ।

"क्या आप जानते है कि पप के पूर्वजो को राजद्रोही मे ठहरा कर यहाँ के राजा कठोर दड देने वाले थे, तब वे भाग कर कर्नाटक मे भाग गये और अपने को वेगी मडल के अधिपति बताने वाले के आश्रय मे जाकर उनकी झूठी प्रशसा करते उन लोगो ने अपने दिन काटे थे ?"

सभा मे सभ्रम फैल गया । मल्लना निरुत्तर था । फिर भी बचने के ख्याल से बोला—"मैं उन बातो को नही जानता हूँ । ये बाते तो सौ वर्ष पूर्व की है !"

हकला ब्राह्मण चुप नही रहा । पुन पूछा—"पप भारत की रचना व्यास कृत महाभारत के अनुकरण पर हुई है !"

"अनेक स्थलो पर विरुद्ध कल्पनाएँ भी है । कर्नाटकवासी कहते हैं कि काव्य के दृष्टिकोण से पप ने व्यास महाभारत की अपेक्षा अपने काव्य को अधिक चमका दिया है ।

यह कथन सभासदो को उचित प्रतीत नही हुआ । हकले ब्राह्मण ने अपने कान बद करते हुये कहा—"हरि ! हरि !" । नन्नयभट्टारक ने उस ब्राह्मण की ओर आदर भाव से तथा मल्लना की ओर आश्चर्य-दृष्टि से देखा । वह कल्पना भी नही कर सका कि कृष्ण द्वैपायन कहलाने वाले वेद व्यास की कृति को कोई चमका भी सकता है ।

सम्राट राज राजनरेन्द्र गभीरतापूर्वक सोचने मे निमग्न हो गया। सभा भवन मे अव्यक्त रूप मे उद्वेग छा गया।

भीमनभट्ट ने सभा को शात करना चाहा। इसलिए प्रसग बदलने के विचार से बोला—"राजन, मै नन्नयभट्ट से निवेदन करना चाहूँगा कि वे अपने "राज राजप्रशस्त" नामक काव्य की प्रथम कविता सुनावे।"

राज राजनरेन्द्र ने भी उस कविता को सुनने की अभिलाषा व्यक्त की।

नन्नयभट्टारक का मुखमडल लज्जा से लाल हो विकसित हो उठा। उसने काव्य-पठन शुरू किया।

"राजकुलैक भूषणुडु राजमनोहरु डन्य राजतेजोजयशालि शौर्युडु विशुद्ध यशश्शरदिंदु चन्द्रिकाराजल शात शात्रव परागुडु राजमहेन्द्रुडुन्नतिन्।"

अर्थात्—राजवश के भूषण, राज्य के प्रिय पात्र, अन्य राजाओ से अधिक पराक्रमी, तथा तेजोवान्, अपनी अनुपम कीर्ति को ज्योत्स्ना के समान चतुर्दिक फैलाने वाले, जो अपराजित है, जिनकी बाहुओ पर साड्ग कृपाण शोभित रहता है और जो शात, गभीर तथा शत्रुओ के लिए भयकर है, ऐसे सम्राट राज राजनरेन्द्र है।

कविता–पाठ करते नन्नय भट्ट का कठ मद्र एव गभीर हो गया। ऐसा लग रहा था कि उस का हृदय भरा हुआ है तथा उफान पा कर चतुर्दिक वह कठ अपनी ध्वनि को व्याप्त करते भरता जा रहा है। उस सुदर एव मधुर छन्द को सुन कर सारा दरबार आनद मे लीन हो गया। हकले ब्राह्मण के नेत्र सजल हुये। राज राजनरेन्द्र ने दया एव आदर की दृष्टि से नन्नय को निहारा।

"तेलुगु कविता क्या इतनी मधुर भी होती है?" चीदमार्य ने नन्नय की प्रस्तुति की।

विप्रो के आशीर्वादो के साथ सभा विसर्जित हुई। नन्नय भट्टारक ने हकले ब्राह्मण से मिलने के विचार से उत्कठपूर्वक चारो ओर ढूँढा, किंतु कोई भी उस का विवरण न दे सका।

4

उत्सव के साथ-साथ गोदावरी के तट पर एक बहुत बडा हाट लगा था। यो तो यह हाट पाँच-छे दिन पहले ही प्रारभ हो गया था, मगर उसके बढते-बढते चार-पाँच दिन लग गये थे। दुर्ग के उत्तर द्वार से लेकर "कोटि लिगाल" घाट तक यह हाट फैला हुआ था और उस का वर्णन करना कठिन मालूम होता था।

हाट के प्रारभ होने के पहले ही सुदूर देशो मे भी यह घोषित हुआ था कि हाट मे शुल्क वसूल करने का अधिकार, ठेकेदारो को सौपा नही गया है, बल्कि राज कर्मचारी ही वसूल करेगे। अत: अधिक सख्या मे व्यापारियो ने उस हाट मे अपनी दूकाने खोली। वह सारा प्रदेश क्रयिक एव विक्रेताओ से भरा हुआ था और लगता था कि वह एक चलता फिरता शहर है।

हाट का प्रदेश पहले ही समतल बना कर उत्तर और दक्षिणी-दिशा मे एक विशाल राजपथ निर्मित किया गया था, उस के दोनो तरफ दूकाने पक्तिबद्ध सजायी गयी थी अधिकाश दूकाने नारियल तथा ताड-पत्रो से निर्मित की गयी थी तथापि आग लगने से रोकने के ख्याल से बीच-बीच मे कच्ची ईटो की इमारते भी बनायी गयी थी। स्वास्थ्य-रक्षा के विचार से गदे पानी के बहाने के लिए परनालाएँ निर्मित थी। पीने के पानी की भी समुचित व्यवस्था की गयी थी। राज-भट मुख्य केन्द्र मे शाति-रक्षा के हेतु खडे हुये थे।

दूकानो की अनेक श्रेणियाँ थी । प्रत्येक श्रेणी मे एक-एक प्रकार की वस्तुएँ बिकती थी । आयुध-श्रेणी मे धनुष, खड्ग, कुतल, तोमर, मूसल, गदा इत्यादि अनेक प्रकार की चीजें थी । इसी भाति गज-श्रेणी, उष्ट-श्रेणी, इत्यादि थी । इनके अतिरिक्त रत्न-श्रेणी, मूलिका श्रेणी, सौगधिक श्रेणी, वस्त्र-श्रेणी देखते ही बनती थी । वस्त्र श्रेणी मे रेशमी वस्त्रो का विभाग विशाल एव अत्यत नयनाभिराम था । विलास-सामग्री की श्रेणी मे दर्पण, हाथी दात की कघियाँ, विशेषरूप से गणनीय थी । तैलश्रेणी अग्नि काड से बचाने के लिए दूर पर निर्मित थी। फारस से मगाया गया एक विशेष किस्म का तेल जनता को अत्यधिक आकृष्ट कर रहा था । वह तेल दीपक जलाने के काम मे ही नही आता, बलिक उद्दीप्त करनेवाला एक विचित्र प्रकार का परिमल भी था । यह तेल बौद्ध सघारामो मे प्राचीन काल मे ही काम मे लाया जा रहा था ।

पक्षियो की श्रेणी मे तरह-तरह के बाज, श्येन, तोते, मैने ही नही, विविध प्रकार के मयूर भी थे । रोम निवासी प्राचीन काल से मयूरो को हीरो से अधिक मूल्यवान समझ कर खरीद ले जाते थे । इस के आगे शुनक श्रेणी थी जो जगली जातिवालो के अधीन मे था । यादव श्रेणी मे भेड-बकरियाँ, विपुल मात्रा मे थी । धान्य श्रेणी सब से विशाल थी । गायो का विक्रय वहा निपिद्ध था ।

यो तो अधिकाश व्यापार परिवर्तन अथवा वस्तु विनिमय के रूप मे होता था, फिर भी निष्कमु, सुवर्णमु, द्रम्ममु, पणमु, हागा इत्यादि नाम-वाले सिक्के विशेष रूप से प्रचलित थे । हागा से लेकर निष्कमु तक प्रत्येक सिक्का एक से एक चौगुने मूल्यवान था । 'सुवर्णमु' सिक्को पर वराह की मुद्रा थी, अतः वे सिक्के 'वराहा' नाम से व्यवहृत थे । उस का दूसरा नाम 'गद्याण' था ।

उस विशाल हाट मे एकत्रित मनुष्यो के नाना प्रकार के रूप, रग व वस्त्रो की कल्पना करते ही बनती है, परतु वर्णन के बाहर की बात थी ।

भारत के विविध प्रातवासी ही नहीं, अपितु फारसी, अरबवासी, यवन, रोम निवासी भी आये हुये थे । सिहल, पवनद्वीप, यवनद्वीप, सुवर्णद्वीप इत्यादि टापुओ के व्यापारी असख्य नौकाओ पर भाति-भाति के माल सहित आये हुये थे ।

हाट मे फारस का तेल विपुल मात्रा मे बिक चुका था । मूल्य घटाया गया था, इसलिए धनवानो ने ही नही बल्कि गरीबो ने भी काफी मात्रा मे खरीद लिया था । व्यापार तेज़ी से चल ही रहा था कि तीसरे पहरे मे शुल्काधिकारी ने बिक्री बद करवा दी । भीड तेल खरीदने के ख्याल से उमड रही थी, तेल के न मिलते देख हलचल मचाने लगी । फारस के व्यापारियो ने घोषणा की कि उन के प्रति अन्याय हुआ है । उन के पूछने पर भी बिक्री बद करने का कारण अधिकारी नही बता रहा था । अत लगता था कि अधिकारी व्यापारियो के साथ अत्याचार कर रहा है ।

इस बीच रार्पात बेतया नामक एक उच्च अधिकारी वहाँ आ पहुँचा अन्य व्यापारियो को बुलवाकर उनका माल ज़ब्त किया, और राजभटो को सौप दिया । इसके उपरात फारस के व्यापारी और उनके दल को बदी बनाया । ज़ब्त किये गये माल पर सरकारी मुहर लगवा दी । तब व्यापारियो की मुहर भी उस पर लगाने की अनुमति दी ।

धीरे-धीरे यह समाचार हाट के चतुर्दिक फैल गया । इस अत्याचार से असतुष्ट होकर समस्त विदेशी व्यापारी अपनी दूकानें बद कर घटनास्थल पर पहुँचे । दरियाफ्त किया किंतु किसी को कारण मालूम न हुआ । सभी व्यापारियो ने मिलकर अधिकारियो के इस अत्याचार का सम्राट के समक्ष निवेदन करने के लिए तैल श्रेणीपति खण्डकोटि तथा गजश्रेणीपति कन्नेर देव को नियुक्त किया ।

इसी समय एक राजभट ने प्रवेश करके खण्ड कोटि कन्नर देव तथा तीन और श्रेणीपतियो को लिखित पत्र दिये । उन व्यापारियोने तत्काल

ही अपने मुनीमो से पढवाया । उसमे लिखा था कि दूसरे दिन दुपहर को फारस के व्यापारियो के अपराध का फैसला होगा, उस वक्त न्यायालय मे आप लोग मध्यस्थ बनकर उपस्थित हो जायँ ।

यह यमाचार जान कर समस्त श्रेणीपति अवाक् रह गये । उन श्रेणीपतियो ने समस्त व्यापारियो को यह समाचार कर खरीद-फरोख्त चालू रखने का आदेश दिया कि फारस के व्यापारियो का कोई दोप होगा अत सुनवाई होने के पूर्व हमे जल्दबाजी नही करनी चाहिये । फिर भी उस दिन हाट की शोभा जाती ही रही ।

5

चैत्र शुक्ला एकादशी की रात थी। चन्द्रमा चतुर्दिक शीतल चाँदनी बिखेर रहा था। गोदावरी नदी से होकर बहने वाला वसत का शीतल मलयानिल क्रीढा द्वीप के निवासियो को स्वर्ग का सुख प्रदान कर रहा था।

खुली हवा मे एक ऊँचे प्रदेश मे रगमच बनाया गया था, प्रेक्षको के बैठने की जगह क्रमश पीछे की ओर ऊँची होती गयी थी जिसमे नाटक देखने मे बडी सुविधा थी। सम्राट, राजपरिवार के लोग, सरकारी कर्म-चारी, तथा अत पुर की नारियो के बैठने के लिए निर्णीत प्रदेश पर सुन्दर वितान तना गया था।

विशाल रगमच को देखते हुये चालुक्य नरेश राज राजनरेन्द्र की कीर्ति चन्द्रिका की भाति शुभ्रयवनिका लटक रही थी। राजा के आगमन से नाटक के प्रारभ होने की सूचना देते मधुर घटानाद हुआ। दूसरे ही क्षण शाति छा गयी।

रगमच के भीतर एक देदीप्यमान तथा निश्चल दीप जल रहा था जो पर्दे के सामने बैठे प्रेक्षको को स्पष्ट दीख रहा था। उस प्रकाश के साथ बादलो के गर्जन की भाति नटी-नटो का कठ स्वर गूँज उठा--

'ज्वालमालाकुल भाति, विश्वस्यायतन महत्' इत्यादि वेद-मत्रो के साथ नादी सपन्न हुई, तदनतर सूत्रधार ने प्रवेश करके रगमच तथा प्रेक्षको पर भी फूलो की वृष्टि की। सारी सभा आनद से पुलकित हो उठी।

सूत्रधार के साथ एक नटी का भी प्रवेश हुआ। उन दोनो ने राज-राजनरेन्द्र के सद्गुणो की प्रशसा की। नटी ने सकुचाते हुये सूत्रधार से पूछा—'इस विजयोत्सव मे पधारे हुये विभिन्न देशो के पडित, कवि, राजा तथा नागरिको को आनदित करने वाला नाटक कौन-सा है।'

सूत्रधार ने निस्सकोच उत्तर दिया—'ऐसा नाटक केवल राज राजेश्वर नाटक ही है। सम्राट राज राजनरेन्द्र अपने पितृवश, चन्द्रवश तथा मातृ-वश सूर्यवश के प्रति भी समान रूप से आदर-भाव रखते है। इनके जन्म-काल मे इनकी माता कुदव महादेवी, तथा पिता श्री विष्णुवर्द्धन विमला-दित्य देव ने अपने पुत्र का नामकरण उसके गुणो के आधार पर उसके मातामह के नाम पर किया। इस नाटक मे राजराज चोळ की सिहल-दिग्विजय तथा अन्य विजयो का वृत्तात वर्णित है। इस नाटक की प्रेरणा सम्राट राज राजनरेन्द्र के श्वशुर सम्राट गगैकोडा राजेन्द्र चोळ ने अपने दरबारी कवि को दी। अत इससे बढ कर अन्य कोई भी नाटक इस सभा का मनोरजन करने मे असमर्थ है।"

इस पर नटी ने अपना सदेह प्रकट किया—वैदिकधर्म के प्रति अधिक निष्ठा एव श्रद्धा रखने वाले चालुक्य नरेश के सभा भवन मे मानव मात्र की कथा को वस्तु बना कर रचा गया नाटक मनोरजन कर सकता है!"

"ओह, चोळ नरेश को मानव मात्र कहना कैसी भूल है? इस नाटक को देखने वालो को वही पुण्य प्राप्त होगा जो श्रीरामचन्द्र की लका-विजय नाटक के देखने से प्राप्त होता है। यह श्रीराम की विजय ही है। परसो श्रीराम नवमी के दिन ही इसका प्रदर्शन होना चाहिये था, परतु सम्राट राज राजनरेन्द्र नवरात्रि की दीक्षा मे थे, इस कारण से एकादशी के पुण्य-काल मे इसका प्रदर्शन कर रहे है। जो लोग सोये बिना ही यह नाटक देखेंगे, उन्हे जागरण का पुण्य भी लगे हाथ प्राप्त होगा।"

सूत्रधार की चेतावनी से सभा और सावधान हो गयी। तदुपरात सूत्रधार की कामना पर नटी ने मधुर कठ से वसत ऋतु का वर्णन करते

गान किया। वह वर्णन राज राजनरेन्द्र, वेगीराज्य, नाटक तथा वसत ऋतु का समन्वयात्मक था। गीत की समाप्ति पर सभा भवन हर्षनादो से ध्वनित हो उठा।

नाटक के छे अक थे। नाटक के प्रदर्शन मे नृत्य, सगीत, अभिनय इत्यादि का अद्‌भुत समावेश था। अभिनेताओ ने जब सिहल पर विजय करने का दृश्य प्रस्तुत किया, तब प्रेक्षको मे उपस्थित योद्धाओ की भुजाएं भडक उठी। उनके स्मृतिपटल पर अनेक युद्धो की घटनाएं ताजा हो उठी। इस प्रकार उत्साह मे आकर उन वीरो ने जो जयनाद किये, उनकी अधिकता होने के कारण विवश होकर थोडी देर के लिए नाटक के प्रदर्शन मे बाधा उपस्थित हुई। परतु इस कारण नाटक मे रसाभास न हुआ। लगता था प्रेक्षको की भूमि ही रगमच है और सभी लोग दिग्विजय हेतु प्रस्थान कर रहे है।

नाटक के मध्यातरो मे एक नर्तकी ने प्रवेश करके कभी वानर सेना की तैयारी का प्रदर्शन, कभी दिग्विजय-यात्रा, कभी सेतुबधन, लका-निरोध, तदुपरात लका-दहन इत्यादि रामायण की घटनाओ का प्रदर्शन किया। नर्तकी के नृत्य करते समय ऐसा प्रतीत होता था कि उसके घुँघरुओ मे से वानर सेना निकल कर उछल-कूद कर रही हो। ताडव नृत्य के समय ऐसा भ्रम होना था कि लकादहन से महाग्नि उद्‌भूत हो चतुर्दिक फैल रही हो।

इस प्रकार नृत्य तथा अभिनय ने परस्पर सयोग पाकर प्रेक्षको को मुग्ध बनाया। राज राजचोळ ने सिहल-यात्रा के लिए नौका-दल का जो प्रबध किया, वह नाटक मे प्रत्यक्ष-सा प्रातीत हो रहा था।

राज राजचोळ द्वारा पराजित चेर तथा पाड्यवशी राजा भास्कर रविवर्मा तथा अमर भुजग सिहल के शासक महिन्दु से मिल गये। राज-राजचोळ की सेनाओ ने उस समय के युवराजा तथा नाटक प्रदर्शन के कुछ समय पूर्व तक सम्राट के पद पर शोभित राजेन्द्र चोळ के नेतृत्व मे चेर

ताड्य राज्यो को जीत लिया। उस युद्ध मे अमर भुजग बन्दी हुआ। य विजय राक्षस विनाश तथा बालि के वध की स्मृति दिला रही थी।

राज राजचोळ की सेनाओ ने ईल मडल (सिंहल) पर आक्रमण करके महिन्दु की राजधानी अनुराधापुर को ध्वस्त किया। इसपर महिन्दु भयभीत हो रोहण पहाडो मे भाग गया। उस वक्त राजराज चोळ के सेनापतियो ने वहाँ पर चोळ राज्य की स्थापना की। पोलोन्नोरुव को उसकी राजधानी बनाकर महिन्दु के भाई जननाथ को गद्दी पर बिठाया गया। इस विजय के चिह्न के रूप मे दो राजराजेश्वर मदिरो की स्थापना की गयी।

जननाथ राजराजचोळ का शरणागत होना विभीषण के राम के शरणागत होने की घटना की याद दिला रही थी। जननाथ का पट्टाभिषेक विभीषण का पट्टाभिषेक-सा प्रतीत हो रहा था। राज राजेश्वर मदिर का प्रतिष्ठापन रामेश्वर मदिर के प्रतिष्ठापन-सा लगा। महिन्दु के द्वारा महेन्द्र दत्त किरीट-लक्ष्मी का अनयन सीतानयन बना। इस प्रकार दिग्विजय यात्रा समाप्त कर चोळ सेनाएँ तजाऊर को लौट आयी। इस विजय यात्रा मे जो अपार सपत्ति हाथ लगी थी, उससे तजाऊर मे राजराजेश्वरालय नामक 'बृहदीश्वर मदिर' का निर्माण तथा विजयोत्सव श्रीरामचन्द्र के पट्टाभिषेक का स्मरण दिला रहे थे।

इस प्रकार यह नाटक राजराजेश्वर नाटक अथवा श्रीराम नाटक भी कहलाया जा सकता है। सूत्रधार ने नाटक के प्रारभ मे जो प्रतिज्ञा की उसकी पूर्ति भी हुई।

भरतवाक्य के पूर्व नाटककार का स्वर्गवास होने पर भी उसका पुत्र जयगोंडार जो वेगी युवराज का मित्र तथा उसी की अवस्था का था, उस वक्त वही पर उपस्थित था, उसे अपने पिता के प्रतिनिधि के रूप मे वहाँ बिठाया गया था।

नाटक का प्रदर्शन भरतवाक्य के साथ समाप्त हुआ। उसमे राज-राजनरेन्द्र को इतात्रिक सपत्ति, विजय, तथा वेगी मण्डल मे धन-धान्य की समृद्धि तथा राजा के पोषण मे साहित्य एव कलाओ की वृद्धि की कामना करते आशीर्वाद दिये गये।

नन्नय भट्टारक के कानो मे भरतवाक्य के अशीर्वाद अमृत धारा के काम कर गये। उस के मस्तिष्क को यह विचार कुरेदने लगा कि इद्र विजय 'राघवाभ्युदयम्' तथा 'चामुण्डिका विलास' के पश्चात कौन सी बृहत्कृति की रचना करे!

जनता जयनाद करते चली गयी। जाते-जाते जनता राज राजनरेन्द्र के मातामह, श्वशुर, समाधियो के प्रताप, वीरता, तथा योग्यताओ की प्रशसा करती चली गयी।

नाटक के अत मे दूर पर गोदावरी मे अपश्रुति की भाति एक आर्तनाद सुनाई पडा। हकला ब्राह्मण सभ्रम के साथ प्रेक्षको के बीच से उठ कर चला गया।

राजभटोने आर्तनाद की दिशा मे जाकर देखा, किंतु घर लौटनेवाले प्रेक्षको की नावो के डाडो की आवाज़ मे वह नाद दब गया था। अत. वापस लौट आये।

6

प्राचीन काल मे मालव देश मे नर्मदा नदी के तट पर माधातपुर नामक एक नगर था। उसके शासक का नाम राजमहेन्द्र था। उसकी बडी रानी का नाम रत्नागी था और छोटी रानी का नाम चित्रागी। पट्टमहिषी के पुत्र सारगधर को देख चित्रागी उस पर मोहित हो गयी और अपनी काम वासना प्रकट की। सारगधर ने उसे समझाने की कोशिश की कि यह अनुचित कार्य हे। इस पर क्रुद्ध हो चित्रागी ने वृद्ध राजा से शिकायत की कि सौतेले पुत्र सारगधर ने उस के साथ बलात्कार करने का प्रयत्न किया है। इस असत्य कथन पर राजा ने विश्वास किया। राजा ने सारगधर के हाथ–पैर काटने का वधिको को आदेश दिया। वधिको ने राजा की आज्ञा का पालन किया।

नवनाथो मे से एक बौद्ध सिद्ध था। उस ने एक दिन मार्ग चलते प्राणावशिष्ट सारगधर को देखा। उस पर उसे दया आयी। यह जान कर कि सारगधर निर्दोष है, सिद्ध ने मत्रौषध के द्वारा उस की उचित चिकित्सा करके उस के प्राण वचाये। इस पर सारगधर विरक्त हो त्रिकरण सहित उपसपद स्वीकार कर बौद्ध सघ मे मिल गया। वह बौद्ध धर्म का प्रचार करते कलिंग से होते हुये वेगी मण्डल मे आया। गोदवरी के तटपर राजमहेन्द्रपुर की उत्तरी दिशा मे श्मशान वाटिका के निकट एक टीले पर छोटा-सा विहार बनाया। वहाँ पर उसने वज्रयान के महाचीन नामक तत्र मार्ग पर बहुत समय तक उपासना की। चतुर्दिक के निर्धनो

मे भृत चिकित्सा, विष चिकित्सा पशु-चिकित्सा, शस्त्र-चिकित्सा इत्यादि सेवा भाव से करते हुए वही पर सिद्धि प्राप्त की। लोगो की दृष्टि मे वह एक महा सिद्ध था। बौद्ध धर्म के अनुयायियो ने सिद्ध मारग की देह एव धातुओ को सुरक्षित कर एक चैत्य का निर्माण कराया। क्रमश. सिद्ध सारग की कीर्ति चारो तरफ व्याप्त हो गयी। यह धारणा फैल गयी कि सिद्ध मारग का नाम लेते हो मात्र, पशुओ के रोग इत्यादि अपने आप अच्छे हो जाते है। कालातर मे चैत्य के चतुर्दिक एक सघाराम निर्मित हुआ। अल्प काल मे ही वहाँ पर अवलोकितेश्वर, तारा, मजुश्री इत्यादि देवताओ के लिए सुदर गधकुटो का निर्माण हुआ। उन दिनो मे आन्ध्र मे बौद्ध धर्म पतनावस्था मे था, अत बौद्ध धर्म के अनुयायी सघारामो मे अपनी समस्त शक्तियो को केन्द्रीभूत कर रहे थे। इस प्रकार यह सघाराम अनेक भिक्कुओ तथा भिक्कुनियो का निवास बना।

इस सघाराम के एक तरफ विद्यालय है, उस मे ऊँची शिक्षा नहीं होती। परन्तु उस से अनुबद्ध एक विशाल पुस्तकालय है। उस मे असख्य अनुपलब्ध ग्रन्थो का सकलन है।

सघराम से सबद्ध वैद्यशाला वेंगी मण्डल भर मे सर्वोत्तम था। वहाँ के वैद्य बडे ही समर्थ थे, देश-विदेशो मे भी यह ख्याति फैल गयी थी कि यहाँ के वैद्य शस्त्र-चिकित्सा मे अद्वितीय हैं। हाथ-पैरो के कट जाने पर पुनः जोडनेवाले सधानकरण औषधो का ज्ञान भी उन्हे था। कहा जाता है कि सिद्ध मारग से वैद्यो ने यह विद्या सीखी थी। दूर-दूर प्रदेशो से रोगी तथा विकलाग भी चिकित्सा के निमित्त वहाँ पर आते थे। चिकित्सा का मूल्य लेने की प्रथा वहाँ पर न थी। किंतु स्वस्थ हो जाने पर लोग यथाशक्ति सघाराम को भेट दे जाते थे। वहाँ के प्रधान वैद्य तथा परिचर्या करनेवाले भिक्कु तथा भिक्कुनियाँ थी, अत इस प्रकार प्राप्त होनेवाला धन ही सघाराम की आमदनी का स्रोत था। वेंगी नरेश भी युद्ध आदि विशेष अवसरो पर सघाराम की आर्थिक सहायता करते और वहाँ की वैद्यशाला में

अपने रिश्तेदारो तथा अनुचरो की चिकित्सा कराते थे। क्रीडाओ के प्रदर्शन मे घोडे से गिर कर घायल हुये राजकुमार मल्लप्पा की यही पर चिकित्सा चल रही थी।

सघाराम से सबद्ध एक धर्मशाला भी थी। वहाँ पर जाति, वर्ण इत्यादि भेद-भाव के बिना सबको समान रूप से भोजन एव निवास का प्रबध था। वहाँ पर भी लोगो से मूल्य वसूल नही किया जाता था। नाना देशो से आये हुए व्यापारी एव यात्री भी उसी धर्मशाला मे ठहरते तथा लौटते समय यथाशक्ति भेटे देते।

गोदावरी के द्वीप मे जब राज राजेश्वर नाटक का प्रदर्शन हो रहा था तब सारगधर के टीले पर अच्छी चहल-पहल थी। वह एकादशी का दिन था। अत भिक्कु तथा भिक्कुनियाँ उपवास करते अपने-अपने कक्षो मे अनुष्ठान मे लगे थे। रात के दस बजे के बाद वे सब उपासना मदिर मे समाविष्ट हो जाते थे। उस वक्त सघाराम के अधिपति जेतारी विशेष पूजा-क्रम सपन्न करके धर्म प्रवचन करते थे।

बडी रात गये एक अश्व व्यापारी चिकित्सालय मे आये और राजकुमार मल्लप्पा के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। रोगी की परिचर्या के निमित्त वहाँ पर सुजाता नियुक्त थी। वह एक उपासिका थी। प्रधान वैद्य ने यह आदेश दिया था कि राजकुमार बहुत ही कमजोर है, अत उनसे मिलने की अनुमति किसी को नही दी जा सकती। यह बात सुजाता ने व्यापारी से बतायी।

"क्षमा कीजियेगा! मै एक अत्यत जरूरी कार्य से आया हुआ हूँ।" व्यापारी ने कहा।

"आपका शुभ नाम?" सुजाता ने पूछा।

"मुझे चाक्रायण सिंधु कहते है।"

'वैद्यो की आज्ञा का उल्लघन करना पाप है।"

"वैद्य से ही अनुमति माग लीजिये।"

"अच्छी बात है।" इन शब्दो के साथ सुजाता भीतर चली गयी। आश्चर्य के साथ लौट कर उम आगतुक को राजकुमार के पास ले गयी।

चाक्रायण सिंधु ने मल्लप्पा का सादर अभिवादन किया। मल्लप्पा ने मदहास के साथ अभिवादन स्वीकार करते हुये उसे बैठने का सकेत किया।

"राजकुमार! आपका अश्वशिक्षण अदभुत हे। उस अश्व पर आरोहण करना ही असम्भव है। उसमे एक दोष है।" आगन्तुक ने कहा।

"तुम्हारे पास उत्तम जाति के कितने अश्व हैं?" मल्लप्पा ने पूछा

"यो तो मैं अपने साथ चार सौ अश्व लाया हू, किन्तु उनमे आपके देखने योग्य केवल पचास ही है। आपसे निवेदन करता हूँ कि स्वस्थ हो जाने पर अवश्य ही एक बार देख लें।"

"मैं अपने भाइयो के साथ आऊँगा।"

"राजकुमार! आप चाहेगे तो मैं तीन हजार उत्तम जाति के अश्वो को जहाँ आदेश देंगे उसी स्थान पर सौंप दूगा।"

इस पर मल्लप्पा मौन रहा।

"हमारा सिधु देश गजनी से आयी हुई म्लेच्छो की सेना के कारण अशात हो गया है। वह यो तो अनेक क्रूर कार्य करता है, फिर भी वह अश्व संबन्धी अच्छा ज्ञान रखता है।

"यह बात तुम कैसे जानते हो ?" मल्लप्पा ने व्यग्रता के साथ पूछा

"उसने मेरे पिता को मुह माँगा धन देकर पाँच हजार अश्व खरीदे थे, उस वक्त मैं बच्चा था।" चाक्रायन ने कहा ।

"तुमने अपने देश के दुश्मन को घोडे कैसे बेचे ? मेरे पिताजी ने उस म्लेच्छ की सेनाओ का सामना कर युद्व किया था।" मल्लप्पा ने कहा ।

"राजकुमार ! हम व्यापारी है। हमारे माल का मूल्य जो जानते हैं, उन्ही को हम बेचते हे।" चाक्रायन ने कहा।

"तुम किस काम से आये हो ? ऐसा जरूरी कार्य क्या है ?"

"आपके दर्शन के लिए आया हूँ। आपको जिस अश्व ने तग कया, उस पर एक हकला ब्राह्मण अपने माया-बल से सवार हो गया है।"

"ओं . क्या कहा ? सच है ?"

"जी हाँ, राजकुमार। वह कहता है कि घोडा उसी का है, अश्व-शिक्षण देने वाला व्यक्ति चोर हैं, यह इलजाम लगा कर उसे राजभटो के हाथों मे सौप दिया गया है।

"वह चोर कैसे हो सकता है ?" मल्लप्पा ने पूछा।

"वजिजय प्रेग्गडा ब्राह्मण पक्षपाती है, इस कारण हम जैसे लोगो के साथ महाराज के द्वारा न्याय नही हो रहा है। अश्व-शिक्षक को बन्दी बनाने से हमारे सभी अश्वो ने दाना-पानी ग्रहण करना त्याग दिया है।" चाक्रायन ने कहा।

"तुम्हारे देश मे सौगतो की सख्या अधिक मालूम होती है।"

"जी हाँ, राजकुमार! यहाँ पर भी तो कुछ साल पूर्व तक सौगत धर्म ही अधिक प्रचार मे था। प्रजा के प्रति वात्सल्य और प्रेम भाव न होता तो ऐसे असख्य चैत्य, विहार, सघाराम इत्यादि की वृद्धि हुई होती। प्राचीन काल मे राजाओ ने मुक्त हस्त होकर दान देते थे। श्री बेतारिनाथ ने मुझसे बताया है कि महाराजा श्री बेट विजयादित्य ने सबसे अधिक दान दिये है।"

चाक्रायन के मुँह से ये बाते सुनने पर मल्लप्पा को वेंगी देश पर अपने पितामह के २५ दिन का शासन काल स्मरण हो आया। इस पर उसने नयन निमीलित किये।

"मेरे स्वस्थ होते ही तुम्हारे अश्व शिक्षक को छुडाने का अवश्य प्रयत्न करूँगा।"

"आप को हमारे अश्वो को देखना ही होगा। उन मे से एक अत्युत्तम अश्व को मैं आप के घुडसाल मे कल ही पहुँचवा दूँगा।"

इन शब्दो के साथ चाक्रायन झुक-झुक कर प्रणाम करते मल्लप्पा से विदा लेकर चला गया।

इस के उपरात कलिंग के एक व्यापारी ने मल्लप्पा के दर्शन किये और थोडी देर तक बातचीत कर चला गया। तदनतर सिहल के दो व्यापारी और यवद्वीप, सुवर्ण द्वीप, इत्यादि अनेक देशो के व्यापारी भी आये और मल्लप्पा से बातचीत कर चले गये। सुजाता को इस बात पर आश्चर्य हो रहा था कि इन सब को प्रधान वैद्य कैसे अनुमति दे रहे हैं!

इतने में तारा देवी के लिए निर्मित गधकुटी से घटानाद सुनायी दिया। उसी समय मजुश्री, अवलोकितेश्वर मैत्रेय इत्यादि की शालाओ से

भिन्न-भिन्न घटानाद सुनायी दिये। तत्काल सब लोग पूजा के दर्शन तथा तीर्थ-प्रसाद ग्रहण करने के हेतु विहार की ओर चल पडे।

बोधिसत्व मजुश्री की पूजा सुवर्ण-पुष्पो तथा सुवर्ण उपहारो के साथ सपन्न हुई। मत्र- पुष्प के अवसर पर व्यापारियो ने जो स्वर्ण रखा, वह अपार था।

बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की पूजा स्फटिक पात्रो तथा स्फटिक अक्ष-माला के जापो द्वारा सपन्न हुई।

बोधिसत्व मैत्रेय की पूजा रजत पात्रो, रजत मत्र पुष्पादियो से सपन्न हुई।

तारादेवी की पूजा बेनारी ने स्वय महा शख के साथ सपन्न की।

विभिन्न देशो से आकर सघाराम मे ठहरे सभी व्यापारी पूजा के स्थान पर समाविष्ट हुये। पूजा के समय वे लोग अपने अपने देशो के वृत्तात, राजाओ के बल-दर्प, वेगी राजा की सामर्थ्य, चोळ सम्राटो का बडप्पन, चोळ तथा वेगी राज्यो मे ब्राह्मणो का आधिक्य, कलिग नरेश तथा कुतल चालुक्यो की मैत्री, विन्ध्योत्तर राज्यो मे म्लेच्छो की हल चल, इत्यादि की चर्चा उनके वार्तालापो मे अकसर होती थी। इस बात पर भी उन लोगो ने दुख प्रकट किया कि वेगी राज्य के भट्टिप्रोलु, धनकटक, घटसाल, कोलनिनीडु के सघाराम उन्नत दशा मे होते हुये भी शिथिलप्राय होते जा रहे हैं, न मालूम कब उनका उद्धार होगा।

एक आयुध व्यापारी ने विविध प्रकार के आयुध विशेष, कवच, शिरस्त्राण इत्यादि का वर्णन किया। उसने यह भी बताया कि सुवर्ण द्वीप मे सोने के ढेर लगे हुये है। वहाँ प्रवास करनेवालो के वास्ते सघ उचित तैयारी कर रहा है, जो लोग वहाँ आयेंगे उनके भाग्य खुल जायेंगे।

वार्तालाप के सदर्भ मे बार-बार राज राजनरेन्द्र की सेना, दण्डनाथ तथा सामन्तो की सामर्थ्य इत्यादि की चर्चा भी होने लगी। अकसर वे लोग सत्याश्रय के कुमार सप्तक के सुगुणो, राजसी ठाठ इत्यादि की भी प्रशसा करने लगे।

पूजा की समाप्ति पर सघाराम के अध्यक्ष जेतारीनाथ के चतुर्दिक बोधिवृक्ष के समीप भिक्षु तथा भिक्षुणिया भी समाविष्ट हुई।

जेतारीनाथ ने प्रारभ मे सघ के सदस्यो को सघ के धर्म बताये तथा सदस्यो से कहलवाया। पाली भाषा मे यह कार्यक्रम चला। इस के उपरात जेतारीनाथ ने सघाराम को विपुल मात्रा मे दान करनेवाले श्री बेट विजयादित्य के दान लेख पढकर सुनाये, तदनतर उनकी दान शीलता की प्रस्तुति की। उनके वश को शुभ प्राप्त होने के आशीर्वचन कहे। शेष श्रवण-श्रावको मे तथास्तु वचनो द्वारा उन का समर्थन किया। तदुपरात विशेष द्रव्यो के साथ बोधिवृक्ष की पूजा हुई और वे द्रव्य उपस्थित लोगो मे बाट दिये गये। उन द्रव्यो मे तीर्थ अत्यत उद्दीप्त एव नशीला था जिस से नये लोग नशे मे आ गये। पूजा के अतिम चरण मे पुन श्री बेट विजयादित्य की सतति को विजयाशीर्वाद दिये गये।

इन कार्यक्रमो की समाप्ति तक दूर पर विचित्र वेष बना कर छे बलिष्ठ व्यक्ति खडे हुये थे। उन्हे पूजा के द्रव्य एव तीर्थ अधिक मात्रा मे दिया गया। वे लोग प्रसाद ग्रहण कर जोर-शोर से विजयनाद करते चले गये।

7

सुजाता के संघाराम मे आये करीब पाँच वर्ष हो चले थे। जेतारीनाथ एक बार धर्म का प्रबोध करने के निमित्त कल्याण कटक गया था। तभी वह जेतारीनाथ की बडी भक्तिन बनी। प्रारम्भ मे वह देवताओ की पूजायें तथा जाप अधिक किया करती थी, परन्तु क्रमश पूजा के प्रति उसका उत्साह मन्द होता गया और वैद्यशाला के रोगियो के उपचार मे वह लीन हो गयी। रोगियो की सेवा ही उसकी दृष्टि मे ईश्वरीय आराधना थी। यह जनश्रुति भी फैल गयी कि सुजाता के करस्पर्श को रोगी मातृदेवी का प्रसाद मानते थे और उनकी व्याधियाँ दूर हो जाती थी। रोगियो की सेवा मे उसने विशेष प्रवीणता प्राप्त की। वह धनी व निर्धन का विचार किये बिना समान भाव से सबकी परिचर्या किया करती थी। अत सर्व जनादर का पात्र बनी।

पूजा-स्थल से सबकी भाति सुजाता भी अपने कक्ष में जा रही थी। उसे किसी की मन्द पुकार सुनाई दी—'सुजाता!' वह ठहर गयी।

"कौन ?

"तुमको महाप्रसाद ग्रहण करने के हेतु प्रभु जेतारीनाथ ने बुलवाया है।"

"प्रभु जेतारीनाथ!" सुजाता ने अलक्ष्य भाव से पुनरोच्चारण किया।

"जी हाँ ।" वार्ताहर ने उत्तर दिया ।

"आज मेरा मन विकल है । उनसे कह दो कि महाप्रसाद से किसी दूसरे को अनुगृहीत करे ।" यह कह कर सुजाता चली जा रही थी ।

वार्ताहर ने सुजाता के पीछे उसके विश्राम कक्ष तक अनुकरण किया । सुजाना को मालूम था, पर उसने मना नही किया । वह सुजाता के कक्ष मे पहुँचा ।

आगतुक अत्यन्त आदर भाव से सुजाता से वार्ता कर रहा था । सुजाता भी वात्सल्य भाव से प्रेरित हो प्रत्युत्तर दे रही थी ।

"माँ, तुम्हारे यहाँ आये कितना समय हुआ है ?

"पाँच वर्ष ।"

"तुम्हारा जन्म स्थान ?"

"उपासिकाओ के जन्म-स्थान का परिचय जानने का प्रयत्न नही करना चाहिये ।"

"माते, मै अपने अनुभव से जानता हूँ कि तुम्हारी परिचर्या मात्र से कोई भी रोगी स्वस्थ हो जाता है । मै जानना चाहता हूँ कि यह महात्म्य तुमको कहाँ के जल-सेवन से प्राप्त हुआ है ?"

"मैंने कहा था न कि पूछना नही चाहिये ।"

"प्रकट मे शात दिखाई देने वाली तुम्हारी मूर्ति के भीतर कोई तीव्र ताप और वेदना दिखाई देती है, क्यो ?"

"आज तुम ये कैसे प्रश्न पूछ रहे हो ? तुम शीघ्र जेतारीनाथ की आज्ञा का पालन करने जाओ ।"

"माते, तुम कहाँ पर प्रभु जेतारीनाथ की शिष्या बन गयी ?"

"जिस वक्त उन्होने कुतल देश की दिग्विजय यात्रा की थी ।"

"तुम कल्याणकटक की निवासिनी हो ?"

"मैने कई बार कहा कि यह सवाल नही पूछना चाहिये ।"

वह कुछ और पूछने जा रहा था। सुजाता के नयनो मे अश्रुजल छलक उठे और वक्षस्थल को तर करने लगे। अत आगन्तुक के प्रश्न उसके कठ मे अटक गये। वही कहने लगा--

"सुनते है कि कल्याणकटक से दो दुष्ट आये हुये है। उनमे से एक को वन्दी बनाकर लाने को सिपाही गये है ।"

"कल्याण कटक से। क्या तुम उन दोनो के नाम जानते हो ?"

"दोनो का नाम नही जानता, पर एक का नाम मैने सुना है–'पोन्ना' ।"

यह समाचार सुनने पर लगा कि सुजाता की छाती धक-धक कर रही हो।

आगतुक ने पूछा–"माते, क्या तुम कल्याणकटक की निवासिनी हो ? यह समाचार सुनकर हतप्रभ क्यो हो गयी ? क्या तुम उन दुष्टो को जानती हो ?"

"क्या उसके प्राणो के लिए कोई खतरा है ?"

"नही, पर नाव ... तैरना ... गोदावरी ... द्वीप...आदि शब्द मुझे सुनायी दिये। ये सब खतरे की घटी के सूचक हैं ।"

"बेटा, मै तुम को अपने पुत्र समान देखती हूँ। उस व्यक्ति को प्राणो के लिए कोई खतरा न हो, यह तुम्हे देखना होगा।"

"प्रभु की जैसी इच्छा हो! लेकिन मै कर ही क्या सकता हूँ? उस दुष्ट के प्रति तुम्हारी ऐसी अनुकपा क्यो?"

तुम बडे अच्छे हो न, बेटा! शीघ्र जाकर उन को लाने का समाचार मुझे दो।"

ये बाते सुन कर वह बालक हरकारा वहाँ से चला गया।

सुजाता का दुख फूट पडा। वह फूट-फूट कर रोने लगी। वह कितनी देर तक रोती रही, स्वय उसे ज्ञात न था। पर सघाराम के गुप्त द्वार के खुलने की ध्वनि सुन कर वह चौक उठी और बाहर आ गयी।

छे सिपाही जो यमभट षट्क नाम से प्रसिद्ध है, उस गुप्त द्वार से एक भारी व्यक्ति के शरीर को उठा लाये और माल के गोदाम मे प्रवेश कर रहे थे। अस्ताचल को जानेवाले सूर्य की काति मे उस मानवाकृति को देख सुजाता आपाद मस्तक काप उठी।

होश मे आकर सुजाता ने सर उठाकर देखा तो सामने हरकारा बालक खडा था।"

"क्यो बेटा, पान्ना जीवित है?"

"कह नही सकता माँ! मुझे केवल शवाकृति प्रतीत हुई।"

8

प्रारम्भिक दशा मे चन्द्रवशी तथा चालुक्यवशी नरेशो की राजधानी वातापि नगरी थी। शालिवाहन शक की छठी शताब्दी मे हर्षवर्द्धन को दक्षिण की ओर बढते पराजित करनेवाला वीर पुलकेशी द्वितीय नामक सत्याश्रय था। उसने समुद्र तटवर्ती वेगीमण्डल को जीत कर अपने छोटे भाई कुब्ज विष्णुवर्द्धन को उसका अधिपति बनाया। अपने भाई की मृत्यु के पश्चात कुब्ज विष्णुवर्धन स्वतन्त्र हो वेगी चालुक्य वश का जनक बना। उस समय से लेकर पश्चिम मे कुतल चालुक्य तथा पूर्व मे वेगी चालुक्य राजा रहे। इन दोनो वशो के बीच ज्ञाति शत्रुत्व सहज रूप मे ही था।

कुछ समय पश्चात पश्चिमी चालुक्य राज्य मे बौद्ध तथा जैन धर्मो की व्याप्ति हुई। क्रमश वहाँ के राजा दुर्बल होते गये। फलत अनेक वर्षो तक वे राष्ट्रकूटो के अधीन रहे। पुन कुछ समय बाद राष्ट्रकूटो के सामन्त तैलप नामक चालुक्य राजा ने राष्ट्रकूटो की अधीनता अस्वीकार कर दी और स्वतन्त्र हो, मान्यखेट को राजधानी बना कर्नाटक भूभाग पर शासन करने लगा। उसके वशजो ने अपनी राजधानी कल्याण कटक को बदल दी। उन लोगो ने अब अपनी दृष्टि पूर्वी दिशा मे वेगी मण्डल की ओर प्रसारित की। उन लोगो ने वेगी राज्य के राज परिवार के बीच कलह प्रारम्भ कर दिये। आखिर विमलादित्य नामक चालुक्य नरेश ने चोळ चक्रवर्ती राज राजचोळ की पुत्री कुदव महादेवी के साथ विवाह किया और शक्तिशाली श्वशुर की सहायता से वेगी मण्डल मे अपने राज्य को स्थिर बनाया। उसने अपने पुत्र का नामकरण अपने श्वशुर का नाम

"राज राज" किया और अपने माले राजेन्द्र चोळ की पुत्री अम्मगदेवी को अपनी पुत्र-वधू बनाया। विमलादित्य की इस दूरदृष्टि की वजह से कल्याणी चालुक्य वंशियों की धाक के समक्ष वेंगी राज्य सुदृढ खड़ा रह गया।

राज राजनरेन्द्र की पट्टमहिषी अम्मगदेवी थी। राज राजनरेन्द्र जिस समय वेंगी राज्य के सिंहासन पर बैठा, उस समय अम्मगदेवी का पिता राजेन्द्र चोळ, चोळ साम्राज्य का सम्राट भी बना। उसके पिता का प्रेम पुत्रो से अधिक उसी के प्रति था। वह बडी विदुषी ओर तीव्र बुद्धिवाली थी। सस्कृत मे उसे अच्छा पाडित्य प्राप्त था। दण्डनीति उसका प्रिय विषय था। शुक्रनीति, कामदक, कौटिल्य का अर्थशास्त्र इत्यादि का उसने पूर्णरूप से अध्ययन किया था। वेदव्यास प्रणीत महाभारत उसे अत्यन्त प्रिय है। उसने अपने पुत्र का नामकरण अपने पिता के नाम पर किया और उस राजकुमार को पिता के लिए प्रिय बनाया। रानी के भाइयो मे से राजेन्द्र देव एक था। उसकी पुत्री मधुरातकी का अपने पुत्र तथा वेंगी का युवराजा राजेन्द्र देव के साथ विवाह कराया।

अम्मगदेवी के प्रति राज राजनरेन्द्र का आदर-युक्त प्रेम था। अम्मगदेवी ने अल्प समय मे ही वेंगी राज्य मे जनता का आदर प्राप्त किया। फिर भी उस की दृष्टि मे वेंगी राज्य गरीब ही प्रतीत होता था, क्योंकि वह चोळ सम्राटो के महावैभव का अनुभव कर चुकी थी। अत उसकी दृष्टि अकसर चोळ साम्राज्य की ओर ही केन्द्रित हो जाती थी। उसका पुत्र वेंगी राज्य का युवराज था तथापि उसे अपने मातामह के पास तंजाऊर तथा काचीपुर मे ही रहने दिया। चोळ राजकुमारो के साथ ही उस की शिक्षा-दीक्षा सपन्न हुई। इन कारणो से वेंगी जनता का आदर भाव युवराजा के प्रति घटता जा रहा था।

राजमाता कुदवमहादेवी यद्यपि चोळ सम्राट की पुत्री थी, तथापि अनेक वर्षों तक गोदावरी तटीय निवास के कारण वह तेलुगु भाषियो मे

मिल गयी। फिर भी उसे अपने मायके, चोळ जनता के आचार-व्यवहारो के प्रति पक्षपात था। तेलुगु प्रजा के आचार-व्यवहार उसे कुछ कटु मालूम होते थे।

अत पुर मे गृह कलह का न होना राज्य के लिए कैसा आवश्यक है, यह बात अम्मगदेवी भली-भाति जानती थी। इस से राज्य को बल भी प्राप्त होता है। राज-राजनरेन्द्र के अत पुर की सौजन्यता का प्रधान कारण राज माता अम्मगदेवी की सामर्थ्य ही था।

नाटक प्रदर्शन के दूसरे दिन प्रात काल अम्मगदेवी अपने कक्ष मे स्वय श्री चक्रराजार्चन कर रही थी। उस समय वहाँ पर वेद-वेदागविद आन्ध्र, द्रविड तथा कर्नाटक ब्राह्मण समाविष्ट हुए। उन मे हकला ब्राह्मण भी एक था। नन्नय भट्टारक अनुपस्थित था। पूजा के अनतर अम्मगदेवी ने सब ब्राह्मणो की वन्दना कर उनके आशीर्वाद प्राप्त किये।

हकले ब्राह्मण ने भी देववाणी मे अम्मगदेवी को आशीर्वाद दिये। रानी के वदन पर मदहास देख सब हँस पडे। कतिपय पडितो ने तमिल वाणी मे अम्मगदेवी को आशीर्वाद दिये तो हकले ब्राह्मण ने भी द्राविड प्रबन्ध की वाणी का आशीर्वाद दिया। आन्ध्र पडितो ने तेलुगु पद्यो मे आशीर्वाद दिया, इस पर हकले ब्राह्मण ने तेलुगु छन्द 'तरुवोज' मे आशीर्वादो की वृष्टि की। उपस्थित विद्वत मण्डली मे विनोद के साथ विस्मय भी छा गया। कर्नाटक पडितोने कन्नड की कविता सुनायी, हकले ब्राह्मण ने भी तत्काल कन्नड कविता का पाठ किया। सबके आशीर्वचन समाप्त होने पर हकले ब्राह्मण ने पैशाचिक प्राकृत भाषा मे एक गाथा सुनाकर सस्कृत श्लोको के साथ आशीर्वाद दिये। सभी पडितों का अच्छा विनोद हुआ। अम्मगदेवी समस्त भाषाओ की वाणी के भाव को हृदयगम करते हुये हकले ब्राह्मण की वाणी मे विशेष प्रकार की ध्वनि पाकर उसकी ओर आदर भाव से देखने लगी।

रानी ने सब ब्राह्मणो को विदा किया, पर हकले ब्राह्मण को नही। फिर भी वह सबके साथ चला जा रहा था। परिचारिका ने उसे रोक दिया। इस पर उसने लौट कर शिकायत की कि परिचारिका उसे रोक रही है।

"महात्मन ! मैं आपसे परामर्श करने का कुतूहल रखती हूँ। सभवत मेरी परिचारिका ने मेरे भाव को भाप लिया होगा।"

"महारानी जी ! मै आपको परामर्श देने की क्षमता नही रखता।"

"महात्मन, आप हकलाहट छोड हमसे स्पष्ट बोल सकते है।"

"म . . म . महारानी जी ! यह आ . . आप क्या कह रही है ?"

"वेद मन्त्रो के उच्चारण मे जो हकलाहट नही होती, वह हमसे वार्ता करते समय कैसे आ गयी ? यही तो हमे आश्चर्य होता है।"

हकला ब्राह्मण मौन धारण कर महादेवी की ओर आदर भाव से देखने लगा।

"महारानी जी ! आप त्रिलोक राज्य की लक्ष्मी है।"

"ब्राह्मण देवता, क्या हम जान सकती है कि आप किस प्रदेश के निवासी है ?"

"हम जैसे ब्राह्मणो का कोई एक प्रदेश नही होता, महारानी जी ! आसेतु हिमाचल पर्यन्त प्रदेश हमारे ही है। जो प्रदेश हमारे नित्य नैमित्तिक कर्मो के लिए अनुकूल होगा, वही हमारा देश है।"

"यह गोदावरी तट और यह वेगी मण्डल आपके अनुकूल नही है क्या ?"

"अनुकूल ही होगा, इसी आशा को लेकर यहाँ आया हूँ, महारानी जी!"

"आपके यहाँ आये कितने दिन हुए?"

"चार दिन हुए है, महारानी जी!"

"आपका गोत्र?"

"हारीत गोत्र है।"

"हारीत गोत्रवशी हमारे चालुक्यो के लिए पितृ समान है। हमारे वश की वृद्धि का कारणभूत आपके गोत्री विष्णुभट्ट सोमयाजी ही है। इसीलिए तो हम लोग विष्णुवर्द्धन कहलाते है।"

"जी हाँ, महारानी जी! किन्तु कर्नाटक चालुक्य यह बात बिलकुल भूल गये है।"

अम्मगदेवी ने समझने का भाव प्रदर्शित करते हुए कहा—"परन्तु गोदावरी नदी के जल का सेवन करनेवाले वेगी चालुक्य इस बात को भूल नही गये है। इसका प्रमाण हमारे शिलालेख ही है।"

दोनो थोडी देर तक मौन रहे।

"आपके परिचित व्यक्ति यहाँ पर कोई है?"

"काचीपुर के सहपाठी एक-दो यहाँ होगे।"

"आपका शुभ नाम?"

"महारानी जी! क्या ब्राह्मण सब नारायण स्वरूप नही होते?"

"आप किनके यहाँ दण्डनाथ के पद पर रहे?"

हकले ब्राह्मण ने सर उठा कर मौनपूर्वक इस प्रकार देखा कि मानो वह यह कहना चाहते हो कि इनका सही उत्तर न देने की स्थिति मे उसे क्षमा दान दे ।

"जब आप अपना पूर्ण परिचय देना चाहेंगे तभी दे सकते है, हमे कोई आपत्ति नही है। किन्तु यह तो बताइये उस अश्व मे दोष ही क्या था ?"

"मेरे अश्व मे दोष ! ... कुछ नही महारानी जी ! कुछ नही ।"

"तो फिर !"

"कतिपय अश्व ऐसे होते हे जो अपने मालिक के स्पर्श के बिना सहन नही कर पाते ।"

"क्या ऐसा अश्व दुष्ट अश्व नही माना जायगा ?"

"महारानी जी ! आप सब कुछ जानती है। अश्व का मुख-पट्ट फेकने की बात मुझे तत्काल सूझ पडी । वह युवराज की अश्वशाला मे रहने योग्य है।"

"आपको उस अश्व के पोषण मे भार मालूम होता हो तो हमारे घुडसाल मे छोड सकते है।"

"ऐसा ही करूँगा, महारानी जी ! इस वक्त वह अश्व आपके प्रागण मे ही है।"

अम्मगदेवी ने तत्काल अपनी दासी को भेज कर उस अश्व को अश्व-शाला मे पहुँचवा दिया ।

"आपने मेरे पुत्र की प्रतिष्ठा बचायी । अत आपके प्रति हमारे हृदय मे पितृतुल्य पूज्य भाव पैदा हो गया है। आपको इसके अनुरूप व्यवहार करना होगा।"

"जो आज्ञा महारानी जी ! मेरा आगमन सार्थक हो गया।"

"मै नौकरो को आदेश दे देती हूँ कि आपको जब भी किसी चीज़ की आकश्यकता पडे, वह आप को समय पर पहुँचा दी जाय। हमारी तीव्र इच्छा है कि आप गोदावरी तट पर ही अपना स्थायी निवास बनाले।"

"महारानीजी, इस गोदावरी तट पर शाति के साथ शेष जीवन बिताने की अभिलाषा से ही यहाँ आया हुआ हूं। महारानीजी का अनु-ग्रह प्राप्त हो तो मुझे किस बात की कमी होगी। राज सेवको की रक्षा का बला फिलहाल न हो तो बडी कृपा होगी। महारानीजी! आज्ञा दीजिये!"

अम्मगदेवी ने मदहास के साथ हकले ब्राह्मण को विदा किया। तुरत महारानी ने राजमय्या को बुलवाकर आदेश दिया कि गुप्त रूप से उस ब्राह्मण का अनुसरण करते हुये खतरे से उस की रक्षा करे।

थोडी देर बाद महारानी ने वज्जिय प्रेग्गडा को बुला भेजा। अत पुर तथा राजनीति के सबध मे चर्चा करने के पश्चात पूछा—"मत्रि वर क्या आप जानते है कि नारायण नामधारी ब्राह्मण ने क्या इसके पूर्व किसी के पास दण्डनाथ अथवा अमात्य का पद सभाला है?"

"महारानीजी! मालूम होता है कि नारायण नामधारी ब्राह्मण कुछ समय पूर्व तक त्रैलोक्य मल्लदेवर के पास प्रधान मत्री पद पर रहा, किंतु कुछ समय पूर्व वह सपरिवार उस राज्य को त्याग कर कही चला गया है। यह भी मालूम हुआ कि वह फिलहाल वेगी राज्य मे रहता है, पर अभी तक वह पहचाना नही जा सका।"

"क्या यह जानते है कि उसने त्रैलोक्यमल्लदेवर को क्यो त्याग दिया है?"

'मालूम होता है कि त्रैलोक्यमल्लदेवर जैन पक्षपाती था, यह नारा-यण को कतई पसद न था। कहते है कि नारायण ने यह शपथ खाई है

कि जिस राज्य मे वैदिक धर्म को स्थान नही, उस राज्य मे वह निवास तक नही करेगा। मैं निश्चित रूप से यह नही बता सकता कि इस कथन मे कहाँ तक सचाई है।"

"नारायण को जाननेवाले हमारे राज्य मे क्या कोई नही है?"

"ऐसा लगता है कि मेरे पुत्र तथा नन्नय भाट्टारक उनको जानते है।"

इसके उपरात महारानी ने वज्जिय प्रेग्गडा से अन्य बातो की चर्चा करके उसे विदा किया।

9

जिस प्रदेश मे हाट लगी थी, उसके निकट ही हाट सवर्ती न्यायालय था। वहाँ पर आज तैल व्यापारी फारसियो पर लगाये गये अभियोग का इन्साफ होने वाला था। हाट मे आये अनेक व्यापारी फैसला सुनने वहाँ पर उपस्थित थे।

यह न्यायालय तात्कालिक रूप से हाट सबन्धी विवादो का फैसला करने के निमित्त स्थापित था। ऐसे न्यायालयो को अमन्य न्यायालय नाम से पुकारने की परिपाटी है। ऐसे न्यायालयो का न्यायाधीश राजा कभी नही होता। राजा के द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि राजमुद्रा के अधिकारो के साथ न्याय-निर्णय करेगा। इसलिए उन्हे मुद्रित न्यायालय की सज्ञा भी दी जाती है।

न्यायालय का भवन तात्कालिक कार्य के निमित्त निर्मित था, तथापि देखने मे आकर्षक था। उसके चतुर्दिक वृक्ष तथा शीतल जल का भी प्रबन्ध था।

राजमहेन्द्रपुर के व्यापारियो मे विशेष सपन्न व्यक्ति गुरुनाथ श्रेष्ठी था। वही उस न्यायालय का न्यायाधीश था। वह न्यायासन पर प्राची दिशा के अभिमुखी हो बैठा था। उसके समीप दक्षिण पार्श्व मे उत्तराभिमुखी हो प्राड्विवाक बैठा था। प्राड्विवाक की दक्षिणी दिशा मे पाच सदस्य उत्तराभिमुखी हो बैठे थे। वे सदस्य ही पिछली शाम को

"एक सुनवाई मे दो अपराधो का निर्णय नही किया जा सकता। आप लोग अपने दो अभियोगो मे एक पहले प्रस्तुत करे। एक का फैसला हुये बिना दूसरे पर विचार करना असभव है।"

प्राड्विवाक की बाते सुन कर बेतया ने सर झुकाकर यो कहा—

"जी हाँ! परतु प्रथम अभियोग का प्रथम साक्षी किसी कारणवश उपस्थित नही हुआ है। मेरा सदेह है कि वह किसी खतरे मे है। इसलिए दूसरे अभियोग को प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करे।"

"ऐसा करना न्याय सगत नही है। बन्दी गवाह के न आने से बिना सुनवाई के उसे कैद मे रखना उचित नहीं है। आप अपना प्रथम अभियोग शुरू कर सकते हैं।" प्राड्विवाक ने कहा।

फारसियो का नियोगी जो बाते निवेदन करने के लिए उठ खडा हुआ था, उन बातो को प्राड्विवाक के मुँह से सुनकर वह सतुष्ट हो मौन रह गया। सूचक ने अभियोग का प्रारभ किया—

प्रारभ मे सूचक ने अपना नाम 'रापति बेतया' बताया, तदनतर अपने पिता का नाम, वश, गोत्र, गाँव, अवस्था इत्यादि का विवरण भी दिया। वह जाति का वैश्य था इसलिए साक्ष्यपाल ने उस के हाथ मे नवधान्य तथा स्वर्ण रख कर यह शपथ करायी—

"इन वस्तुओ की शपथ खा कर मैं कहता हूँ कि सत्य ही कहूँगा।'

व्यापारियो पर जो अभियोग लगाया गया था, सक्षेप में यो था—

व्यापारियो ने तेल मे आधा अश जल वा कोई द्रव पदार्थ मिला दिया है। इसलिए वह तेल बेकार साबित हुआ है। कम दाम मे बेचने की घोषणा कर ग्राहको को धोखा दिया गया है।

सूचक ने अपराध का कारण बताकर उसे प्रमाणित करने वाले गवाहो के नाम दिये। यह भी बताया कि वह तेल भी न्यायालय मे पहुँचा दिया गया है।

सूचक की बतायी गयी बाते प्राड्विवाक के आदेश पर लेखक ने एक फलक पर लिख कर उसे दिखाया। प्राड्विवाक ने सबके समक्ष ऊचे स्वर मे पढ कर सुनाया। उपस्थित लोगो मे से किसी ने आक्षेप न किया, तब उसे कागज़ पर उतारने का लेखक को आदेश दिया।

इसके उपरात प्राड्विवाक ने फारसी व्यापारियो से कहा कि वे लोग अभियोग का समुचित समाधान करे। इस पर उन व्यापारियो द्वारा नियुक्त नियोगी ने उठ कर निवेदन किया, चूँकि फारस के व्यापारी तेलुगु भाषा का ज्ञान नही रखते, अत उनकी तरफ से पैरवी करने के लिए उसे अधिकार पत्र दिया है। इस कारण उसे पैरवी करने की अनुमति प्रदान करे। प्राड्विवाक ने स्वीकृति दी, तब गुरुनाथ श्रेष्ठी ने उस अधिकार पत्र पर स्वीकृति सूचक मुहर लगायी।

साध्यपाल ने फारस के व्यापारियो से तेल का स्पर्श करा कर यह शपथ दिलायी कि वे सत्य बोलेगे। इस पर नियोगी ने उनकी तरफ से पैरवी की, जिसका साराश यो है—

'प्रतिवादियो मे प्रथम दो व्यक्ति ही उस तेल के व्यापारी है। शेष तीनो उनके नौकर हैं। सेवक मालिक के द्वारा निर्णीत मूल्य पर तेल का विक्रय कर रहे थे। वे उस माल के गुण-दोषो से सर्वथा अपरिचित थे। अत वे तीनो नौकर निर्दोष है। दोनो व्यापारियो को अपने देश से जैसा तेल प्राप्त हुआ, उसे वे उसी रूप मे विक्रय करवा रहे थे। उस माल के गुण दोषो से वे भी अनभिज्ञ थे। उन लोगो ने प्रयत्न पूर्वक तेल मे जल अथवा कोई अन्य द्रव पदार्थ नही मिलाया है। आप तेल की जाँच करवा सकते हैं। ये दोनो दण्ड पाने योग्य नही हैं।"

नियोगी द्वारा दिया गया उत्तर भी प्राड्विवाक के आदेशानुसार लेखक ने पहले किसी फलक पर लिखा। प्राड्विवाक के द्वारा सबको सुनाकर स्वीकृति पाने के पश्चात लेखक ने उसे कागज पर उतारा।

इसके उपरान्त गवाहियों ने अपनी गवाहियाँ दीं। लेखक ने प्राड्विवाक के आदेशानुसार उन्हें भी कागज पर अंकित किया।

गवाहों ने अपने वर्ण व श्रेणी के अनुसार अपनी-अपनी पवित्र वस्तु का स्पर्श कर शपथ लीं। ब्राह्मणों ने अग्नि, क्षत्रियों ने खड्ग इत्यादि आयुधों, वैश्य ने धान्य तथा अन्य और शूद्रों ने अपने-अपने पेशे के उपकरणों का शपथ लीं। प्राड्विवाक ने सबको सावधान करके घोषणा की कि सत्य कहनेवालों को स्वर्ग तथा असत्य भाषण करनेवालों को नरक लोक प्राप्त करने के साथ उनके पुरखे भी पुण्य लोक प्राप्त करने से वंचित हो जायेंगे।

गवाहों की गवाहियों से यह साबित हुआ कि व्यापारियों ने जो तेल बेचा, वह शुद्ध नहीं है। दीप में डालने से तेल चिट-पिट करने लगता है। राजभटों द्वारा जब्त किये गये तेल के पीपे जाँच के निमित्त प्रयोगशाला में लाये गये। वहाँ पर यह तो साबित हुआ कि तेल में मिलावट है, किन्तु इस बात की गवाही न थी कि नौकर जो तीसरे, चौथे व पाँचवे मुद्दई हैं, तेल की मिलावट में शरीक हैं।

सूचक ने उठकर यह निवेदन किया कि प्रथम गवाह पोत्रा आज सुबह से लापता है, उसकी गवाही से ही इन तीनों नौकरों का अपराध स्पष्ट हो सकता है। अतः कार्यवाही को एक दिन की अवधि दी जाये। सदस्यों ने एकमत से अपनी स्वीकृति दी। न्यायाधीश ने भी एक दिन की और अवधि देने की घोषणा की।

गुरुनाथ श्रेष्ठी ने सदस्यों की राय माँगी। सदस्य सब श्रेणीपति तथा अनुभवी थे, उन्होंने यह अभिप्राय व्यक्त किया कि वे तीनों नौकर

निर्दोष नही हो सकते। इस पर न्यायाधीश गुरुनाथ श्रेष्ठी ने दूसरे दिन के लिए फैसला स्थगित कर दिया। यह भी आदेश दिया कि दूसरे दिन इस मामले मे सबधित सभी व्यक्तियो को समय पर न्यायालय मे हाजिर किया जाय।

इसके उपरात उस दिन अनेक और मुकद्दमो की पैरवी हुई, किन्तु उनमे अधिकाश परस्पर समझौते के साथ फैसला हुये। मुद्दई तथा मुद्दा-लेह अपना झगडा करने मे सकोच करने लगे, अत प्राय सभी मुकद्दमे समझौता के द्वारा समाप्त हुये।

सूर्यास्त के दो घडी पूर्व ही न्यायालय के दर्वाजे बन्द हुये।

10

दिन भर क्रीडा द्वीप मे विविध प्रकार की क्रीडाएँ सपन्न होती रही। रात को वहाँ पर मनोरजन का कोई कार्यक्रम न था। नन्नय भट्टारक भोजन के पश्चात पुराण-कालक्षेप कर रहा था।

एक विद्यार्थी मधुर कठ से व्यासकृत महाभारत का पठन कर रहा था। नन्नय भट्टारक मूल ग्रन्थ का सार सुना रहा था।

आगन के मध्य भाग मे नन्नय पूर्वी दिशाभिमुखी हो बैठा था, पाठक उत्तराभिमुखी था। श्रोताओ मे स्त्री-पुरुप, वृद्ध एव बालक भी थे। चतुर्विध जाति के लोग थे। महाभारत नन्नय के लिए अत्यन प्रिय था। घर के मध्य भाग मे ही नही, अपितु बाहर चबूतरो पर भी लोग भरे थे।

वहाँ पर उपस्थित पडितो मे वृद्ध भीमनभट्ट तथा पावुलूरि मल्लना मुख्य थे। अन्य प्रमुख लोगो मे बिज्जना, सिरिवि शेट्टि, अनवेमारेड्डी इत्यादि उल्लेखनीय थे। बिज्जना प्रतापी वीर था। उसने चोळवशियो से कलह करनेवाले तेरह पल्लवो को एक साथ पराजित कर चोळ वश की प्रतिष्ठा रखी थी। सिरिविशेट्टि वेगी राज्य के धान्य व्यापारियो मे गणनीय थे। अनवेमारेड्डी अद्दकि के अधिकारी थे। बिज्जना तथा वेमारेड्डी क्रीडाओ मे भाग लेने आये थे। वे जब भी राजमहेन्द्रपुर जाते नन्नय भट्टारक के घर महाभारत का श्रवण करने अवश्य पहुँच जाते थे।

पाठक अनुशासनिक पर्व का पठन कर रहा था। प्रमग उमा-महेश्वर का सवाद था। सवाद के सदर्भ मे शिवजी पार्वती को राजत्वकी महिमा सुना कर अहिमा की व्याख्या करते है। अधिक तपस्या करनेवाला व्यक्ति तप के फलस्वरूप राजा बन समस्त जनता की पूजा प्राप्त करनेवाला बन जाता है। वह विजितेन्द्र हो, धर्म का पालन करने, काम-क्रोध इत्यादि पर अनुशासन करनेवाला हो। साथ ही बडी सजगता के माथ शत्रुओ की गतिविधियो पर निगरानी रखे। स्वदेश, नगर, परिवार इत्यादि की रक्षा एव उन्नति के लिए कार्य करनेवाला हो।

इस प्रकार राजत्व की महिमा एव कर्तव्यो का वर्णन कर अहिसा के स्वरूप की व्याख्या की। उस मे जैन व बौद्ध मतावलबियो का अहिंसा-तत्व तथा वैदिक धर्म के अहिमा–स्वरूप का भी विवरण दिया।

जैन मतावलबी हिसा के भय से मार्ग साफ करते चलते है, उच्छ्वास एव निश्वास के समय कही कीटाणुओ को पीडा न पहुँचे, इस ख्याल से नासिका पर कपडा ढक लेते है। जल को छान कर पीते है। दिया जलाने पर उसके प्रकाश मे कीडे मर जायेगे, इस विचार के लोग सूर्यास्त के पूर्व ही भोजन करते है। यज्ञ करने से पशुओ की बलि देनी पडती है, अत वे यज्ञ नही करते। खटमलो को तृप्त करने के लिए बलवान आदमियो को खाट पर लिटाते है। प्रति नित्यनिद्रा के पूर्व व पश्चात तथा भोजनोपरात भी 'ब्रह्मक्षयम' नामक मत्र का पठन करते है।

नन्नय के ये वचन सुनकर श्रोता आश्चर्य मे आ गये। कवि पावुलूरि मल्लना ने अपना मुख मोड लिया। इसके उपरात नन्नय ने बौद्धो की अहिसा का परिचय दिया। कलियुग मे बौद्ध धर्म का प्रथमाचार्य गौतम मत्स्य भक्षी था। अत मे एक भक्त के हाथ से वराह का मास खाकर उसने देह-त्याग किया। उनकी अहिसा के प्रचार का लक्ष्य चतुर्विध वर्णो द्वारा किये जानेवाले याज्ञ-याग इत्यादि को समाप्त करना था।

10

दिन भर क्रीडा द्वीप मे विविध प्रकार की क्रीडाएँ सपन्न होती रही। रात को वहाँ पर मनोरजन का कोई कार्यक्रम न था। नन्नय भट्टारक भोजन के पश्चात पुराण-कालक्षेप कर रहा था।

एक विद्यार्थी मधुर कठ से व्यासकृत महाभारत का पठन कर रहा था नन्नय भट्टारक मूल ग्रन्थ का सार सुना रहा था।

आगन के मध्य भाग मे नन्नय पूर्वी दिशाभिमुखी हो बैठा था, पाठक उत्तराभिमुखी था। श्रोताओ मे स्त्री-पुरुष, वृद्ध एव बालक भी थे। चतुर्विध जाति के लोग थे। महाभारत नन्नय के लिए अत्यत प्रिय था। घर के मध्य भाग मे ही नही, अपितु बाहर चबूतरो पर भी लोग भरे थे।

वहाँ पर उपस्थित पडितो मे वृद्ध भीमनभट्ट तथा पावुलूरि मल्लना मुख्य थे। अन्य प्रमुख लोगों मे बिज्जना, सिरिवि शेट्टि, अनवेमारेड्डी इत्यादि उल्लेखनीय थे। बिज्जना प्रतापी वीर था। उसने चोळवशियो से कलह करनेवाले तेरह पल्लवो को एक साथ पराजित कर चोळ वश की प्रतिष्ठा रखी थी। सिरिविशेट्टि वेगी राज्य के धान्य व्यापारियो मे गणनीय थे। अनवेमारेड्डी अद्दकि के अधिकारी थे। बिज्जना तथा वेमारेड्डी क्रीडाओ मे भाग लेने आये थे। वे जब भी राजमहेन्द्रपुर जाते नन्नय भट्टारक के घर महाभारत का श्रवण करने अवश्य पहुँच जाते थे।

पाठक अनुशासनिक पर्व का पठन कर रहा था। प्रसग उमा-महेश्वर का सवाद था। सवाद के सदर्भ मे शिवजी पार्वती को राजत्वकी महिमा सुना कर अहिंसा की व्याख्या करते है। अधिक तपस्या करनेवाला व्यक्ति तप के फलस्वरूप राजा बन समस्त जनता की पूजा प्राप्त करनेवाला बन जाता है। वह विजितेन्द्र हो, धर्म का पालन करने, काम-क्रोध इत्यादि पर अनुशासन करनेवाला हो। साथ ही बडी सजगता के साथ शत्रुओ की गतिविधियो पर निगरानी रखे। स्वदेश, नगर, परिवार इत्यादि की रक्षा एव उन्नति के लिए कार्य करनेवाला हो।

इस प्रकार राजत्व की महिमा एव कर्तव्यो का वर्णन कर अहिसा के स्वरूप की व्याख्या की। उस मे जैन व बौद्ध मतावलबियो का अहिंसा-तत्व तथा वैदिक धर्म के अहिंसा–स्वरूप का भी विवरण दिया।

जैन मतावलबी हिसा के भय से मार्ग साफ करते चलते है, उच्छ्वास एव निश्यास के समय कही कीटाणुओ को पीडा न पहुँचे, इस ख्याल से नासिका पर कपडा ढक लेते है। जल को छान कर पीते है। दिया जलाने पर उसके प्रकाश मे कीड़े मर जायेंगे, इस विचार के लोग सूर्यास्त के पूर्व ही भोजन करते है। यज्ञ करने से पशुओ की बलि देनी पडती है, अत वे यज्ञ नही करते। खटमलो को तृप्त करने के लिए बलवान आद-मियो को खाट पर लिटाते है। प्रति नित्यनिद्रा के पूर्व व पश्चात तया भोजनोपरात भी 'ब्रह्मक्षयम' नामक मत्र का पठन करते है।

नन्नय के ये वचन सुनकर श्रोता आश्चर्य मे आ गये। कवि पावुलूरि मल्लना ने अपना मुख मोड लिया। इसके उपरात नन्नय ने बौद्धो की अहिसा का परिचय दिया। कलियुग मे बौद्ध धर्म का प्रथमाचार्य गौतम मत्स्य भक्षी था। अत मे एक भक्त के हाथ से वराह का मास खाकर उसने देह-त्याग किया। उनकी अहिसा के प्रचार का लक्ष्य चतुर्विध वर्णो द्वारा किये जानेवाले याज्ञ-याग इत्यादि को समाप्त करना था।

फिलहाल उनके आचरण का विधान महाचीन तान्त्रिक है, अर्थात पूजादिक मे मद्य, भूचर, जलचर, खेचर इत्यादि का मास अवश्य चाहिये ।

महाभारत मे निरूपित अहिसा का स्वरूप विशिष्ट है। वह वैदिक धर्म का पर्यायवाची है। हमारे लिए अहिसा परमधर्म है। किन्तु आचरण मे वह कठिन साध्य है। हिसा के बिना जीव-यात्रा सभव नही। हल जोतते समय उसके नीचे अनेक प्राणी प्राण त्यागते है। इसी प्रकार ओखल, चक्की, चूल्हे, जलावन इत्यादि मे अनेक कीडे मर जाते है। दीप के जलाने पर कई कीडे जल मरते है। इन प्राणियो को हम लोग इच्छा-पूर्वक या अहकार से मार नही रहे है। उनकी आयु समाप्त होने पर उनकी मृत्यु हो जाती है इसलिए उन्हे वह पाप नही लगता। पुण्य और पापो का मूल मन है। चाहे जो भी हो पच सूनो के दोषो के शमन के निमित्त गृहस्थ पच यज्ञ करते है। यह गृहस्थो का अहिसा-धर्म है।

समस्त प्रकार के कर्मो का परित्याग करनेवाले परमहँसो का परम धर्म अहिंसा है। वे समस्त प्राणियों को अभय प्रदान करते है। वे आग नही जला सकते। वृक्ष से पत्र नही तोड सकते। पेड से तोडे गये फल को काट नही सकते। इस प्रकार अहिंसा-धर्म आश्रम व्यवस्था के क्रम मे निर्णीत है। परन्तु लोक यात्रा मे भग न हो, इस रूप मे गृहस्थो के लिए अहिंसा नियत है।

श्रोताओ के लिए ये धर्म-सूत्र आश्चर्य जनक थे, अत: वे महाभारत की प्रशसा करने लगे। नन्नय ने सन्तुष्ट होकर कहा—"व्यास कृत महा-भारत की प्रस्तुति अवर्णनीय है। वह साक्षात् वेद समान है। वेद व्यास महर्षि के लिए ही इस ग्रन्थ की रचना सभव थी। उसके तेलुगू रूपातर मे मैंने व्यास महाभारत के वाक्यो के किंचित सार को ग्रहण किया है। सुनते है कि कुछ लोग इस बात का गर्व करते है कि उन्होने व्यास-महाभारत को अपनी प्रतिभा के बल और भी चमका दिया है। मैं इस बात की कल्पना तक नही कर सकता था, किन्तु हाल ही मे राजसभा मे

पावुलूरि मल्लना ने इस बात का जिक्र किया है।" नन्नय ने अपना पुराण प्रवचन समाप्त किया।

इसी समय नन्नय भट्टारक की धर्मपत्नी अरुंधती ने कर्पूर की आरती की। भट्टारक ने कोश-पूजा करके स्वस्ति वचन कहे।

"स्वस्ति प्रजाभ्य परिपालयताम्
न्याव्येण मार्गेण मही महीशा
गो ब्राह्मणेभ्य शुभमस्तु नित्यम्
लोकास्समस्ता स्सुखिनो भवन्तु।"

"हम लोग न ब्राह्मणो का क्षय चाहते है और न जैनमत का क्षय।" ये शब्द कहते श्रोता मन्दहास करते प्रसाद ग्रहण कर चले गये।

वृद्ध भीमनभट्ट मात्र रह गया।

"नन्नय भट्टारक! अभी तक तुम्हारा बचपना नही गया..." भीमनभट्ट ने कहा।

"क्या मैने आज किसी के दिल को दुखाया? जैन या बौद्ध मतावलबी उपस्थित थे?" नन्नय ने मन्दहास करते पूछा।

"मैं तुमसे क्या कहूँ? क्या तुमने पावुलूरि मल्लना के मुखमण्डल का अवलोकन नही किया?"

"क्या बात है! मैंने तो उसे कुछ नही कहा।"

"लगता था कि आज का प्रवचन मल्लना का उपहास करने के लिए हुआ है। श्रोताओ मे से अनेक लोग उसके मुख की ओर ताक रहे थे। क्या तुमने इस पर ध्यान नही दिया?"

"नही, इससे उसका क्या सम्बन्ध है ?"

"क्या तुम नही जानते ? हाल ही मे मल्लना ने बेजवाडा जाकर त्रिकाल योग सिद्धात देव की जैनवसति मे दिगबर से मन्त्र स्वीकार किया है।"

नन्नय चकित रहा—"मै इस बाबत कुछ नही जानता। ऐसी बातें जानने की न मेरी जिज्ञासा है और न मेरे पास समय ही है। मैं सदा अपने नित्य नैमित्तिक कर्म तथा पठन मे व्यस्त रहता हूँ। फिरभी मैंने इच्छापूर्वक उसके दिल को नही दुखाया। अत उसका पाप मुझे नही लग सकता।

नन्नय हँस पडा और भीमनभट्ट से पूछा—"क्या आप हकले ब्राह्मण से परिचित हैं ?"

"तुमको उसकी बावत बहुत ही सावधान रहना है।" भीमनभट्ट ने सचेत किया।

"क्यों, किसलिए ?"

"क्या तुम समझते हो कि वह हकला है ?"

"हकलापन न होता तो ऐसा बोलने मे उसे फायदा ही क्या रहा ?"

"तब स्वस्ति वचन कहने मे हकलाहट न होती ?"

"इसमे क्या बात है ? मैं एक घनपाठी को जानता हूँ। वे धारा प्रवाह में घन का उच्चारण तो करते है, किन्तु सध्यावदन से लेकर अर्घ्य-प्रदान तक पुनरावृत्ति करते समय लगा देते है। दुर्भाग्य से उन्हे हकला-हट प्राप्त हो गयी है।"

"इन दोनो मे कोई सम्बन्ध नही है। मेरा यहाँ तक सन्देह है कि वह ब्राह्मण तक नही है।"

नन्नय को हसी आ गयी । उसने अपने कान बद किये

"आप चाहे उस पर जैसा भी सदेह करे, किन्तु वह मेरे लिए पिछले या इस जन्म मे अत्यन्त आप्त प्रतीत होता है । उसके मुख को देखने का स्मरण नहीं है, परन्तु उसका कठ पूर्व परिचित लगता है। उससे बात करना चाहता हूँ, लेकिन मौका नही मिल रहा है।"

"पूर्व परिचित हो तो वह तुम्हे देख भाग क्यो जायगा ? वह कैसा कुशल अश्वारोही है! वाह, क्या बताऊ ? मुझे लगता है कि वह क्षत्रिय है और कोई गुप्तचर है! हमारे राज भट उसका अनुसरण कर रहे हैं।"

नन्नय विस्मित हो बोला— "क्या इन राज राजनरेन्द्र के राज्य में तपोनिष्ठ ब्राह्मणो का पीछा भी राजभट करते है ?"

"नन्नय, चाहे तुम लोकानुभवी के रूप मे जैसे भी प्रसिद्ध क्यो न हो, हमारा लोकानुभव अधिक है। आज ही तुमने पुराण-प्रवचन के सदर्भ मे कहा, 'हित चाहने वाले राजा को सतर्क रहना चाहिये।' मेरी बात सुनो, उस हकले ब्राह्मण पर विश्वास न करो। उससे दूर रहो।"

नन्नय को ये बाते सुना कर महाभारत का पठन करने वाले विद्यार्थी के हाथों का सहारा ले भीमनभट्ट घर चला गया।

भीमनभट्ट के लोकानुभव के प्रति नन्नय का आदर भाव है। फिर भी वह यकीन न कर सका कि हकला व्यक्ति ब्राह्मण नही है। उसके चेहरे पर सौम्यता, बोली मे सफाई, वाणी की विदग्धता है, वह गुप्तचर कैसे होगा ? भीमनभट्ट किसी पर हद से अधिक सदेह करते है!

इसी समय नन्नय को यह स्मरण हो आया कि मल्लना दिगबर जैन का शिष्य हो गया है। उसने अपनी पत्नी अरुधती से कहा—"सुनती हो, बेचारे मल्लना ने पिगबर साधु से मत्र-दीक्षा ले ली है! वह महामाया बुद्धिवानो को भी जबर्दस्ती माया मे डाल देती है।"

11

राजमहेन्द्रपुर मे चौथे दिन के क्रीडा-विनोद देखने की उत्सुकता सर्वत्र व्याप्त थी। सामान्य कृषक से लेकर सपन्न परिवारों के लोग, राज कर्मचारी, सामत, दण्डनाथ इत्यादि सभी वर्गो के लोग सुन्दर वस्त्रो से अलकृत हो क्रीडा द्वीप की ओर चल रहे थे। सारे नगर मे तूर्य नाद, मगल वाद्य, प्रमुदित जनता का कोलाहल सुनाई दे रहा था।

परन्तु बेचारे पाबुलूरि मल्लना की मानसिक दशा अत्यन्त दयनीय थी। उसकी धर्म-पत्नी माचम्मा बडी पतिपरायणा नारी थी। प्रति दिन प्रात काल ही उठ कर भगवान का स्मरण करके वह गृह-कार्यो मे निमग्न हो जाया करती थी, किन्तु आज वह शय्या पकडे हुये थी। वह यो तो जाग रही थी, मगर उसकी आँखे खुली की खुली सी रह गयी थी। वह कुछ बोलती-चालती न थी, न सकेत ही करती थी। नाडी चल रही थी। देह मे ज्वर के लक्षण न थे। उस गृह लक्ष्मी की चहल-पहल से वचित वह घर कला-विहीन लग रहा था। मल्लना विषाद की मूर्ति बन एक कोने मे चटाई पर बैठा था।

मल्लना का पुत्र सिव्वना वैद्य को बुला लाया, वैद्य ने माचम्मा की नाडी की जाँच करके बताया कि शरीर मे रोग के लक्षण नही है। अत दवा-दारू की कोई आवश्यकता नही है।

अडोस-पडोस की औरतो ने तरह-तरह की दवाएँ बतायी। उनकी सूचना पर अनेक वैद्यो को बुलवाया गया, मगर कोई फायदा न रहा। सबने यही निर्णय दिया कि माचम्मा के कोई रोग नही है। अन्त मे भूत वैद्यो को बुलाया गया, मत्र-तत्रो से भी काम न बना।

आखिर एक दिन मल्लना के नौकर ने हाथ जोड कर कहा—"सरकार, सारगधर के सघाराम मे भूत वैद्य है। एक बार मेरी औरत को इसी तरह की बीमारी हो गयी थी। सघाराम के भूत वैद्य ने ठीक किया था।"

मल्लना अपनी पत्नी को सघाराम मे भेजना नही चाहता था, फिर भी बार-बार नौकर के गिडगिडाने पर उसने अपने पुत्र की ओर सार्थक दृष्टि से देखा। तत्काल सिव्वना अपने नौकर को साथ ले सघाराम गया। जेतारीनाथ के दर्शन कर सारा हाल सुनाया। जेतारी बडा दुखी हुआ और मजुश्री के उपासक वज्रकीर्ति नामक श्रमण को बुलाकर आदेश दिया कि वह मल्लना की पत्नी की उचित चिकित्सा करे।

वज्रकीर्ति भिक्षा पात्र ले सिव्वना के साथ चल पडा। सिव्वना ने शकट पर वज्र-कीर्ति को घर ले जाना चाहा, पर वज्रकीर्ति ने अस्वीकार किया और पैदल ही चला आया। मल्लना ने सादर वज्रकीर्ति का स्वागत किया। अभिवादन कर भिक्षा दिलायी, तदनतर माचम्मा के पास ले गया।

श्रमण ने भिक्षा पात्र साफ किया। उस मे अन्न का एक कण चिपका पडा था। उसे निकाल कर पृथ्वी पर की मृत्तिका मे मिलाया। तदुपरात अपने अगुष्ट से माचम्मा के भाल पर तिलक लगाया।

माचम्मा हठात् चिल्ला पडी। उस चिल्लाहट को सुन मल्लना घबरा उठा और दिगबर साधु से प्राप्त उपदेश का मत्र भय विह्वल हो जपने लगा। सिव्वना अवाक् रहा, पर नौकर प्रसन्न होता हुआ

बोला—"सरकार, मेरे घर भी ठीक ऐसे ही हुआ था। अब माचम्मा देवी जल्द स्वस्थ हो जायेगी।"

परतु माचम्मा बडी देर तक चिल्लाती रही, कभी बडबडाती और कभी बौद्ध ग्रन्थ के उपदेश सुनाती। वज्रकीर्ति अविचल दृष्टि से माचम्मा के नयनो मे देखते मन मे जाप करने लगा। उसका अगूठा माचम्मा के थाल पर टिका हुआ था।

थोडी देर बाद माचम्मा भयकर स्वर मे चिल्ला पडी। "सिद्ध सारग, सिद्ध सारग देव।"

कभी वह चिल्लाती, कभी रोती, कभी दाँत पीसती और कभी विकृत रूप से हस पडती।

मकान के भीतर हलचल बढती गयी। ठीक इसी समय मकान के बाहर चबूतरे पर लोगो का कोलाहल सुनाई दिया। कुछ ही क्षण बाद गभीर स्वर मे एक कविता सुनाई दी जिसका साराश यो था—

"छी, अरी तुम पिशाच सारग को सिद्ध बताती हो? क्या तुम नही जानती कि तुम्हारे आँगन मे द्राक्षाराम के आराध्य की कृपा से उत्पन्न भीम कवि उपस्थित है! तुम मे हिम्मत हो तो फिर उसका नाम लो!"

यह कविता सुन सभी लोग भय कपित हो आवाक् रह गये। उस कविता का अर्थ न जानने वाले लोग भी उस कठ स्वर से भयभीत हो उठे थे।

माचम्मा भी मौन हो गयी। वज्रकीर्ति का चेहरा रोष के मारे तमतमा उठा। उसने जान लिया कि उसके चतुर्दिक फैले हुये लोगो का विश्वास उसके ऊपर से उठता जा रहा है। उसने दोनो हाथ उठा कर

आकाश की ओर देखा । थोडी देर तक मन मे गुनगुनाने लगा । तदनतर अपने दाये हाथ के अगूठे को माचम्मा के फाल भाग पर टिका कर उसके कान मे कुछ कहता जा रहा था । हठात् माचम्मा ने उच्च स्वर मे एक कविता पढी, जिसका सार यो है—'हे विधवा पुत्र ! तेरी कहानी सब जानते है । तू हमें धमकाना चाहता है । तू अनाथ है । भीख माँग, जा, गली-कूचो मे भटकता रह ! आर्य जाति से तू बहिस्कृत है !

माचम्मा के मुँह से ऐसे कठोर शब्द सुन कर मल्लना ने अपने दोनो कान बद किये । श्रोता भी सहन न कर पाये । परन्तु वे सब इद्र जाल मे फसी गुडियो की भाति निश्चेष्ट रह गये थे । श्रमण के मुख पर प्रसन्नता की रेखाए खिच गयी ।

इसी समय बाहर से एक हुकार सुनाई दिया । वह साक्षात् प्रलयोद्यत नदिकेश्वर की रभाहट जैसे अथवा काल भैरव के गर्जन जैसे था । श्रमण आपाद मस्तक कॉप उठा । पुन द्वार पर वितर्दिका से गभीर स्वर मे कविता सुनाई दी । भीम कवि ने क्रोध मे आ कर शाप पूर्ण कविना सुनायी । जैसे जैसे भाव भीम कवि कहता जाता था, वैसे वैसे माचम्मा कभी कॉप उठती, छटपटाती, कराहती और चिल्लाती । आखिर कविता के भावानुसार माचम्मा ने वज्रकीर्ति के गाल पर, तडातड तमाचे लगाये । वह बराबर तमाचे लगाये जा रही थी, बीच मे कुछ लोगो ने रोकने का प्रयास किया तो उनको भी पीटना शुरू किया ।

मल्लना ने वज्रकीर्ति को प्रणाम कर के उससे क्षमा याचना की । अपने पुत्र और नौकर को साथ दे उसे पिछवाडे की राह से सघाराम भेज दिय। । बाहर के कवि ने शायद यह सोच कर मौन धारण किया कि श्रमण वहाँ से चला गया है । माचम्मा थक कर चार पाई पर लुढक पडी ।

पावुलूरि मल्लना ने चबूतरे पर बैठे आगतुक को प्रणाम कर उसे भीतर आने का आमत्रण दिया ।

मल्लना की परिचर्या से आगतुक का चेहरा शात हो गया। वह द्रवित हो मल्लना के पीछे घर के अन्दर चला आया। उसने माचम्मा के निकट पहुँच कर उसे प्रणाम किया।

आश्चर्य की बात थी कि तत्काल ही माचम्मा इस तरह उठ बैठी मानो अभी अभी नीद से जाग रही हो। उसने आँखे खोल कर चारों तरफ देखा। इस बात पर वह लजा गयी कि अनेक पुरुषो के बीच वह चारपाई पर बैठी है। वह घबराते भीतर चली गयी। वह निर्बल थी, पर स्वस्थ मालूम होती थी।

माचम्मा मे यह हठात् परिवर्तन देख सब चकित रह गये। कुछ लाग उस बौद्ध श्रमण की हालत पर दुखी हुए, पर कुछ लोगो ने उसकी निदा की, परतु सबने मुक्त कठ से आगतुक की प्रशसा की।

वह आगतुक और कोई न था, वेमुलवाडा भीमकवि था। उसकी वाणी तीव्र होती है। वह नाटा और पतला था। मुख पर वर्चस न था। अपरिचित लोग उसे ब्राह्मण नही मान सकता था। उसके कधा पर यज्ञोपवीत न था। वह केवल सोलह साल का किशोर था।

मल्लना ने भीमकवि को बढिया आतिथ्य दिया। भोजनोपरात चटाई पर लेट कर गहरी नींद सोने लगा। सबने सोचा कि वह थक गया है। कई लोग उसकी महिमा सुन कर उससे चर्चा करने के निमित्त आये, परतु वे सब निराश हो चले गये। उस शाम तक अनेक रोगी व पिशाच-ग्रस्त लाग भीम कवि के दर्शन के लिए इकठ्टे हो गये। लेकिन उन्हे कवि के दर्शन न हुये।

उस कोलाहल के बीच भीम कवि सध्या समय तक चटाई पर सोता ही रहा।

12

क्रीडा द्वीप मे आज धनुर्विद्या की परीक्षा होने वाली थी। वह धनुर्वेद है। धनुर्विद्या-कौशल के कारण ही भारतीय अजेय रहे हैं। उस विद्या का प्रदर्शन देखने की अभिरुचि प्रजा मे अधिक थी।

यह जनश्रुति व्याप्त थी कि युवराज राजेन्द्रदेव धनुर्विद्या मे पारगत है। उसके दाक्षिणात्य मित्र भी इस कला मे निपुण थे। आज वे सब इस परीक्षा मे भाग लेने वाले थे।

राजभट प्रेक्षको को नियत स्थानो की सीमा का अतिक्रमण करते देख उनको रोकने मे मग्न थे; क्योकि बाण-विद्या के प्रदर्शन के समय लक्ष्य-च्युत होने पर बाण प्रेक्षको पर जा न लगे।

धनुर्विद्या मे भाग लेने वालो को राज्य की ओर से नियुक्त एक राष्ट्रकूट अधिकारी के यहाँ से राजमुद्राकित अनुमति-पत्र लेना आवश्यक था। अनुमति पत्र अपने कवचो पर धारण कर युवराज तथा उसके मित्र करुणाकर तोडमान और जयगोडार स्वय धनुप बाण ले आ पहुँचे। कुमार सप्तक मे मल्लप्पा को छोड शेष छे व्यक्ति आये। वेगी राज्य के अन्य प्रमुख धनुर्धारियो मे बिज्जना, चन्द्रादित्य तथा अनवेमा रेड्डी थे।

उस दिन स्वय सम्राट राज राजनरेन्द्र ही प्रधान परीक्षाधिकारी था जनता राजा की निष्पक्ष बुद्धि से परिचित थी; फिर भी इस

के साथ राजा के आगमन की प्रतीक्षा कर रही थी कि आज राजराज वेंगी विद्या को पसद करेगा अथवा चोळ-विद्या को ।

राजराज नियत समय का अतिक्रमण कभी नही करता था । आज समय के निकट आने पर भी दूसरे किनारे पर राजराज की नौका के निकलने के लक्षण दिखाई न दे रहे थे ।

निर्णीत समय से आधी घडी पूर्व दूत ने शख ध्वनि करके वज्जिय प्रेग्गडा की घोषणा पढ सुनायी .— 'आज श्रीमन्महाराजाधिराज राजराजनरेन्द्र कार्य-व्यस्त रहने के कारण धनुर्विद्या की परीक्षा मे भाग न ले पा रहे है । अत: वे परीक्षाधिकारी के रूप मे अपने प्रधान दण्डनाथ श्री नृपकाम को नियुक्त कर चुके है । नृपकाम ही आज के कार्य-क्रम का सचालन करेगे ।'

इसके उपरात निर्णीत समय पर परीक्षा प्रारभ हुई । दूर पर एक स्थिर लक्ष्य को रख कर उसे भेदने की पहली परीक्षा थी । धनुर्धारी एक के बाद एक उपस्थित हो निर्णायको को अपने नामाकित बाण दिखा कर तब उनका प्रयोग कर रहे थे ।

धनुर्धारियो के बाण अनेक प्रकार के थे । सब तरह के बाणो का प्रयोग चलता रहा । युवराज, जय गोडार, करुणाकर तथा दाक्षिणात्यो के बाण बराबर लक्ष्य को भेद रहे थे । जनता मे हर्षनाद होने लगा ।

अन्य देशो के धनुर्धारियो के बाण बराबर लक्ष्य से चूक जाते थे । प्रेक्षक परिहास करते थे । वेगी के राजकुमारो के बाण भी अचूक थे । कुमार सप्तक मे से काम का कौशल प्रशसनीय था । अन्य धनुर्धारियो मे बिज्जना, चन्द्रादित्य तथा अनवेमा रेड्डी की धनुर्विद्या के कौशल की प्रेक्षक प्रशसा करने लगे । कभी-कभी जय-नाद कर रहे थे ।

इसके उपरात दूरपात की परीक्षा प्रारभ हुई । वेगी राजा के धनुष यो तो धृढ थे मगर उनकी प्रत्यचा मे कसावट न थी, अत वेगी के

वीरो को इस परीक्षा मे सफलता न मिली विदेशी व दाक्षिणात्य वीरो को ही इस परीक्षा मे सफलता मिली ।

तदुपरात बाण-लाघव की परीक्षा प्रारभ हुई । काम तथा बिज्जना ने अपने लाघव का प्रदर्शन कर जनता की प्रस्तुति पाई । लाघव के प्रदर्शन मे विदेशी धनुर्धारियो के बाण दीर्घ होने के कारण अनुपयोगी साबित हये ।

इतने मे विराम का समय आया नृप-काम तथा दण्डनाथ वज्जिय प्रेग्गडा मे वार्तालाप होने लगा ।

"दाक्षिणात्य धनुष अत्यन्त उपयोगी मालूम होते है, अत उन्हे मगवाकर हमारे सैनिको द्वारा अभ्यास कराना चाहिये ।" नृपकाम ने कहा ।

"मै एक वर्ष पूर्व से ही यह सुझाव देता आ रहा हूँ मगर सामत एव दण्डनाथो को मेरा सुझाव पसद नही आया । कहते है कि वे धनुष हमारे सिपाहियो के सुदृढ हाथो मे टिक नही सकते ।" वज्जिय ने बताया ।

"दाक्षिणात्य धनुषो का अभ्यास न करने वालो को कठोर दण्ड देना चाहिये । अन्यथा ऐसे धनुष धारण करने वाली सेना हमारी सेना को दूर से ही खतम कर सकती है ।" नृपकाम ने समझाया ।

वज्जिय भी नृपकाम के विचार से एकमत हुआ । हाट मे विक्रय के निमित्त आये हुये समस्त दाक्षिणात्य धनुषो को खरीदवाकर आयुधागार मे पहुँचाने तथा ऐसे ही असख्य धनुष दक्षिण से मगवाने का आदेश दिया गया ।

पुन विराम का समय आया । अब केवल चल-लक्ष्य-भेद मात्र रह गये थे ।

चल लक्ष्य भेद मे वेगी तथा दाक्षिणात्य धनुर्धारियो ने समान रूप से प्रतिभा दर्शायी ।

इसके उपरात असाध्य लक्ष्य भेद का कार्य क्रम प्रारभ हुआ । इस विद्या के प्रदर्शन के लिए अधिक कौशल की आवश्यकता होती है ! एक वस्तु को देखने के पश्चात आँखो पर पट्टी बाँध कर उस वस्तु को भेदना होगा । दर्पण मे दिखने वाले प्रतिबिंब को देख लक्ष्य भेदना होगा । अज्ञात वस्तु को शब्द के आधार पर लक्ष्य को भेदना शब्द-भेद कहलाता है । इस प्रकार के अनेक असाध्य लक्ष्य-भेद चल रहे थे । इन सबमे युवराज राजेन्द्रदेव सबसे आगे था ।

अब परीक्षा समाप्त होने को थी । बिना किसी खतरे के सारे कार्यक्रम प्राय समाप्त हो चुके थे । अतिम चरण मे राजभटो की निगरानी मे ढिलाई आ गयी । उसी वक्त एक दुर्घटना हुई । युवराज तथा कुमार सप्तक मे से छे राजकुमार बाणो का प्रयोग कर रहे थे । प्रारभ मे दो बाण ब्राह्मणो के समूह की ओर चले गये ।

"राजेन्द्र देव ! पुन पुन ब्राह्मणो पर आघात क्यो कर रहे हो ?" काम ने ये शब्द कहते बाण-प्रयोग करने वाले राजेन्द्र देव का हाथ पकड कर हिलाया । इससे लक्ष्य से चूक कर बाण ब्राह्मण-वृन्द की ओर वेग के साथ चला गया ।

ब्राह्मण वृन्द मे से एक व्यक्ति बाण के आघात से नीचे गिर पडा । भीड के बीच हाहाकर मच गये । जनता महा समुद्र की भाति उमड पडी, उस भीड को नियत्रण मे लाना राजभटो के लिए भी असाध्य सा हो गया ।

कुमार सप्तक मे से छे राजकुमारो ने बताया कि युवराज राजेन्द्र देव के तीन बाण ब्राह्मण वृन्द की ओर गये हैं । पर युवराज ने

बताया कि काम के द्वारा हाथ हिलाने पर लक्ष्य से चूक कर एक ही बाण ब्राह्मण वृन्द की ओर गया है। अन्य कोई बाण नही गया है।

परीक्षा की जाँच मे सावधान रहने वाले नृपकाम तथा वज्जिय ने स्पष्ट कर दिया कि पहले दो बाण युवराज के नही है, पर अतिम बाण भी काम के हिलाने से युवराज का बाण लक्ष्य चूक कर ब्राह्मण वृन्द मे जा गिरा है।

युवराज के धनुष से छूटा अतिम बाण ही हकले ब्राह्मण की दायी भुजा मे घुस गया था।

ब्राह्मण वृन्द मे गिरे पहले दो बाण भी राजभट चुन कर ले आये। उन दोनो पर भी युवराज का नाम अकित था। भटो ने यह भी बताया कि ब्राह्मण की भुजा से शस्त्र वैद्य बाण निकाल रहा है।

वज्जिय और नृपकाम ने एक दूसरे के चेहरे का अवलोकन किया।

जन समूह मे यह कानाफूसी होने लगी कि युवराज ने ब्रह्म-हत्या की है।

राजेन्द्र देव के क्रोध का पारा चढता जा रहा था।

इसी समय नृपकाम दण्डनाथ ने परीक्षा की समाप्ति की घोषणा की। साथ उत्तीर्ण लोगो की नामावली दृढ स्वर मे घोषित की गयी। असाध्य लक्ष्य-भेद मे युवराज राजेन्द्र देव को अद्वितीय बताया गया।

परीक्षा-फल के घोषित होने के उपरात राजभट जो दो बाण ले आये, उन पर अपने नाम को अकित देख युवराज अपनी आँखो पर विश्वास न कर सका। "धोखा है! दगा है!" युवराज दाँत पीसते। फूत्कार कर उठा। वज्जिय तथा नृपकाम ने भी बताया—"युवराज, ये बाण तुम्हारे नही है।"

परतु जन समुदाय ने कुछ भिन्न प्रकार से सोचा कि वृद्ध दण्डनाथ एव अमात्य युवराज के प्रति पक्षपात दिखा रहे है। 'युवराज ने ब्रह्म हत्या की है।' जनता ने अपनी ऑखो से देखा था, इसे वे कैसे झूठा मान सकते है।

जनता के कोलाहल के बीच लज्जा से सर झुकाये युवराज भी वज्जिय तथा नृपकाम के साथ ब्राह्मण वृन्द के पास गया। कुछ लोग यह सोच कर दूर हट गये कि ब्राह्मण की हत्या करने वाले का चेहरा नही देखना चाहिये।

राज-वैद्य ने हकले ब्राह्मण की बाहु से बाण खींच कर पट्टी बाध दी। युवराज ने उसके निकट जा कर उसे प्रणाम किया और बोला—"मेरा ही बाण आपको लगा है। मेरे भाई ने मेरा हाथ हिला दिया, इसलिए क्षमा कीजिये।"

हकले ब्राह्मण का चेहरा फीका पडता जा रहा था। राज कर्मचारियो ने उसे सघाराम के चिकित्सालय मे ले जाने की तैयारियॉ कर दी थी। एक शिबिका मगवा कर हकले ब्राह्मण को उस पर लिटाया गया। शिबिका चल पडी।

"इसे मेरे घर पहुँचा कर मेरे गृह वैद्य द्वारा इस ब्राह्मण की चिकित्सा करा दो।" वज्जिय ने आदेश दिया। इस पर सब आश्चर्य चकित हो गये। फिर भी वज्जिय प्रेग्गडा की आज्ञा का पालन करना ही चाहिये था।

वज्जिय ने करुणाकर तोडमान से वार्ता की। ब्राह्मण वृन्द मे गिरे तीनो बाण मगवाया। प्रारभ के दो बाण एक खोल मे तथा हकले ब्राह्मण के कधे से निकाले रक्त-सिक्त बाण को दूसरे खोल मे रखवा कर उन पर मुहरे लगवा दी और घर भिजवाया।

77

राजमहेन्द्रपुर में सर्वत्र ये ही बाते सुनाई दे रही थी कि युवराज ने ब्रह्मण हत्या की है। नृपकाम तथा वज्जिय युवराज के प्रति पक्षपात कर रहे है। युवराज के नामाकित बाणो को कुमार षट्क ने अपनी आँखो से देखा है ! कैसी हिम्मत ! कैसा अन्याय !

13

वज्जिय प्रेग्गडा के मकान को गृह कहने की अपेक्षा छोटा सा दुर्ग कहना उचित होगा। प्रधान गृह तीन मजिल वाला है। उससे अनुबद्ध अनेक अन्य गृहो से घेरे रहने के कारण बाहर वह दिखाई नही देता। उसके चतुर्दिक एक विशाल चहार दीवारी है। उसके चारो तरफ चार गोपुर-द्वारो के अलावा छोटे द्वार भी है। उनमे से कुछ द्वारो के जरिये केवल भीतर जाने की आज्ञा है, कुछ और द्वारो से बाहर जाने की आज्ञा है तो कुछ और द्वारो से बाहर जाने की आज्ञा है।

वज्जिय अधिकाश राज-कार्य उसी मकान से सभालते है। कई गणक पत्र लिखते सदा एक शाला मे रहते है, दूसरी मे राज-भट दिवा-रात सजग हो उस अहाते की रक्षा किया करते है। वहाँ पर एक हाथी, कुछ उत्तम जाति के अश्व, कई शिबिकाएँ तथा दो पल्यक भी है।

एक ओर एक सुदर उद्यान है, उद्यान के बीच एक कुआँ है। दूसरी तरफ गोष्ट है जिस मे अनेक गाये है। उनमे कपिल वर्ण की एक सुदर धेनु है जो कामधेनु का स्मरण दिलाती है। वज्जिय के लिए वही गाय माता और पुत्री भी है। वह प्रात काल उठते ही उसका दर्शन करता है। और शाम को घर लौटते ही उसका दर्शन करता है। वज्जिय की धर्मपत्नी स्वय उस गाय की देखभाल करती है। उसका दूध दुहती है। कुछ रोगी और माता से भी स्वय वज्जिय की धर्मपत्नी सोमिदेवम्मा के हाथ से दूध ग्रहण करने आते है। उनका विश्वास है कि

उसके हाथ से ग्रहण करने पर उनकी बीमारियाँ दूर हो जाती हैं। ऐमा उनका विश्वास है। उस गोशाला मे दो वृषभ भी है जो नदिकेश्वर का स्मरण दिलाते है।

वज्जिय के निवास मे एक अतिथि-शाला उस मे ब्राह्मणो का स्वागत-सत्कार होता है।

वज्जिय ने स्वय अग्निस्टोमादि यज्ञ कराये, साथ ही असख्य विद्वान वेद-वेदाग विद तथा सोमयाजियो का अच्छा सत्कार किया।

वज्जिय के घर पर नाना प्रकार की जाति, धर्म, वर्ण, वर्ग व पेशेवर लोग आते हैं और प्रसन्न मुख से लौट जाते है।

पूर्वी सिहद्वार मे हकले ब्राह्मण की शिविका को विश्राम भवन मे लाया गया। उसके बाजू मे ही एक वैद्य शाला है। उसमे योग्य वैखानस वैद्य तथा परिचारक भी तैयार है। हकला ब्राह्मण बेहोश हो पडा था। वैद्यो ने नाडी आदि की परीक्षा की, तदनतर उचित उपचार कराये।

शाम को घर लौटने पर वज्जिय कपिल दर्शन के पूर्व वैद्य शाला मे गया। हकला ब्राह्मण बेहोश था। वैद्यो ने वज्जिय से बताया कि घाव खतरनाक नही है, परतु विशेष रूप से खून के बह जाने के कारण पर्याप्त दुर्बलता आ गयी है। वज्जिय ने वैद्यो को समझाया कि ब्राह्मण के होश मे आने पर तत्काल ही उसे सूचना दी जाय। तदनतर वज्जिय गोष्ठ मे जा कर कपिल को देख याचको को दान देने आभ्यतर मदिर मे गया।

वज्जिय दान शील था। उसके यहाँ सदा याचको की भीड लगी रहती थी। वज्जिय ने घर लौटते ही मदहास के साथ गुप्त दान दे कर याचको को भेज दिया। उनमे एक श्रमण था। वज्जिय ने श्रमण को बैठने का आदेश दिया और पूछा—"श्रमण, तुम बार-बार त्रिशरण का जाप कर रहे हो? तुम्हारा सघ कैसा है?"

"हमारा सघ खतरे में है।"

श्रमण की बाते सुन कर वज्जिय बडा दुखी हुआ। भोजनोपरात सघ की हालत पर विचार-विमर्श करने का सुझाव दे सध्यादि कालकृत्यों की निवृत्ति के लिए चला गया।

बौद्ध श्रमण भिक्षा समाप्त कर आराम करता रहा, तभी वज्जिय ने भीतर बुला भेजा। ताबूल का सेवन करते वज्जिय अकेला ही था। सुगध द्रव्यो की महक से सारा कक्ष सुवासित था। श्रमण भिक्षु धर्मो को त्याग प्रधान मत्री के यहाँ एक साधारण कर्मचारी के व्यवहार जैसे विनय के साथ नमस्कार कर खडा रह गया।

श्रमण ने मुख्यत सारगधर टीले वाले सघाराम की स्थिति का वर्णन किया। मल्लप्पा जबसे सघाराम मे चिकित्सा निमित्त भर्ती हुआ है, तबसे उस समय तक की सारी बाते समझायी। यह भी बताया कि उसी दिन रात को छ आदमी एक व्यक्ति को, जो शवाकृति मे था, बदी बना कर एक कोठरी मे डाल चले गये है।

मैंने उस आदमी का पता लगाने की बडी कोशिश की, पर पता लगा न पाया। राजकुमार मल्लप्पा की चोट दूसरे दिन ही भर गयी थी फिर भी वैद्य यह बताते हुए कि मल्लप्पा की स्थिति खतरनाक है निकट बधुओ को भी उसे देखने नही दे रहे है। किंतु सघाराम मे ठहरे हुये अनेक अश्व तथा आयुध व्यापारी बेरोकटोक रात्रि के समय मल्लप्पा से भेंट कर रहे है। घटो चर्चा कर रहे है। इस प्रकार की अनेक बाते श्रमण ने वज्जिय प्रेग्गडा को बतायी।

"सैंधव देशी अश्व व्यापारियो के सबध मे तुम्हारा क्या विचार है?" वज्जिय ने पूछा।

"वास्तव मे वे सिंधु देश के निवासी नही हैं। धारावर्ष के चक्रकूट के निवासी है। फिर भी उनका विवरण जानना मुश्किल मालूम होता है।

अलावा इसके मघाराम मे तान्त्रिक क्रियाएँ बढती जा रही है, ये क्रियाएँ मब मारगधर चैत्य के समीप मे हो रही है। वहाँ पर जब तब लोमडी, कुत्ते विविध पक्षियो के शव एव शल्यो को पहुँचा रहे है। मनुष्यो के कपाल भी पहुँचाये जा रहे है। देवताओ को तृप्त करने मधु भाण्डो का विस्तार पूर्वक प्रयोग किया जा रहा है। पुस्तकालयो मे स्थित शल्य तन्त्र की प्रतियाँ उतरवा रहे है। उन क्रियाओ का रहस्य गुप्त रूप से ग्रहण कर रहे ह। नगर की भूत-प्रेत इत्यादि घटनाओ का कारण वहाँ के तन्त्र ही है।"

वज्जिय ने सारी बाते सुन कर उपेक्षा पूर्ण स्वर मे पूछा—"नगर मे भूत-प्रेतो का क्या हाल है?"

"नगर मे हठात् अनेक घरो मे विचित्र-विचित्र व्याधियाँ व्याप्त हो रही है। सघाराम के भिक्षु उन व्याधियो के लिए प्रतिक्रियाएं करते हुये गरीबो मे विशेष आदर प्राप्त कर रहे है। सुनते है कि चीन यात्री महान सिद्ध इस वक्त कलिग मे हो जो विजय यात्रा के निमित्त अल्प काल मे राजेन्द्रपुर मे आने वाला है।"

"नगर के प्रमुख व्यक्तियो के घरो मे भी क्या ये भूत क्रियाएँ फैल गयी है?"

"पावुलूरि मल्लना की धर्म पत्नी मे भी भूत का आवेश हो गया था। वज्रकीर्ति नामक श्रमण चिकित्सा करने गया, पर मार खा कर लौट आया। उसके गाल भी फूल गये थे। इस बात पर श्रमण सब काना-फूसी कर रहे थे, पर असली बात का पता न लगा।"

"उस कोठरी मे बन्दी बनाया गया, व्यक्ति क्या जीवित है?"

"उस रात की धुधली चाँदनी मे मैं ठीक से देख न पाया। वह स्थूल काय है। कोठरी से उसकी चिल्लाहटे बराबर सुनाई दे रही थी, इसलिए मैं समझता हूँ कि वह जीवित है।"

इसी समय वैद्यो के यहाँ से सदेश आया। श्रमण को विदाकर वज्जिय चल पडा।

6

14

वज्जिय प्रेग्गडा की आहट पाकर हकले ब्राह्मण ने उसकी ओर आदर भाव से देखा। वज्जिय धीरे से प्रवेश करके हकले ब्राह्मण के पार्श्व मे एक आसन पर बैठ गया।

"सध्या वदन आदि काल-कृत्य हो चुके है न ?"

"मानसिक रूप मे अभी समाप्त हुये है।"

"तुम्हारा घाव कैसा है।"

"आपके दर्शन से वह पीडा मालूम नही हो रही है। यदि मैं तुमको सघाराम की वैद्यशाला मे भिजवा देता तो क्या सध्यावदन आदि निर्विघ्न पूरे हुये होते ?"

वज्जिय के अधरो पर मदहास छलक उठा। "कुछ जरूरी बातो पर चर्चा करने की सहन-शीलता रखते हो !"

'आप जैसे बुजुर्गो की सेवा मे रहते सहन-शीलता की कमी कैसे हो सकती है ?"

"इसके पूर्व कभी मुझे देखने की स्मृति रखते हो ?"

"तीस वर्ष पूर्व के काचीपुर का वृत्तात ही है न ?"

"मेरा पुत्र बहुधा तुम्हारी चर्चा किया करता है ! नारायण, यह प्रच्छन्न वेष तुमने क्यो धारण किया ?"

हकले नारायण घाव की ओर दृष्टिपात कर बोला—"आप देख तो रहे है ! यह आपके समक्ष ही घटित हुआ है। अगर मैं यह भेष न बनाता तो क्या आपके दर्शन होते ?"

"तुम्हारी पत्नी और पुत्री कहाँ ? सुरक्षित हैं न ?"

"मैंने उनको एक वर्ष पूर्व रामेश्वर की यात्रा पर भेज दिया था। वे दक्षिण देश की यात्रा समाप्त कर भीमेश्वर के दर्शन करने लौटते हुये इस समय तक मोटुपल्ली पहुँच गयी होगी। मेरे सदेश वाहक की प्रतीक्षा मे होगी।"

"क्या तुम यह जानते हो कि राजेन्द्र देव ने तुम पर बाण का प्रयोग नही किया ?"

"मुझे युवराज के बाण ने ही घायल बना दिया है !"

"युवराज के बाण के पूर्व ब्राह्मण-वृद मे किसने बाण छोडे है ? जानते भी हो ?"

"क्यो नही ? कामराज-पुत्र ने वे बाण छोडे थे। बेचारा वह भी ब्राह्मणो के प्रति श्रद्धा भाव रखता है ! वे दोनो बाण भी मेरी ही ओर आ रहे थे, एक राजभट ने बडी चतुरता से वेज के द्वारा उनको रोक दिया है।"

"तो तीसरा बाण का क्या हुआ ?"

"कामराज का पुत्र धनुर्विद्या मे पारगत है। दो बार उसके प्रयत्न के विफल होते देख उसने बडी निपुणता से युवराज को हिला कर अपने

मनोरथ की पूर्ति कर ली है। उसका कौशल प्रशसनीय है। परतु भाग्य की बात है कि वे विष बाण मेरे शरीर को भेद न पाये।"

"मेरा भी यही सदेह है कि वे दोनो बाण विष से बूझे हुये है। मैने उन बाणो को एक पेटिका मे सुरक्षित रखवाया है। यह तो बताओ कि जब तुम्हारे शत्रु ने तुमको पहचान ही लिया, तब यह भेष बदलने का क्या मतलब है ?"

"मुझे भी कुछ ऐसा ही लगता है।"

"काम तुमसे शत्रुता क्यो रखता है।"

"मै कुछ स्पष्ट रूप से समझ नही पा रहा हूँ। और गभीरता पूर्वक इस सबध मे विचार करना होगा। मेरे पूर्व प्रभु त्रैलोक्य मल्लदेव को उनका राज्य छोड कर यहाँ आना कतई पसद नही है।"

"मै तुम्हारी पत्नी और पुत्री को मोटुपल्ली से यहाँ तक सुरक्षित पहुँचवा दूँगा। तुम्हे भी एक यात्रा के लिए शीघ्र तैयार रहना सुख कर होगा।"

"जैसी आपकी इच्छा। परतु तीन वर्षो से मै अमात्य पद को त्याग कर विद्या सबधी कार्यो मे निमग्न हूँ। मेरा आशय है कि शेष जीवन भगवान के ध्यान तथा काव्य-पठन व लेखन मे व्यतीत करूँ।"

"इन कार्यो के लिए गोदावरी तट से बढ कर अनुकूल प्रदेश कोई दूसरा दिखाई नही देता।"

"इसी आशा से इतनी दूर आया हूँ। क्षमा कर दीजिये। मैंने निश्चय कर लिया है कि सदा के लिए मत्री-पद त्याग कर ब्राह्मण्य का ही आश्रय लूँ।"

"इसमे कोई आपत्ति न होगा।। कुमार श्रीराम के साथ तुमविश्वामित्र की भाति रहोगे, तो यही पर्याप्त है।"

"महात्माओ के साथ मेरी तुलना करना मेरे लिए लज्जा जनक प्रतीत होता है। फिर भी आपने आदेश नही दिया, बात क्या है!"

"चक्रकूट जानते हो ?"

"चक्रकूट क्या, भ्रमरकूट को भी जानता हूँ।"

"धारा वर्ष से परिचित हो ?"

हकला ब्राह्मण मदहास करते बोला—"मधुरानक देव, उनकी पट्ट महिषि नागल महादेवी को भी जानता हूँ। वहाँ पर राजमान्यता प्राप्त मेडिपात्र नामक ब्राह्मण है जो आपके पुत्र का सहपाठी है।"

"चक्रकूट की यात्रा के लिए तुम कितने दिनो मे सन्नद्ध हो सकते हो ?"

"एक सप्ताह के अन्दर।"

'वैसे कोई जल्दी नही, किंतु पहले तुम्हे घाव की उचित चिकित्सा करानी है।"

'जो आज्ञा! एक और निवेदन है कि एकादशी की रात्रि से मेरा एक अनुचर दिखाई नही दे रहा है। फारस के तैल-व्यापारियो के अभियोग मे वह प्रथम साक्षी है।"

"उसका नाम पोन्न तो नहीं है न ?"

"जी हाँ, पोन्न ही है।"

"क्या वह स्थूल काय व्यक्ति है ?"

"जी हाँ!"

"सघाराम मे उसके कोई विश्वास पात्र व्यक्ति है ?"

"मै क्या बताऊँ ? जेतारीनाथ उसका परम शत्रु है ।"

"सुजाता कौन है ?"

"मैं तो यह नाम नही जानता । लेकिन इतना तो जानता हुँ कि पोन्न की पत्नी अपने पति को त्याग कर सघाराम मे उपासिका बनी है ।"
"अच्छी बात है ! आज सवेरे तक यदि पोन्न जीवित रहा तो मै उसकी सुरक्षा का उचित प्रबध करुँगा ।"

वज्जिय प्रेग्गडा ने बार-बार नारायण भट्ट को विश्राम करने की सलाह दी और कहा—

'विवश हो कर मुझे कहना पड रहा है । युवराज पर ब्रह्म हत्या की अफवाह फैलायी गयी है । मेरी समझ मे नही आता कि यह अफवाह कैसे दूर कर दी जाय ।" ये शब्द कहते, वज्जिय ने नारायण भट्ट की देह का स्पर्श किया । फिर धीरे से चला गया । नारायण भट्ट नयन मूंदे शात लेटा रहा । कह नही सकते कि वह सो रहा था अथवा विचार मग्न था ।

15

हकला ब्राह्मण बाणाघात पाकर जिस रात को वज्जिय प्रेग्गडा के भवन मे चिकित्सा पाने गया, उसी रात को सारगधर के टीले के पास स्थित सघाराम मे लोगो की भीड जमा हो रही थी। यह समाचार सर्वत्र व्याप्त हो गया था कि गाथा प्रवण नाम से प्रसिद्ध एक नागराज उस रात को गाथा सुनाने वाला है।

गाथा-श्रवण के निमित्त कितने हजार लोग जमा हुये थे, कहना सभव न था। सघाराम के गोपुर द्वार के सामने एक ऊँची वेदिका बनायी गयी थी। उस के दोनो तरफ पखो की भाति वेदिका बढायी गयी थी। उसके एक एक मे ऊँचे आसनो पर जेतारीनाथ, वज्रकीर्ति, इत्यादि बौद्ध भिक्षु उपविष्ट थे। दूसरी तरफ उचित आसनो पर रार्पति बेतया वगैरह राष्ट्र कूट प्रमुख थे। यवनिका पर भाति-भाति के वर्णों से तीन चित्र अकित थे। मध्य भाग मे बोधि वृक्ष, दक्षिण पार्श्व मे धर्म-चक्र तथा वाम भाग मे बुदबुदाकृति वाला चैत्य ।

प्रेक्षको मे धनी, निर्धन, उच्च वर्ण, पहाडी, म्लेच्छ इत्यादि भेदभाव के बिना सब समान रूप से पृथ्वी पर बैठे थे। क्योकि गाथा श्रवण के समय देश, जाति, वर्ण, अर्थ इत्यादि की व्यवस्था न होती है, उपस्थित जन समुदाय मे मजदूर, शिल्पी, जुलाहे, आयुध तैयार करनेवाले, चित्रकार,रथकार खनक तथा वीर भट अधिक थे, कुछ लोग अपने घर से चादर, चटाई

वगैरह लाकर उन पर बैठ गये थे, कुछ लोग अपनी शाल बिछाकर बैठ गये, पर अधिकाश लोग जमीन पर बैठे थे ।

नारियो के लिए कोई अलग व्यवस्था न थी, फिर भी जहाँ-तहाँ नारियाँ दल बाँधकर बैठ गयी थी, इसलिए उनके चारो तरफ थोडी-सी जगह छोड कर पुरुष बैठे थे ।

वेदिका के चतुर्दिक सुदर मशाल लिये अनेक नागिने परिवेष्टित थी । उन के शिरोज नागो की भाति लबे थे, उन पर काच के मनके सजाये गये थे । सर पर फण फैलाये नाग जैसा कोई आभूषण प्रत्येक नागिन पहने हुये थी । उन के कानो पर बोझीले ताटक, कठ मे बडे बडे गढे काच के मनको की मालाएं, मणि बधो मे ककण, पैरो मे सुदृढ मजीर भी धारण किये हुये थी ।

नागिनो के मशालो की रोशनी मे वेदिका आलोकित थी सारी जनता खुले मैदान मे बैठी थी, जहाँ चाँदनी फैली थी ।

इसी समय सघाराम के मध्य भाग से एक सुदर घटारव सुनाई दिया उसी समय तीन नागराज घुघरू की आवाज करते वेदिका के पिछले भाग से उछल कर कूद पडे ।

उन मे मुख्य व्यक्ति मध्य भाग मे था । वह फण फैलाये तीन सरो-वाले नाग की आकृति का उष्णीष धारण किये हुये था, जिस पर रत्न चमक रहे थे । उस के कानो मे हीरे के ताटक करदीपिका की रोशनी मे चम-चम कर चमक रहे थे । उस के कठ मे रत्नखचित 'स्वर्ण पट्ट लटक रहा था । इनके अलावा केयूर, ककण भी पहने हुये था । उस का वस्त्र साप की केचुली से निर्मित प्रतीत हो रहा था । उसके दाये हाथ मे तबूरा जैसा कोई तत्रीवाद्य था, बाये हाथ की उगलियो मे झकार करनेवाले कासे के वलय थे । बाकी दोनो के वेष भी पहले का अनुकरण कर रहे थे,

किंतु उनके सर पर एक फणवाले सर्प ही थे। उनके आभूषण भी मूल्यवान न थे, उनके हाथों मे घट थे।

ऐसा लगता था कि ये तीनों नागलोक से ऊपर उड कर आये हुय साक्षात् नागराज हों। उन लोगों ने मच पर प्रवेश करते ही दक्षिण भाग मे उपविष्ट श्रमण समुदाय को झुककर प्रणाम किया, तदनतर राष्ट्रकूट प्रमुखों को तथा अत मे जन समुदाय को प्रणाम किया।

प्रधान नाग राज ने सर उठा कर प्रार्थना प्रारभ की। जनता मत्र-मुग्ध सी निश्शब्द रह गयी—

"धर्म ही धरित्री का मूल है,
धम्म शरण गच्छामि !
भूचक्र मे बुद्ध के उपदेश,
बुद्ध शरण गच्छामि !
मघ ही बोधि का समाश्रयस्थल है,
मघ शरण गच्छामि।"

पार्श्व के लोगों ने ताल देना शुरू किया। अचानक सारी सभा मे सौगत धर्म का आवेश हुआ। "देवाना प्रियदर्शि की गाथाएँ दिव्य लोग जो सुनते है, नागलोक मे नागराज ही वह नाद जो सुनते हे, देवाना प्रियदर्शि की गाथाएँ तिमिर को भगाती है अन्य गाथाओं का स्मरण न करो, धर्म-च्युत होगे।

धम्म शरण गच्छामि,
बुद्ध शरण गच्छामि,
सघ शरण गच्छामि।

चण्डाशोक के पराक्रम की गाथा सुनिये। धर्माशोक की दयाद्रशीतल दानों का लेखा सुनिये। धम्म ही धरित्री का मूल है—

"धम्म शरण गच्छामि,
बुद्ध शरण गच्छामि
सघम शरण गच्छामि!"

प्रधान नागराज नाग नृत्य का अनुकरण करते उछलते, आगे-पीछे की ओर झुकते, लयानुसार थिरकते गाथा सुना रहा था। बाकी दोनो घट बजाते उसके साथ घूमते गाने मे साथ दे रहे थे।

वह गाथा गद्य-पद्य मिश्रित चपू था। नागराज का कठ अपूर्व था। अतिम पक्ति मे बैठा व्यक्ति भी उस का कठ स्पष्ट सुन रहा था।

उस रात्रि को नागराज ने जगद्विख्यात सम्राट अशोक की गाथा सुनायी। बिदुसार मगध का सम्राट था। उस की पत्नी सुभद्रा नामक एक ब्राह्मण वनिता थी। वह अनुपम सुदरी थी। सभी रानियो मे बिदुसार के लिए वही प्रिय थी। उस के गर्भ से ही अशोक का जन्म हुआ। अशोक विकृत आकार वाला था। अत सुभद्रा के प्रति बिदुसार के मन मे घृणा पैदा हो गयी। वह कुमार अशोक को कभी अपने पास तक पटकने नही देता था। इसलिए बिदुसार ने अपने अवसान काल मे अशोक को दूर तक्षशिला भेजा और दूसरी रानी के पुत्र सुषीमुनि को युवराज बनाया। इस के बाद बिदुसार परलोक वासी बना।

अशोक को जब राजधानी का समाचार मिला, तब वह बहुत ही क्रोधित हो उठा। तुरत वह प्रचण्ड सेना को लेकर पाटलीपुत्र पहुँचा। पहले उसने युवराज सुसीमुनि का वध किया, उसके बाद अपने निन्यानवे भाइयो को सपरिवार वध कराया। मगध मे अशोक के परिवार का रक्त नदिया बनकर बहने लगा।

"उफ! कैसे सुनाऊँ" यह गाथा मैं। राज रक्त मे रजित हुआ है यह राज्य सारा। राजाशोक की राक्षसी चेष्ठाए वर्णन के बाहर है। ओह!

"धम्म शरण गच्छामि ।
बुद्ध शरण गच्छामि,
संघ शरण गच्छामि !"

जनता भी ताल देते त्रिशरणो का आलाप करने लगी ।

"अशोक इस प्रकार अपने शत्रुओ का वध कर वह स्वय मगध की गद्दी पर बैठा । राज गुरु राधागुप्त ने तब क्या किया । जानते है ?–

अशोक को अत्युन्नत सिहासन पर बिठाया । वेद विद विप्रो का वृन्द साधुवाद करने लगा । अमोघ मत्रो के साथ आशीर्वचन भी दिये ।"

राष्ट्रकूटो की भृकुटियाँ तन गयी । रार्पति बेतया पलभर के लिए विचलित हो उठा । फिर सभल गया । किसीने इस पर ध्यान न दिया ।

नागराज ने अशोक की दिग्विजय यात्रा का वर्णन किया-

"काभोज, काश्मीर, गाधार, पाचाल, सिंधु, मालव, गूर्जर, महाराष्ट्र पुलिद देशो को अशोक ने क्रमश जीत लिया । तदनतर अग, वग आन्ध्र देशो पर भी अधिकार कर लिया । कलिग ही कटक बना खडा रहा ।

"धम्म शरण गच्छामि,
बुद्ध शरण गच्छामि
संघ शरण गच्छामि !"

"उस कलिग-प्रभु का बल क्या बताऊँ ।'

नागराज ने कलिग राज्य की सेना की बडी प्रशसा की और कहा । कलिग राजा की शक्ति और बल उस की सेना की अपेक्षा 'पुरी' मे है ।

भुवन मे यश प्राप्त बुद्धालय जहाँ है,

तथागत का श्रीदन्तधातु नामक धन जहाँ है, वही जगन्नाथ नाम से जगत प्रसिद्ध व पूज्य हुआ है।

धम्म शरण गच्छामि,
बुद्ध शरण गच्छामि,
सघ शरण गच्छामि।

मगर महान सैन्य-बल पर इतराने वाला कलिग राजा इस महान धन को भूल गया है। गज, अश्व, पदाति, मित्र तथा आयुध बल पर भरोसा रखकर कलिग राजा ने अशोक के समझौते का तिरस्कार किया। इस पर क्रुद्ध होकर अशोक ने कलिग पर भयकर आक्रमण किया-उस समय कलिग के सारे गाव जलाये गये, सघाराम मटियामेट किये गये शिशु, वृद्ध व नारिया बदी बनायी गयी। अशोक की उन असुर चेष्टाओ को देख मानो आकाश भी रो पडा।

इस प्रकार सारे कलिग मे सघाराम, चैत्य, विद्यालय, वैद्यशालाओ, सरायो तथा कोने-कोने मे स्थित श्रमण अशोक के घातुक कृत्यो की आहुति हुये। जो शेष रहे, वे बन्दी हुये। अत वे सब राजकुमारी कारुवाकी के साथ पाटली पुत्र ले जाये गये।

उन मे गुप्त नामक एक बौद्ध गुरु था। अशोक के अनुचरो ने उसे नाना प्रकार की यातनाएँ दी। फिर भी वह शात व निश्चल भाव से उन कष्टो को झेलते निरतर त्रिशरण का जाप करता रहा-

धम्म शरण गच्छामि,
बुद्ध शरण गच्छामि,
सघ शरण गच्छामि।

जनता मे उत्साह उमड पडा। कुछ लोग अतिशय दुख के कारण अश्रुवृष्टि करने लगे। नागराज ने कथा आगे बढायी—

"आचार्य उपगुप्त के साहचर्य से सम्राट अशोक के हृदय मे क्रमश परिवर्तन होने लगा। उसने जो जधन्य कार्य किये थे, वे सब दु स्वप्नो की भाति प्रत्यक्ष होने लगे। इन मानसिक यातनाओ से परेशान हो कहा करता था कि दुश्मन को भी ऐसी यातनाए प्राप्त न हो।

इन यातनाओ से मुक्ति पाने के लिए अशोक ने अपने दरबारी ब्राह्मण पडितो को बुला भेजा और इस की निवृत्ति का मार्ग पूछा। ब्राह्मणो ने गभीरता पूर्वक विचार करके सुझाया कि श्रीरामचन्द्र, युधिष्ठिर इत्यादि की भाति अशोक भी अश्वमेध यज्ञ करे।

इस पर अशोक चौक पडा और बोला—"हिसा से मुक्ति पाने के हेतु मै पुन हिसा नही कर सकता!" इन शब्दो के साथ ब्राह्मण पडितों को दरबार से भगा दिया। दूसरे ही क्षण राजोचित आदर के साथ आचार्य उपगुप्त को सभा मे बुला भेजा। आचार्य उपगुप्त से उपदेश पाकर अशोक ने सारे राज्य मे जीव-हिसा बद करवा दी। यज्ञ सब बद हुये। तदनतर अशोक ने भगवान बुद्ध की पवित्र अस्थियो के हेतु सारे राज्य मे खोज करवायी। एक वृद्ध भिक्षु ने बताया कि जब वह युवक था, तब उसके आचार्य ने उसे एक जगल मे जाकर एक प्रदेश की वदना करायी।

सम्राट अशोक ने आचार्य उपगुप्त की आज्ञा पाकर उस प्रदेश को खुदवाया।

अशोक ने उन्ही अस्थियो की पूजा करायी। राज्य-भर मे दस लाख चैत्यो का निर्माण करवाकर उन मे बुद्ध धातुओ को निक्षिप्त कराया। ऐसे चैत्यो मे से सारगधर टीले पर स्थित चैत्य भी एक है।

इसी प्रकार के चैत्य आन्ध्र मे धरिणिकोट, श्रीशैल, भट्टिप्रोलु, घट-साला, विजयवाडा, मगलाद्रि, शोभनाद्रि, नागार्जुन कोडा, कोलनिपाक इत्यादि प्रदेशो मे हैं।

अशोक ने अपने राज्य मे ही नही, बल्कि त्रिविष्टप, चीन, ब्रह्म, मलया, यव द्वीप, सुवर्णद्वीप, सिहल, फारस, बर्बर, सूर्योदय राज्यो मे भी बौद्ध धर्म का प्रचार करने के निमित्त भिक्षुओ को भेजा।

इन कारणो से चण्ड अशोक धर्म अशोक बन गया। यह केवल बौद्ध धर्म का ही प्रभाव था। तब से अशोक देवाना प्रियदर्शी नाम से प्रसिद्ध हुआ। प्रेम, दया, इत्यादि पवित्र भावो से राज्य का शासन किया।

धर्म अशोक की कीर्ति चतुर्दिक व्याप्त हो गयी। इस प्रकार नागराज अपनी कथा समाप्त करने को ही था कि इतने मे सघाराम से चिल्लाहटे सुनाई पडी-"चोर, चोर। पकडो।"

सभी लोग शोर मचाते सघाराम मे दौडे।

जेतारीनाथ के साथ बौद्ध भिक्षु, रापति बेतया के साथ राष्ट्रकूट सघाराम के भीतर दौड पडे। चोर उस कोठी मे घुस गये थे, जहाँ पर अमूल्य रजत, स्वर्ण व रत्न इत्यादि सुरक्षित रखते है।

जॉच करने पर पता चला कि वह बलिष्ठ द्वार बडी युक्ति से हटाया गया था। भिक्षुओ ने सब वस्तुओ की जाच कर बताया कि किसी भी वस्तु की चोरी नही गयी है। फिर भी बेतया ने भाप लिया कि बौद्ध भिक्षु इस प्रकार व्यग्रता के साथ ढूँढ रहे हैं मानो कोई कीमती वस्तु खो दी हो। बेतया के पूछने पर उन लोगो ने यही बताया- "कुछ नही कुछ नही।"

सूक्ष्मता के साथ बेतया ने परिशीलन कर दो पत्र, एक जीर्ण पीत वस्त्र, दो आयस साधन प्राप्त किये। उन पर अपनी मुद्रा अकित कर राजभटो के हाथ सौंप दिया।

जनता चोरो की इस विचित्र करनी पर चकित हुई। यह सोच कर सघाराम की महिमा का गान करते घर लौटी कि पवित्र बौद्ध भिक्षुओ की सपत्ति को हरना चोरो के लिए भी सभव न हुआ। कुछ लोग नागराज की सुनाई कथा की प्रशसा करते अपने अपने घर लौटे।

16

वेगी राज्य का विदेशों के साथ नौका व्यापार होता था। पूर्वी समुद्र तट पर कृष्णापट्टणम, कोत्तपट्टणम, मोटुपल्लि, वेलापट्टणम, मोमल पट्टणम, विशाखपट्टणम, भीमुनिपट्टणम वगैरह प्रमुख बदर-गाह थे। विशाखपट्टणम तथा भीमुनिपट्टणम कलिंग तथा वेंगी राज्यो की सीमा पर थे, अत इन दोनो राज्यो के सघर्ष के कारण इन बदरगाहों का विकास न हो पाया। वेगी राज्य का सबसे प्रसिद्ध बदरगाह मोटुपल्लि था। यह बदरगाह चोळ राजाओ के नागपट्टणम तथा उत्तर के ताम्रलिप्ति के साथ व्यापार के वैभव मे समता रखता था। राज राजनरेन्द्र के खजाने का छठवाँ हिस्सा मोटुपल्लि के व्यापार से ही प्राप्त होता था।

मोटुपल्लि दो भागो मे विभक्त था। दोनो भागो के बीच एक विशाल नदी बह रही थी, उस नदी के पूर्व मे स्थित भाग वेलापुरी या वाडरेवु नाम से प्रसिद्ध था। उसका पशिचमी भाग ही मोटुपल्लि था।

इस बदरगाह मे एक हजार यात्री वाले विशाल जहाज भी ठहर सकते थे। रात के समय जहाजो को सूचना देने के निमित्त दोनो छोरो पर दो ऊँचे दीप स्तम्भ थे। वे स्तम्भ शत्रुओ की नावो के आगमन की परीक्षा के भी काम देते थे।

जहाज के माल पर शुल्क वसूल करने के निमित्त दिन-रात अधिकारी सजग रहते थे। व्यापार सबधी नियम, विविध वस्तुओ पर वसूल

किये जाने वाली दर, इत्यादि सूचित करनेवाले शिला स्तम्भ स्थापित थे ।

वेलापट्टणम तथा मोट्टुपल्लि का व्यापार भारतके अन्य बदरगाहो के साथ ही नही, अपितु चीन, यवद्वीप, सुवर्णद्वीप, मलया, कदरम, श्री विषय इत्यादि के साथ भी व्यापार होता था । जब-तब यवन, रोम, फारशीको की नाव भी आया करती जिनमे उत्तम जाति के घोडे निर्यात होते थे ।

वाडरेवु मे अनेक विदेशियो ने अपने स्थिर निवास बना लिये थे । उनके विशाल भवन थे जिनमे माल सुरक्षित रखा जाता था । यवनो की एक बस्ती थी, जहाँ श्वेत वर्ण वाली नारियाँ प्रजा को आकृष्ट करती थी ।

इनके अतिरिक्त मोती, सोना व रत्नो के व्यापारी ही नही, बल्कि सुगध द्रव्यो के व्यापारी, बढई, लुहार, जुलाहे, पानवाले, नाविक, अनाज बेचनेवाले व्यापारियो की सख्या भी कम न थी। वेलापट्टणम मे जैन वसति, बौद्ध सघाराम, गिरजाघर, अरबो का प्रार्थना मदिर भी थे ।

मोट्टुपल्लि का निर्माण बडी ही योजना—बद्ध हे । इस नगर के मध्य भाग मे एक जल-दुर्ग है । उसमे 'नौकाध्यक्ष' निवास करता है । वही वेगी राज्य के समस्त बदरगाहो का अधिकारी होता है । उसकी अनुमति के बिना समुद्रयान क्या नदी तरण भी नही करना चाहिये । बदरगाह की रक्षा के निमित्त उसके अधीन मे अनेक नावे है । समुद्र मार्ग से दुश्मन के आने पर सामना करने के लिए भारी सेना है । नौकाध्यक्ष का पद महा मण्डलेश्वर के पद के बराबर होता है ।

दुर्ग के भीतर और बाहर भी सूर्य-चन्द्र मार्ग मनोहर ढग से निर्मित है । नियत स्थलो पर उद्यान, तडाग, कुएँ भी है ।

केन्द्र स्थानो मे राजभटो के निवास हैं । पशु और मानवो के लिए अलग-अलग वैद्यालय है । पशु वैद्यालय को 'सहदेवशाला' नाम से अभिहित किया जाता था ।

नगर के मुहल्ले भी जाति व पेशे के आधार पर वसे है। दुर्ग के चतुर्दिक अश्व व गजशालाएँ है। दुर्ग के द्वार पर घटिका यँत्र है।

दुर्ग के समीप मे शिव व विष्णु के मदिर है। शिवमदिर समुद्र की ओर मुख किये हुये है, विष्णु का मदिर दुर्ग की ओर अभिमुख किये है।

मोटुपल्लि के दोनो शाखो को मिलाने वाले दो विशाल पुल है। अनेक स्थलो पर नदी मे उतरने के लिए सीढिया बनी हुई हे।

मोटुपल्लि मे कई विशाल राजपथ है। एक मार्ग विक्रमसिंहपुर से होते हुये काचीपुर तक है तो दूसरा अमरावती, श्रीशैल, केदनबोल से होते हुये पश्चिम मे कल्याण कटक पहुँचा देता है। एक तीसरा मार्ग है, जिसके द्वारा धनदुप्रोलु, भट्टिप्रोलु, वेल्लटूरु, श्रीकाकुलम, वेगीपुर से होते हुये राजमहेन्द्रपुर ईशान दिशा की ओर जा सकते है। सेना बहुधा इन्ही मार्गो द्वारा चलती है, अत ये सेना-मार्ग कहलाते हैं। सार्थवाहु इन्ही मार्गो पर अपने सार्थो को ले जाते है।

इस नगर मे अनेक धर्मशालाएं है। उनमे छोटी व बडी धर्मशालाएँ भी है। एक छोटी धर्मशाला मे एक सप्ताह से एक नारी अपनी नौ वर्ष की पुत्री के साथ ठहरी हुई है। यह धर्मशाला ब्राह्मणवाटिका मे है।

उस नारी व लडकी की परिचर्या के निमित्त दो सेवक नियुक्त है। वे दोनो दिन-रात नगर के दोनो भाग घूमते रहे है, पर किसी भी वस्तु से वे आकृष्ट नही हो रहे है। ऐसा लगता है कि वे नगर वास के अभ्यस्त हो। वे लौटकर उस नारी से ये ही शब्द कहा करते थे—"दिखाई नही दिये।" पर कौन ?

वे कर्नाटक के प्रवासी आन्ध्र मालूम होते थे। उनकी वेष-भूषा, इत्यादि से कुतल देश का स्मरण ताजा हो उठता था। उनके वस्त्र कीमती थे, पर आभूषण कम थे।

उस नारी का नाम सोमिदेवी है । पुत्री का नाम कुपमा है । कुपमा दक्षिण देश की यात्रा की विशेषता बार-बार अपनी माँ मे बता रही है, वह कभी पूछ बैठती- "बाबूजी को हम कब देखेंगे । " माँ को चिंतित देख कुपमा प्रसग बदल देती ।

माँ ओर पुत्री ने दक्षिणी यात्रा मे कन्याकुमारी के दर्शन कर, सेतु स्नान के साथ रामेश्वर की पूजा की है । मदुरा मे मीनाक्षी, तजाऊर मे बृहदीश्वर तथा काची मे कामाक्षी की वदना की है । निरुमलै मे बाला त्रिपुर सुदरी की अर्चना की है । हाल ही मे विक्रमसिंहपुर मे शेषशायी के चरणो की वंदना की है । वहाँ से कृष्णापट्टणम बदरगाह पहुँचकर नौका द्वारा यात्रा करके मोटुपल्लि मे आ उतरी है ।

श्रीरामनवमी के दिन विष्णु के मदिर मे उत्सव देखने सोमिदेवी तथा कुपमा पालकी पर गयी । उसके उपरात शिवमदिर के दर्शन कर धर्मशाला को लौट आयी । वे श्रीकाकुल देव, कनकदुर्गा तथा भीमेश्वर के दर्शन करने की उत्कठा रखती थी ।

एकादशी की शाम को भी नौकर निराश भरे नयनो से लौट आये । लेकिन उनमे से एक ने निवेदन किया कि दूसरे दिन सुबह वहाँ से एक सार्थ राजमहेन्द्रपुर के उत्सव मे भाग लेने शीघ्र जाने वाला है ।

यह समाचार सुनकर सोमिदेवी ने उस सार्थ के साथ निकलने का निश्चय किया । नौकरो ने सार्थवाह को अपने नाम आदि का ब्यौरा देकर यात्रा के लिए एक पालकी, एक खच्चर तथा दो घोड़े तैयार किये ।

17

दूसरे दिन प्रात काल वह सार्थ यात्रा पर चल पड़ा। चूँकि वह मोटुपल्लि से ही निकल रहा था, इसलिए सख्या कम थी।

सुवर्ण द्वीप से सुगन्ध द्रव्य लाये व्यापारियो के आधिपत्य मे यह यात्रा हो रही थी। ऐसे सार्थ के साथ व्यापारियो, तीर्थ-यात्रियो तथा अन्य कार्यो पर जाने वाले भी यात्रा किया करते है। वह सार्थ ऐसा लगता था, मानो एक नगर ही चलता-फिरता हो।

सार्थ के चलते वक्त वह एक सर्पाकृति मे होता है। उसकी लम्बाई एक योजना की दूरी होती है।

प्रत्येक सार्थ का एक सर्वाधिकारी होता है। उसको सार्थवाह कहते है। वह यात्रा का प्रदेश व कई भाषाओ का ज्ञाता होता है। उसके अधीन कई भट होते है। सार्थ के लोगो के अल्प अपराधो पर दण्ड देने का उसे अधिकार होता है। बडे अपराध होने पर अपराधियो को राजभटो के हाथ सौप देता है।

सार्थ मे शामिल होने वाले प्रत्येक व्यक्ति को निर्णीत स्वर्ण अथवा व्यापारी हो तो माल के अनुरूप हिस्सा सार्थवाह को देना पडता है। सार्थ-वाह सार्थ के यात्रियो की यात्रा के लिए आवश्यक सुविधाएँ कर देता है। मार्ग मध्य मे पडावो पर भोजन, इलाज आदि का वही प्रवन्ध करता है और

रक्षा के निमित्त भटो की नियुक्ति करता है। यात्रियो का धन वह अपने पास सुरक्षित रखता है। यात्रियो की बीच-बीच मे निगरानी रखता है ताकि कोई छूट न जाय। अगर सार्थवाह अपने इन कर्तव्यो का पालन नही करता है तो वह राजदण्ड का पात्र होता है।

सार्थो के साथ बोझ ढोने नौकर होते है, आवश्यक वस्तु बेचने के लिए व्यापारी होते है। यात्रियो के विनोदार्थ मनोरजन का कार्यक्रम होता हे। साथ ही सार्थ मे चलनेवाले धनियो के धन को हड़पने के लिए आसपास के गाँवो से कई लोग सार्थ मे मिल जाते है। इसलिए चोरो से आवश्यक सुरक्षा का प्रबध सार्थवाह किया करता है।

उस सार्थ के साथ सोमिदेवी तथा कुपमा भी चल पडी। अपने सेवको के साथ दुपहर को चेरुकूरु पहुँच गयी। वह एक बडा गाँव है। उसमे नित्य अग्निहोत्र करनेवाले तथा वेदविद ब्राह्मणो के हजार घर है। सोमिदेवी को मालूम हुआ कि उनमे एक सोमयाजी आप्तोर्याम नामक महाग्नि चयन कर रहा है। कर्नाटक मे रहते समय उसने एक भी यज्ञ न देखा था। दक्षिणी यात्रा के समय उसने मार्ग मे अनेक यज्ञ कर्म देखे थे। उसके मायके मे तीन पीढियो पूर्व एक व्यक्ति ने अग्नि स्टोमम किया था। तब से उस परिवार मे सोमिदेवी नाम चला आया। उसके ससुराल मे भी तीसरी पीढी के कचन सोमयाजी ने अग्निस्टोमम किया था। उसमे अपने नाम को सार्थक बनाने की आकाक्षा थी।

यज्ञ का समाचार सुनते ही वह अपनी पुत्री को साथ ले यज्ञशाला को देखने गयी। आह्वनीय कुड की स्थापना हो चुकी थी। कहा जाता हे कि इस के उपरात रुद्ररूप में महाग्नि का वहाँ पर आविर्भाव होता है। वह रुद्र सद्य: जन्मे गोवत्स की भाति क्षुधापीडित हो भागधेय की कामना कर बैठेगा। तब बकरी के दूध से शत रुद्रीय के साथ छे होम करते है। पहले अधर्व तीन होम करता है, तदनतर यज्ञवाहक तीन होम करता है।

सोमिदेवी के पहुँचते-पहुँचते रुद्राविर्भाव हो चुका था। उसका शरीर आनद से पुलकित हो उठा। उसे पुत्र नही हुआ था। यज्ञ करने वाला भी उसीके गोत्र का था—हारीत गोत्र। तुरत उसने साढे तीन सौ मुद्राएँ यज्ञ भिक्षा के रूप मे दक्षिणा मे समर्पित की। उस जून उसने अपनी पुत्री व सेवको के साथ यज्ञेश्वर का प्रसाद ही ग्रहण किया।

अपने पूर्वजो की निवास भूमि वेगी राज्य मे प्रवेश कर यज्ञशाला मे रुद्राविर्भव के दर्शन करने पर उसे अत्यत शुभ मालूम हुआ। उस दिन शाम को वे लोग धनदुप्रोलु पहुँचे।

वहाँ पर एक ही स्थान पर एक सौ आठ शिवलिंग है। उस आलय मे सब का अभिषेक एकही समय होता है। अभिषेक के समय सभी देवालयो का तीर्थ एक छोटे झरनेका रूप धारण करता है। सोमिदेवी जब शिव-दर्शन के निमित्त वहाँ पहुँची, तब बडी देरी हो गयी थी, उसने दूसरे दिन प्रातःकाल वही रहकर रुद्रा-भिषेक कराना चाहा और यह बात उसने सार्थवाह के भटो को सूचित भी कर दी।

अभिषेक के सयय धनदुप्रोलु के देवालयो का वैभव धनदुपर का स्मरण दिला रहा था। अभिषेकानतर भोजन व विश्राम समाप्त करके चल पडे। शाम तक वे भट्टिप्रोलु पहुँचे।

भट्टिप्रोलु एक समय महानगर था, पर कालातर मे उसके सघाराम के साथ नगर का अवसान भी हो गया। उस सघाराम मे एक महा चैत्य तथा दो छोटे चैत्य है। महाचैत्य मे तथागत की देह धातु सुरक्षित है। अत यह बौद्धो के लिए पुण्यतीर्थ है। उस का आवरण सुदर शिल्पो से नयनाभिराम था।

सार्थ जब मोटुपल्लि मे रवाना हुआ, छोटा था पर धनदुप्रोलु पहुँचते वह विस्तार हो गया। वहाँ से भट्टिप्रोलु तक अनेक नये यात्री सार्थ मे मिलते रहे। सार्थ भी बढता गया।

भट्टिप्रोलु मे मघाराम के दर्शन करने के हेतु सुवर्ण द्वीप से अनेक बौद्धयात्री इसी मार्थ मे आये थे। अत वे सब भट्टप्रोलु मे रुक गये, किंतु नये लोग उसमे पुन शामिल हुये।

भट्टिप्रोलु से एक कोस की दूरी पर वेल्लट्टरु है। वहाँ पर सार्थ को कृष्णानदी को पार करना होगा। वही पर सार्थ के यात्रियो की जाँच होती है कि सब फिर से दल मे आ गये कि नही। दूसरे किनारे पर पहुँचते ही श्रीकाकुलम क्षेत्र मे फिर एक बार जाँच की जाती है।

यात्रा चल रही थी। कहार पालकी ढोते-ढोते थक गये थे। उस प्रदेश मे ताड के पेड अधिक थे। कहारो ने बताया कि वे थोडा विश्राम करना चाहते है, उनकी भाषा मे विश्राम करने का मतलब ताडी पीना है। सोमिदेवी उन्हे रोक न सकी।

कहार विश्राम कर रहे थे, तभी सोमिदेवी के डेरे पर नादिये का जोडा विनोद का प्रदर्शन करने लगा। नादिये का मालिक उसे सोमिदेवी के निकट लाया, उससे नमस्कार कराया, गीत गाते नादिये से विनोद कराने लगा। सोमिदेवी ने नादिये के खेलो पर प्रसन्न हो एक रेशमी साडी फेक दी।

थोडी देर बाद कहार दुगुने उत्साह से पालकी उठा कर चल पडे। सेवक अश्वो पर साथ चलने लगे। खच्चर भी चला आ रहा था।

चाँदनी छिटक रही थी। सोमिदेवी की पालकी वेल्लटूर के करीब करीब निकट पहुँचने वाली थी। दूर पर दीप और यज्ञ का धूम दिखाई दे रहे थे। मार्ग मे एक पुराना वट वृक्ष था। यह जनश्रुति थी कि वहाँ पर अक्सर चोरियाँ हुआ करती है। इसलिए उसे चोरों का वट कहते है। अधेरा फैलने पर लोग बडी सावधानी से चोरो के वट से गुजरते थे।

सोमिदेवी की पालकी जब वहाँ पहुँची, एक दम अधकार फैल गया था। चाँदनी तो छिटक रही थी किन्तु वृक्षो की घनी छाया मे चाँदनी की किरणे घुस नही पाती थी। खच्चर पीछे रह गया था। विचित्र बात तो यह थी कि सार्थ के लोग आगे व पीछे भी कुछ दूर हो गये।

चोरो के वट के पास पहुँचते ही अचानक पिशाचो की पुकारे सुनाई देने लगी। एक साथ बरगद की जटाओ मे से भयकर आकृति के पिशाचो की झुड पालकी को घेर गयी। कहार सब भय के मारे पालकी को छोड वहाँ से भाग खडे हुये। दोनो तरफ के दो सेवको को पिशाचो ने गदाओ से वार किया। वे दोनो नीचे गिर पडे।

सोमिदेवी तथा कुपमा यह दृश्य देख बेहोश हो गयी। पिशाच उस पालकी को उठा कर कही भाग गयी।

सार्थ के पीछे के लोग जब वहाँ पहुँचे तब पालकी का पता न था, बल्कि दो सेवक बेहोशी की हालत मे पडे थे। सार्थ रक्षको ने घटना-स्थल पहुँच कर उनकी समस्त वस्तुओ के साथ खच्चर, घोडे व सिपाहियो को वेल्लूटूर के एक सुरक्षित केन्द्र मे पहुँचा दिया। वैद्य सेवको का इलाज कर रहे थे, पर उस रात को वे होश मे न आये।

उसी दिन राजमहेन्द्रपुर मे बाणाघात से घायल हो नारायण भट्ट वज्जिय के भवन मे चिकित्सा पा रहा था।

18

नारायण बाणाघात से कमजोर हो गया था, इसलिए उसे बडी अच्छी नीद आयी। उसने सवेरे नयन खोलकर देखा तो सेवक पोन्न विनय प्रदर्शित करते सामने खडा था।

नारायण को पल भर के लिए अपनी आँखो पर विश्वास न हुआ। पुन नेत्र मूद कर सोचता रहा। नयन खोल कर देखता क्या है, पोन्न आँसू बहाते नारायण के चरणो का स्पर्श प्रणाम कर रहा है। नारायण का हृदय द्रवीभूत हो उठा। उसकी आँखे गीली हो गयी। गद्गद् स्वर मे बोला–"पोन्न।" पोन्न जोर से रो पडा।

पोन्न का शरीर स्थूल एव कर्कश है। किंतु इस वक्त उस का सारा शरीर छोटे-छोटे घाँवो से भरा हुआ था। कई जगह शरीर फूल गया था। एक आँख भी लाल थी।

"पोन्न, तुम जीवित हो, यही मेरे लिए प्रसन्नता की बात है।"

"स्वामी। इस सेवक के प्राणो का क्या मूल्य है। मुझे तो आप के घाव को देख बडी व्यथा होती है।"

"मै खतरे मे न पडूगा, पोन्न।...तुम क्या हो गये थे। कौन तुम को यहाँ पर ले आया? मै सपना तो नही देख रहा हूँ न?"

"प्रभु। आप स्वप्न नही देख रहे है। यह सत्य है। क्या आपने मेरी देह मे इतने घाव कभी देखे भी है।"

"नही, तुम सच कहते हो।"

"मुझे इन चोटो से कोई दुख नही। इतनी चोट करने वालो मे से एक पर भी मै प्रहार न कर सका और न उन्हे पहचान ही सकता हूँ।"

"क्या हुआ ?"

"फारस के व्यापारी तेल के जो पीपे लाये थे, उन्हे देख मुझे सदेह हुआ कि उन पीपो मे तेल नही है। इसलिए मै दो रातो से गोदावरी मे नौकाओं के प्रदेश मे तैरते जॉच कर रहा था। मेरा उद्देश्य था कि मेरी कल्पना सत्य होने पर उन पीपो मे स्थित आयुधो को राजभटो के हाथो मे सौप दूँ।"

नारायण हॉं, हॉं करता जा रहा था। पोन्न ने अपनी कहानी शुरू की—

"मै तैर रहा था। किसीने निशाना देख मेरे सर पर डाड दे मारी, चॉंदनी रात थी, इसलिए मै ने अपने को बचा लिया, पर वह चोट मेरी पीठ पर लगी। फिर लगातार कई डाडे मेरी देह पर बरस पडी। मै अप्रयत्न ही चिल्ला पडा, फिर बेहोश हो गया। होशमे आने पर देखा कि मै एक कीमती रत्न, आभूषण, सोना व चादीवाली कोठी मे हूँ। मेरे चिल्लाते रहने पर भी किसीने मुझे खाना या पानी न दिया। दूसरे दिन शाम को जब अधेरा फैल गया, तब किसी ने छिद्रो मे खाना व पानी रख दिया। मुझे डर था, इसलिए मै उनका स्पर्श तक न कर सका। पर प्यास बढती गयी, विवश हो पानी पिया, फिर खाना भी खा लिया। दूसरे दिन किसी ने भी मुझे पानी या खाना न दिया। बाहर कोलाहल मचा था। फिर अधेरा फैलते ही पानी देनेवाला एक हाथ दिखाई दिया।

जल्दी मे आकर पानी पी डाला वही हाथ फिर खाना देने लगा। वह हाथ मुझ स्मरण आया '

पोन्न का चेहरा विकृत हो उठा। नारायण ने पूछा– "तुमने जल्द-बाजी मे आकर कुछ नही किया न ?"

"उस हाथ के याद आते ही मेरे पेट मे हलचल मच गयी। मुझे उल्टी आ गयी। उस आवेग मे मैंने भोजन की थाली फोड दी। गुरुदेव, मै उस हाथ को भी तोड़ने के ख्याल मे उछल पडा पर हाथ न लगा।"

पोन्न की आखे घूम रही थी। उसका हृदयस्पदन मेघ-गर्जन जैसा सुनाई दे रहा था।

"प्रभु! वह हाथ फिर एक बार दिखाई देना तो अदृश्य हुआ होता। आँखो मे नीद न थी। करीब आधी रात के समय दरवाजे पर आहट हुई। अगर कोई भीतर आवे तो उसके प्राण लेने को तैयार हो मैं खडा रहा। "हम लोग नारायणजी के दूत है। शोर मत मचाओ।" आवाज सुनाई दी। द्वार हिल उठा। चार आदमी मुझे उठाते गये। ताड की बनी सीढी से ऊचे प्राकार को पार करा कर मुझे आप की सेवा मे पहुंचा दिया। उस जल्दी मे मै कुछ चीजो को वही छोड आया। उन मे रक्षा के निमित्त आप का दिया चित्र वस्त्र, तेल के व्यापारियो पर लगाये गये अभियोग मे गवाही देने के लिए राजा का जो आज्ञा पत्र आया था, वह तथा एक और पत्र भी वही खो गये है।

इसी समय वज्जिय प्रेग्गडाने प्रवेश किया। नारायण ने प्रणाम किया। पोन्न प्रणाम करके एक तरफ झुक कर खडा हो गया।

"यही तुम्हारा परिचारक है ?"

"जी हाँ, आप की कृपा से "

वज्जिय प्रेग्गडा के समक्ष वैद्य ने नारायण की बाहू पर बधी पट्टी खोलकर जाच की सारी बाहू फूल गयी थी। घाव गहरा था, पर चौडा न था। वैद्य ने वज्जिय से बताया—"घाव से साफ है। कोई खतरा नही है। तीन-चार दिन के अन्दर वात का प्रकोपन हुआ तो कोई डरने की बात नही है।"

इसी समय सेवक ने आकर सूचना दी कि अनेक सोमयाजी ब्राह्मण उन की प्रतीक्षा मे है। पर उस की परवाह किये बिना पोन्न को आपाद-मस्तक देखकर वज्जिय ने नारायण से पूछा—"यही पोन्न है ?"

"जी हाँ ! इस के आने से मेरा घाव आधा स्वस्थ हो गया है।"

"बेचारे इसके सारे शरीर मे घाव हो गये हैं। इलाज करवा दूँ?" वज्जिय ने पूछा। "इस के थोडे स्वस्थ हो जाने पर मोटुपल्लि भेजना चाहता हूँ। इस बीच मे इसे तेल के व्यापारियो के मुकद्दमे मे गवाही देनी है" "अब गवाही की जरूरत नही है। इस की गैर हाजिरी मे ही फैसला हो चुका है। इस को तुम मोटुपल्लि भेज सकते हो ? तुम कब जाना चाहते हो ?" वज्जिय ने कहा। "जब मेरे मालिक आज्ञा दे। आज ही रवाना हो सकता हूँ। लेकिन . ." ये शब्द कहते पोन्न ने नारायण की ओर देखा। उसका विचार था कि अपने मालिक को इस हालत मे छोड कैसे जाऊँ।

"बेचारे पोन्न को इस हालत मे मोटुपल्लि भेजना उसकी जान लेने के बराबर होगा। मोटुपल्लि मे स्थित तुम्हारी पत्नी और पुत्री को सुरक्षित दुर्ग मे पहुँचा देने के लिए आज सुबह ही आदेश भेजा गया है। यह थोडा और विश्राम करके निकल सकता है।"

इसके बाद वज्जिय ने पोन्न से उसके स्वभाव की जाँच करने वाले प्रश्न पूछे। सारे समाचार जान कर कहा—"यह बुद्धिमान मालूम होता है। लेकिन ऐसी भारी देह रखनेवाला हमारे काम मे ज्यादा उपयोगी प्रतीत नही होता।"

नारायणभट्ट मन्दहास कर उठा। तब बोला—"इसी भारी देह ने अनेक बार मेरे प्राणो की रक्षा की है।"

"तुम्हारी जरूरत इससे सर्वथा भिन्न है। फिर भी इसको सघाराम मे भेजना अच्छा होगा न ?"

"जेतारीनाथ की हत्या करने के लिए तो भेज सकते है।" नारायण-भट्ट ने कहा।

"कैसी बात करते हो, नारायण! महामात्य क्या श्रमणो की हत्या करायेगे ? तुम बचपने की बात करते हो।" वज्जिय ने कहा।

"क्षमा कीजियेगा। जेतारीनाथ अगर पोन्न के हाथ लगा तो पोन्न मेरी व आपकी बात की परवाह तक न करेगा। जेतारीनाथ की स्थिति भीम के हाथ कीचक की सी हो जायगी।" नारायण ने कहा।

इसके बाद सेवक ने सोमयाजी ब्राह्मणो की प्रतीक्षा का समाचार स्मरण दिलाया। वज्जिय क्रोध भरा चेहरा लिये चला गया। उसने आगतुक ब्राह्मणो को प्रणाम तक न किया। उनके प्रणाम का जवाब तक न दिया और न उन्हे बैठने को कहा।

कठोर स्वर मे बोला—"बताइये, आप किस काम से आये है ?"

कुछ ब्राह्मण चकित रह गये। कुछ लोगो ने जल्दी-जल्दी आशीर्वचन समाप्त किये। विप्रो का यह अपमान देख वे चकित रह गये।

एक वृद्ध विप्र ने साहस करके एक अति वृद्ध सोमयाजी की ओर सकेत करके उनकी विद्वत्ता, यज्ञ-कार्य आदि का परिचय दिया।

इस पर वज्जिय ने कहा—"आप लोगो को और काम-धधा ही क्या रहा। अग्रहारो मे बैठे-बैठे सदा याग-यज्ञ की ही चिता किया करते है।"

वृद्ध ब्राह्मण का चेहरा सफेद हो उठा। फिर साहस बटोर कर बोला—"यह सोमयाजी पौंडरीक सपन्न करना चाहते है।"

"तो मुझे क्या करना होगा ?"

"यज्ञ-भिक्षा के निमित्त सर्वप्रथम हम लोग आपकी सेवा मे आये है। आपकी कृपा हो तो हम कृतार्थ बन जायेगे।"

"कब करना चाहते है ?"

"वैशाख शुक्ल पक्ष मे।"

"कहॉ पर ?"

"इसी राजमहेन्द्रपुर मे। आपके सान्निध्य मे। कोटिलिगतीर्थ मे।" वृद्ध ब्राह्मण एक मास मे कह चला।

"मै एक कौड़ी भी यज्ञ-भिक्षा नही दूँगा। इन यज्ञो से तग आ गया हूँ। अब आप चले जाइये। नमस्कार।" ये शब्द कहते वज्जिय वहॉ से चला गया।

ब्राह्मण वृध्द ने राजराज नरेन्द्र के शासन मे कभी ऐसी अवज्ञा न देखी थी। वज्जिय के मुँह से भी ऐसे कठोर वचन कभी न निकले थे।

वे लोग यह सोचते चलते बने कि वज्जिय का दिमाग खराब हो गया है। ब्रह्म-हत्या करने वाले की रक्षा करना चाहता है। यह भी बौद्धो मे मिलता जा रहा है। या हो सकता है कि हम जिस समय पर निकले, वह शायद राहू काल हो। ब्राह्मणो की वेद-विद्या का यह हाल हो गया है। कलियुग का महात्म्य है। चलो, हम महाराजा से निवेदन करेगे। महारानी अम्मग देवी से प्रार्थना करेगे। वज्जिय ऐश्वर्य के मद मे डूबा हुआ है। इस प्रकार अनेक प्रकार से वज्जिय की निदा करते ब्राह्मण वृन्द वहॉ से चला गया।

19

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन राजराज नरेन्द्र ने महाराणी अम्मगदेवी के साथ अनग व्रत का महोत्सव मनाया। पूजा के अन्तिम चरण मे उन्हे यह समाचार मिला कि युवराज ने अपने बाण से हकले ब्राह्मण को घायल बना दिया है। दूसरे दिन मध्याह्न के समय राजा ने सभा बुलायी।

राज दूतों ने दरबार के लगने की घोषणा की—"स्वस्ति, श्री विष्णु वर्द्धन महाराजाधि राजा परम भट्टारक मत्री, पुरोहित, सेनापति, दण्डनाथ, युवराज, प्रधान सामत व मण्डलेश्वरो के साथ सभा भवन मे विराजमान है।

मागधो ने चालुक्यवश की प्रस्तुति की।

"स सर्वलोकाश्रय श्री विष्णुवर्द्धन महाराजाधिराज राज परमेश्वर परम भट्टारक. परम माहेश्वर परम ब्रह्माण्य श्री राजराज देवोद्य महा-सिहासन मलकरोत्।"

इस के उपरात भीमनभट्ट, उसके पुत्र चेट्टन भट्ट तथा पावुलूरि मल्लना ने राजराज नरेन्द्र की प्रशस्ति मे कविता-पाठ किया।

नन्नयभट्टारक अनुमति पाकर पुरोहित प्रमुखो ने वेदाशीर्वचन कहे। तब मत्री, सामत, दण्डनाथो को उनके उपहार समर्पण की अनुमति मिली।

सर्व प्रथम वृद्ध महामत्री सोमयाजी वज्जिय प्रेग्गडा ने एक मूल्यवान मोतियो का हार राजा को समर्पित किया। राजराज ने आसन से उठकर झुककर उस हार को अपने कठ मे धारण किया। इसके उपरात अन्य लोगो के उपहार यथाक्रम स्वीकार किया। वे सब पादचारी हो सिहासन के पास आये और विशाल पाद-पीठ पर उपहार समर्पित कर सम्राट को प्रणाम करके अपने अपने आसनो को लौटते रहे।

अब चक्रकोट्य मडलाधिपति महाराज धारावर्ष की बारी आयी। पर वह अनुपस्थित था और न उसका प्रतिनिधि ही उपस्थित था।

इस अविनय पर सारी सभा चकित रह गयी। वज्जिय का मुखमण्डल लाल हो उठा। पर राजराज नरेन्द्र अविचल था। इस के अनतर अन्य लोगो ने अपने उपहार समर्पित किये।

उत्सव की समाप्ति पर महाराज ने गभीर स्वर मैं घोषणा की—

"हम कल की धनुर्विद्या की परीक्षा मे भाग न ले सके। हमे मालूम हुआ है कि तीन बाण ब्राह्मण-वृन्द मे जा गिरे जिन मे एक ने एक विप्र की बाहु मे आघात किया है।

हमारा वश चिर काल से धर्म का पक्षपाती रहा है। हमारी दृष्टि मे ब्रह्महत्या निंद्य है। हम इस बात पर विश्वास नही कर सकते कि भूल से तीन बाण क्रमश लक्ष्य-च्युत हो सकते है। हम इस धर्मपीठ से न्याय का निर्णय करना चाहते है। इसलिए हम चाहते है कि जो लोग सत्य से परिचित है, वे इस घटना का विवरण दे। अपराधी चाहे जो भी हो, उसे हम उचित दण्ड देने मे सकोच नही करेगे।

महाराजा के मुँह से ये शब्द निकलते देख समस्त सभासदो के शरीर रोमाचित हो उठे। लोग सोचने लगे—निस्सदेह युवराज राजेन्द्रदेव अपराधी है। महाराजा स्वय अपने पुत्र को कठोर दण्ड देने पर तैयार है।

सुनते हैं कि इक्ष्वाकु चक्रवर्ती ने अपने पुत्र शशाद को दण्ड दिया है। नशण ने अपने पुत्र सत्यव्रत को दण्डित किया है। यह सोच कर सारी सभा अवाक् रह गयी।

सम्राट के वचन सुन युवराज राजेन्द्रदेव निर्भय खडा हो गया। उसने महाराजा तथा महा सभा को प्रणाम किया। अपने दक्षिण हस्त के म्यान मे से खड्ग निकाल कर महा राजा के चरणो पर रख कर यो कहा— "महाराजा! असाध्य लक्ष्य भेदने के निमित्त मैं धनुष पर वाण चढा लक्ष्य पर छोडने ही वाला था कि काम राज पुत्र ने मेरे हाथ को हिला दिया। फलत वाण लक्ष्यच्युत हो उस विप्र वर पर जा लगा। इस मे मेरा अपराध नही है। लेकिन इस वात का मुझे दुख है कि मेरे बाण ने विप्र को घायल बना दिया है। इसके पूर्व विप्र श्रेणी मे जो बाण जा गिरे। वे मेरे नामाकिन वाण है। परतु मैं इस बात पर विश्वास नही कर सकता। इस परीक्षा मे मेरा एक भी बाण लक्ष्य-च्युत नहीं हुआ है। यह सत्य है! मै अपने खड्ग की शपथ लेकर कहता हूँ।"

इस पर राजराज ने कामराज पुत्र की ओर अवलोकन किया। वह बडी निर्भीकता के साथ उठ खडा हुआ। सम्राट तथा सभा को प्रणाम किया। खड्ग की शपथ लेकर यो बोला—

"महाराज! इस वात का मुझे दुख है कि इस महा सभा मे मुझे सत्य ही कहना पड रहा है। मेरे प्रिय बधु युवराज के वचनो का प्रत्याख्यान करना पड रहा है। युवराज के दो बाण लक्ष्य-च्युत हो ब्राह्मण-वृन्द मे जा गिरे थे। मैंने यह सोच कर कि तीसरा बाण उसी मार्ग मे जानेवाला है, इसलिए सभ्रम मे आकर पूछा— 'राजेन्द्र देव! ब्राह्मणो पर वाण क्यों चला रहे हो? ये शब्द कहते मैंने युवराज का हाथ थाम लिया। परतु इस के पूर्व ही धनुष से बाण निकल चुका था। चाहे जो भी हो, यह युवराज की भूल थी, पर उसने उद्देश्यपूर्वक यह कार्य नही किया है। मैं जानता हूँ कि असाध्य लक्ष्य को भेदने की युवराज की निपुणता अद्वितीय है।"

कामराज पुत्र के वचन सुन सारी सभा हर्षित हुई । कामराज के पाचों भाइयो ने उसके कथन का समर्थन किया ।

इस के उपरात करुणाकर तोडमान तथा जयगोडार ने शपथ खाकर बताया–"सम्राट, उस समय मच पर बाणो का प्रयोग करनेवाले राजेन्द्र देव कामराज पुत्र तथा उसके पाँच भाई ही थे । उन सातो मे से किसी के दो बाण ब्राह्मण–वृद मे जा गिरे । युवराज का एक भी बाण लक्ष्य–च्युत नही हुआ है । इस लिए मेरी आशका है कि उन्ही सहोदर-पट्क के वे बाण होगे । अतिम बाण के छोडते समय कामराज–पुत्र ने युवराज के हाथ को हिलाया । इस प्रकार हिलाना परीक्षा के नियमो के विरुद्ध है । इसी कारण वह बाण उस ब्राह्मण को जा लगा ।"

सभा के कतिपय लोग यह सोच कर उनके कथन की आलोचना करने लगे कि ये द्राविड कितनी निर्भयता के साथ अपने मित्र के पक्ष मे असत्य भाषण कर रहे है । देखने वालो को ऐसा प्रतीत हो रहा था कि सम्राट उन बातो को सुनते हुये भी उन पर विश्वास नही कर रहे है ।

राजराज ने नृपकाम दण्डनाथ की ओर दृष्टिपात करते पूछा–"यह बात सर्व विदित है कि आप सत्य वचन बोलते हैं । आप वृद्ध तथा पूज्य हैं । इसलिए हमारा अभिमत है कि आप बिना सकोच के हमारे प्रिय पुत्र का अपराध हो तो इस सभा के समक्ष सत्य प्रकट करे । आप मेरे प्रतिनिधि के रूप मे कल धनुर्विद्या के परीक्षाधिकारी रहे, इसलिए आपका निर्णय अन्तिम होगा ।"

नृपकाम दण्डनाथ के खडे होते ही उनकी वाणी सुनने को सारी सभा व्यग्र हो उठी । सब कोई उनकी धर्मनिरति तथा सत्य भाषण से भलीभाति परिचित है । अनेक युद्धो मे विजयादित्य तथा राज राजनरेन्द्र को विजय-सपादन कराने वाले वे महान योद्धा भी है । अलावा इसके वे वयोवृद्ध तथा ज्ञान वृद्ध भी है । गभीर स्वर मे नृपकाम ने कहा—

'यह घटना सकटपूर्ण है। किन्तु सकोच करने की कोई आवश्यकता भी नही है। युवराज को असाध्य लक्ष्य भेदन करते मैं ध्यानपूर्वक अवलोकन कर रहा था। अन्त मे कामपुत्र के हाथ हिलाने से लक्ष्य-च्युत हो वह बाण विप्र की बाहू मे जा घुसा। मैं दृढतापूर्वक कह नही सकता हूँ कि इसके पूर्व ब्राह्मण-वृन्द मे जो दो बाण गिरे, वे किसके है ? मैंने उन्हे नही देखा। इसका परिचय पहरा देने वाले रक्षकभट ही दे सकते है।"

सभा मे कुछ लोग यह सोचने लगे कि युवराज के प्रति पक्षपात भाव से दण्डनाथ नृपकाम ये शब्द कह रहे हो। इसके बाद रक्षक भटो को बुलाया गया, पर उन लोगो ने अपनी अनभिज्ञता व्यक्त की। अन्त मे राजमय्या ने यो कहा—

'मै उस हकले ब्राह्मण के समीप मे ही था। कामराज पुत्र के बाण कौशल ने मुझे आकृष्ट किया। इसलिए मैने उनकी ही परीक्षा देखी। सयोग की बात थी कि उनके चलाये दो बाण क्रमश उसी ब्राह्मण की ओर आये। उनको मैने अपने दण्ड से रोक दिया। परन्तु मैं यह नही कह सकता कि उस ब्राह्मण पर जो बाण लगा, उसे किसने छोड़ा है। मैने जिन बाणो को अपने दण्ड से रोका, उनके ये निशान देख लीजिये।" ये शब्द कहते राजमय्या ने दण्ड पर बाणो के निशान दिखाये।

अग रक्षक राजमय्या की बाते सुनने पर कामराज पुत्र तथा उसके भाइयो के मुखमण्डल विवर्ण हो गये। सारी सभा मे आश्चर्य एव सदेह भी छा गया।

वे तीनो बाण सुरक्षित किये गये थे। उन पर वज्जिय प्रेग्गडा अकित थी। राजराज ने ब्राह्मण के रक्त से सिचित बाण को आँखो से लगा कर उसकी जाँच की। उस पर युवराज का नाम अकित था। बाकी दोनो बाणो पर भी युवराज के नाम अकित थे।

राजराज का मुखमण्डल असह्य एव क्रोध से विकृत हो उठा। मौन हो सम्राट ने उन बाणो को युवराज के हाथ दिया। युवराज ने

सादर उठकर उन बाणो को ग्रहण किया और उनकी जॉच की। उसी समय करुणाकर तोंडमान ने भी उन बाणो का परिशीलन किया, पर तीनो बाणो पर युवराज का नाम देख वे दोनो आश्चर्य चकित हो उठे।

इसी समय जयगोंडार ने उठकर पल भर उन बाणो का परिशीलन किया। चोळ सम्राटो के यहाँ उसका परिवार अनेक वर्षो से दरबारी कवियों के रुप मे रहा। उस के पिता ने ही राज राजेश्वर नाटक की रचना की थी। उसने बाणो को देखते ही सम्राट से यो निवेदन किया—

"प्रभु! यह रक्त सिक्त बाण अवश्य युवराज का है। यह देखने मे एक बाण जैसा अवश्य दीखता है, किंतु यह दो टुकडो से बनाया गया है। ये दोनो बाण इस से भिन्न है। ये एक ही टुकडे से उसके अनुकरण मे तैयार किये है। मेरे, करुणाकर तथा युवराज के बाण दो टुकडो को जोड़ कर बनाये है। हमारे राज्य मे इसी ढग से बाण तैयार करते है। आपके यहाँ एक ही टुकडे से बाण तैयार करने की परिपाटी है। बारीकी से जॉचने पर आप को यह अतर दिखाई देगा।"

इस के उपरात जयगोंडार ने महाराजा से यो निवेदन किया—

"प्रभु! मेरा एक और निवेदन। इन तीनो बाणो की जॉच करने मे आप लोग खतरे से बच गये है। मेरा विश्वास है कि इन दोनो बाणो की नोक विष से बुझी हुई है।"

तत्काल राजा के आदेश पर बाणो की जाच हुई। यह साबित हुआ कि उन दोनो बाणो की नोके विपपूरित है। एक शुनक को मगवा कर बडी सूक्ष्मता के साथ उस पर चुभोया गया। वह कुत्ता तत्काल छटपटाते नीचे गिर गया। उसकी चिकित्सा कर वैद्य ने निर्णय दिया कि ये दोनो बाण विष पूरित है।

सारी सभा अवाक् रह गयी। यह सदेह सभासदो मे प्रबल हो उठा कि युवराज पर दोषारोपण करने के निमित्त यह षड्यन्त्र रचाया गया है,

पर बेचारे उस ब्राह्मण पर विप भरे बाणो का प्रयोग करने की क्या जरूरत है। वह इस राज्य के लिए सर्वथा नये जो हैं।

राजा का आदेश पाकर राजभट युवराज, करुणाकर, जयगोडार तथा कामराजादि सहोदर षट्क के बाण उनके निवासो से मगवाये गये। उन सब की जाच करने पर जयगोडार का कथन सत्य प्रमाणित हुआ। विष वैद्य ने जाच कर घोषित किया कि ये दोनो बाण एक ही टुकडे मे निर्मित है।

बाणविद्ध ब्राह्मण दुर्बल था। इसलिए वज्जिय ने निवेदन किया कि वह राजसभा मे उपस्थित होने मे असमर्थ है। सम्राट ने यो आदेश सुनाया—

"आज का दिन हमारे लिए अत्यन्त सताप का दिन है। युवराज हमारा अपर देह ही है। कामराज पुत्र हमारा आप्त एव आत्म बन्धु है। इनमे से दोषी कौन है, इसका निर्णय करना है। हमारा न्याय सर्वसम्मत है। बाण विद्ध ब्राह्मण सभा मे उपस्थित होने की स्थिति मे नही है। उसके स्वस्थ होने पर हम दोप का निर्णय करेगे। तब तक युवराज अथवा कामराज-पुत्र किसी भी प्रकार के आयुध-प्रदर्शन मे भाग नही ले सकते।"

राजराज के इस कठोर निर्णय की सबने प्रशसा की। उसी समय दोष के निर्णय होने तक आयुध ग्रहण न करने की शपथ क्रमश. करुणाकर, जयगोडार तथा कामराज पुत्र के सहोदर भाइयो ने भी की। सभा विसर्जित हुई।

सभी लोग सम्राट की निष्पक्ष नीति की प्रशसा करते रहे। इस घटना मे सब चक्र कोट्य मडलाधिपति धारा वर्ष की अवज्ञा को शायद भूल से गये थे; पर सम्राट और महामात्य वज्जिय के हृदयो को वह कुरेद रही थी।

20

गुरुनाथ श्रेष्ठी राजमहेन्द्रपुर के समस्त व्यापारियों मे सपन्न है। उसके पूर्वजो ने विदेशो के साथ नौका-व्यापार करके विशेष रूप से धनार्जन किया था। इस प्रकार वे करोडपति बन बैठे थे। उनका व्यापार विश्वसनीय था और उनके नौकर भी विश्वामपात्र थे।

गुरुनाथ श्रेष्ठी को नौका व्यापार मे लाखो का लाभ होते देख अनेक व्यापारियो ने नयी नौकाओ का निर्माण कराकर नौका-व्यापार प्रारम्भ किया। इस पर गुरुनाथ श्रेष्ठी ने केवल विदेशी व्यापार के लिए आवश्यक नौकाओ को रख कर शेप नौकाओं को बेच दिया। इस प्रकार उसके पास जो सपत्ति इकट्ठी हुई, उसे कर्ज पर देकर और बढा ली।

इस पेशे मे गुरुनाथ श्रेष्ठी ने वश क्रमानुगत प्रतिष्ठा प्राप्त की। वह कम ब्याज पर ऋण देता था। गरीब और अमीरो के साथ समान व्यवहार करता था। अनेक लोग उसके यहाँ अपना धन सुरक्षित रखते थे। व्यापारी सघ तथा ग्राम-सघो का धन भी उसके यहाँ जमा किया जाता था और ऋण भी लेते थे।

इस लेन-देन के व्यापार के निमित्त राजमहेन्द्रपुर में गुरुनाथ श्रेष्ठी का एक विशाल भवन था। उसकी रक्षा के हेतु अनेक सायुध भट पहरा दिया करते थे। हिसाब-किताब, ऋण-पत्र आदि लिखने के लिए उसके यहाँ अनेक लेखक थे। उनमे अधिकाश लोग जैन थे। उन्हे प्रतिदिन अपना

हिसाब श्रेष्ठी को सौंपना पडता था। उस हिसाब-किताब की जाच मे गुरुनाथ श्रेष्ठी अद्वितीय प्रतिभा रखता था।

गुरुनाथ श्रेष्ठी को प्रधानता देते हुये राज राजनरेन्द्र ने छत्र और चामर प्रदान किये थे। धान्य श्रेणी पति सिरिविसेट्टि को राज्य मर्यादा की दृष्टि मे दूसरा स्थान प्राप्त था। व्यापार सबन्धी व्यवहारो मे साधारणत गुरुनाथ श्रेष्ठी को ही राजराज निर्णायक नियुक्त किया करता था। फैसला करने मे वह बडा ही समर्थ था। फारस के व्यापारियो के अपराध की जाँच करा कर तीन प्रमुख व्यापारियो को दण्ड दिया और तीन नौकरो को मुक्त किया।

आज दस हजार गद्वाणो को ऋण की माग करते हुए कुमार सप्तक मे से छोटे राजमार्तण्ड के यहाँ से दूत आया।

इस के पूर्व कुमार सप्तक गुरुनाथ श्रेष्ठी के यहाँ से विशेष अवसर पर ही ऋण लिया करता था। इधर चैत्रमास से ही शेष छठो भाई प्रत्येक दस हजार गद्वाण ऋण ले गये थे। वे सब राजराज नरेन्द्र के निकट के रिश्तेदार थे। सम्राट भी उनके प्रति वात्सल्य भाव रखते है। जन साधारण मे भी उन लोगो ने अच्छी ख्याति प्राप्त की। राजदरबार मे भी अच्छा आदर रखते है। उन की जीविका के निमित्त अनेक गाँव बधे हुये है। ऐसे परिवार के लिए साठ हजार गद्वाण ऋण देने मे भय ही क्या है ?

ये लोग इतने हजार गद्वाण ले कर कौनसा व्यापार कर रहे है ?

पिछले दिन राज-सभा मे कामराज-पुत्र की घटना गुरुनाथ श्रेष्ठी ने स्वय देखी थी। घर लौटने पर उसने अपने लेखको को आदेश दिया था कि कुमार सप्तक मे से यदि कोई ऋण की माग करे तो उसकी जानकारी के बिना ऋण-पत्र न लिखे जायँ।

यही कारण है कि आज राजमार्तण्ड के दूत को लेखको ने गुरुनाथ श्रेष्ठी के यहाँ भेजा था ।

इतनी स्वल्प अवधि मे इनके भाइयो को इतनी रकम की क्या आवश्यकता आ पडी ।

राज मार्तण्ड का पत्र लाया हुआ नौकर गुरुनाथ श्रेष्ठी को नमस्कार कर खडा ही रह गया । श्रेष्ठी ने पुन पत्र पढा ।

साठ हजार गद्वाणो के साथ फिर दस हजार गद्वाण क्यो खोने है । श्रेष्ठी ने क्षण भर सोचा ।

"राजमार्तण्ड जी से निवेदन करो कि आज सायकाल मै राजकुमार के दर्शनार्थ आ जाऊँगा ।" श्रेष्ठी ने पत्र देखते हुये ये शब्द कहे । श्रेष्ठी के इन साहस पूर्ण वचनो पर दूत को भी बडा आश्चर्य हुआ ।

तुरंत गुरुनाथ शकट तैयार करवाकर राजानुग्रह द्वारा प्राप्त छत्र व चँवर धारण कर ठाट से चल पडा । अपने साथी श्रेष्ठियों के दर्शन कर उनसे अनेक व्यवहारो की बाते की । सदर्भवश उसने जान लिया कि कुमार सप्तक ने चैत्रमास से लेकर अनेक लाख गद्वाणो का ऋण लिया है । उन लोगो ने एक दो के यहाँ से नही, प्राय सब से ऋण लिया था । व्यापारियो ने यह बात बडी शान व गर्व से कही कि राजकुमारो ने उनके यहा से ऋण लिया है । परतु बेचारे वे एक दूसरे की बात बिलकुल न जानते थे ।

गुरुनाथ श्रेष्ठी की हिम्मत सहसा टूट गयी । साठ हजार गद्वाणो के खोने से उस का दीवाला नही निकलता, बल्कि इस बात के लिए कि आखिर ये राजकुमार लाखो गद्वाण ऋण क्यो ले रहे है । अगर वे किसी दुरुद्देश्य से प्रेरित हो यह काम करते हैं तो उस मे सहायता पहुँचाने पर मेरे लिए दोष न होगा ?

अब क्या करना होगा ? क्या अन्य व्यापारियो से ऋणो की माग करवा दूँ ? अथवा मैं अपना ऋण चुकाने की माग करुँ, या गुप्त रुप से सम्राट को निवेदन करुँ ? शक्ति शालियो के साथ शत्रुता मोलना उचित नही। ऐसी हालत मे हलचल मचाने की अपेक्षा मौन धारण करना उत्तम होगा। यह निर्णय कर लिया कि भविष्य मे कुमार सप्तक को ऋण नही देना चाहिये।

ये बाते सोचते गुरुनाथ श्रेष्ठी अपने वचन के मुताबिक सायकाल राजमार्ताण्ड के दर्शन करने गया। द्वारपालो ने यह कह कर गुरुनाथ श्रेष्ठी को लौटा दिया कि राजमार्ताण्ड अपने दर्शनो की आज्ञा नही दे रहे है।

21

गुरुनाथ श्रेष्ठी को साधारणत क्रोध नही आता। अगर क्रोध आये भी तो वह व्यक्त नही होता।

राजमार्ताण्ड राज-बन्धु है, पर गुरुनाथ श्रेष्ठी श्रेष्ठियो मे अग्रगण्य है। राजमार्ताण्ड ने ही उससे ऋण की याचना की, उसके दर्शन करने जाने पर मुलाकात का मौका न दिया गया। वैसे राजमार्ताण्ड के दर्शन करने की गुरुनाथ श्रेष्ठी को कोई आवश्यकता नही है।

गुरुनाथ श्रेष्ठी ने घर लौटते ही कुमार सप्तक के अधीन मे स्थित गावो का हिसाब लगाया। कम से कम मूल्य लगावे तब भी दस लाख गद्याणो का मूल्य रखते हैं। यह हिसाब देख अपने मित्र-व्यापारियो से मिला और कुमार सप्तक के पाँच लाख मूल्य के ऋण-पत्र उनसे खरीद कर सुरक्षित रखा।

दूसरे दिन प्रात काल लेखको को बुलवा कर कुमार सप्तक के ऋण-पत्रो को अलग-अलग छटवाया। सब राजकुमारो के नाम इस आशय के पत्र भेजे कि वे लोग अपना ऋण शाम के तीन बजे के अन्दर चुका दे। सातो राजकुमारो से गुरुनाथ श्रेष्ठी को पाँच लाख साठ हजार मूल धन तथा ब्याज चार सौ गद्याण मिलने थे। मल्लप्पा सघाराम मे चिकित्सा पा रहा था, अत. उसे सघाराम मे ही पत्र पहुँचा दिया गया। शेष छठो भाइयो को उनके निवासों पर पहुँचा दिया गया।

चिकित्सालय मे स्थित मल्लप्पा ने वह पत्र तुरन्त प्राप्त किया, किंतु शेष छठो राजकुमारो ने यह सोच कर सदेश वाहको को दर्शन न दिया कि सभवत गुरुनाथ श्रेष्ठी ने क्षमा याचना के पत्र भेज दिये होगे। सदेश-वाहको ने यह समाचार तत्काल श्रेष्ठी को दिया। उसने पुन उन सदेश-वाहको को राजकुमारो के पास भेजते कठोर आदेश दिया कि यदि इस बार वे दर्शन न दे तो ये पत्र उनके दर्वाजो पर बाध आवे।

इस बीच मल्लप्पा ने पत्र पढ कर यह समाचार अपने भाइयो को दिया। वे सब विस्मित रह गये।

श्रेष्ठी के सदेशवाहक डरते डरते राजकुमारो के निवासो पर पहुँचे। परन्तु इस बार उनके द्वार पर पहुँचते ही भीतर आने की अनुमति मिली। राजकुमारो ने उन पत्रो को स्वीकार कर उनकी पहुँच की सूचना भिजवा दी। वे अपनी ऑखो पर विश्वास नही कर पा रहे थे।

सदेशवाहको को भेजने के पश्चात छठो राजकुमार राजमार्तण्ड के निवास पर समाविष्ट हुये। उन्हे पिछले दिन का समाचार ज्ञात हुआ।

इतनी अल्प अवधि मे इतनी बडी रकम कहाँ से लावे ? मल्लप्पा के परिचित व्यापारी तो है, पर वे लोग अपना माल बेच कर धन लूट कर विदेश जाना जानते है, वे उपकार करना क्या जाने।

गुरुनाथ श्रेष्ठी का प्रतिस्पर्धी सिरिविसेट्टि है। वह क्या दे सकेगा ? स्वल्प अवधि मे माग करने पर क्या वह सन्देह न करेगा ? वह परिस्थिति पर विचार करते समय बिता देगा तो काम न बनेगा, उल्टे अनावश्यक हमारे ऋण का पता लग जायगा।

तत्काल ऋण न चुकाने पर गुरुनाथ श्रेष्ठी हमे न्यायालय के समक्ष हाजिर करवा देगा। इससे बढ कर अपमान की बात और क्या हो सकती है। साथ ही यह प्रश्न भी उठेगा कि इतना ऋण क्यो किया है ? अलावा

इसके कामराज-पुत्र पर राजसभा मे तीव्र निन्दा है। इसलिए श्रेष्ठी के साथ मैत्री करना ही उचित है।

इस पर राजकुमारो ने गुरुनाथ श्रेष्ठी के पास खबर भेजी कि वह तत्काल भेंट कर जावे। परन्तु गुरुनाथ श्रेष्ठी ने अत्यन्त आदर प्रदर्शित करते हुये दूतो के द्वारा समाचार दिया कि वह अत्यन्त ही कार्यव्यस्त है, अत न आ सकने की स्थिति पर क्षमा कर दे।

राजकुमार क्रोध से फुत्कार कर उठे। कामराज-पुत्र यह कहते उठ खडा हुआ कि वह श्रेष्ठी की छाती मे अपनी छुरी भोक देगा। पर राज मार्ताण्ड ने उसे रोकते हुये कहा—'इस घटना का मूल कारण वही है, अत श्रेष्ठी के वध करने का मौका उसे ही मिलना चाहिये।' उसने अपने म्यान से तलवार भी निकाली। मगर बाकी चार भाइयो ने उन दोनो को शात किया।

यह पराक्रम दिखाने का समय नही है। इस श्रेष्ठी पर क्रुद्ध हो जल्दबाजी मे कुछ कर बैठेगे तो हमारे सकल्प किये सारे प्रयत्न व्यर्थ हो जायेगे। इस अविनय का दण्ड गुरुनाथ श्रेष्ठी को अवश्य प्राप्त होगा, अत. हमे तब तक सब्र रहना चाहिये।

अलावा इसके गुरुनाथ धनी है। उसकी सपत्ति से हमे अपना कार्य-सपादन करना है। उसके दादा-परदादाओ के जमाने से हमारे पितामहो की मैत्री रही है। फिर भी वह पूर्व मैत्री के स्मरण दिलाने से नही झुकता। कर्नाटक राजाओ ने हमारे पितामह को जो हीरो का हार दिया है, वह अमूल्य है। उसे श्रेष्ठी के पास गिरवी के रूप मे रख कर पहले हम आवश्यक धन ले लेगे। इस उपाय के द्वारा इस कठिन स्थिति मे एक और बलवान मित्र को प्राप्त कर सकते है।

इस प्रकार विचार-विमर्श कर सब भाइयो ने राजमर्ताण्ड को ही गुरुनाथ श्रेष्ठी से वार्तालाप करने भेजा।

22

गुरुनाथ श्रेष्ठी ने पहले ही कल्पना की थी कि राजमार्तण्ड अवश्य उस के यहाँ आयेगा इसलिए उसकी इज्जत करने के निमित्त उचित रीति मे आसन आदि का प्रबंध करवा रखा था ।

राजकुमार के आगमन का समाचार मिलते ही श्रेष्ठी ने आगे बढकर विनयपूर्वक नमस्कार किया । स्वागत के बाद आसन पर बिठाकर वह एक तरफ खडा हो गया । राजमार्तण्ड के यह कहने तक कि आप भी बैठ जाइये, श्रेष्ठी खडा ही रह गया था ।

"मैं क्षमाप्रार्थी हूँ । आपने आज्ञा दी थी, मैं आप की सेवा मे उपस्थित न हो सका । हमारा विदेशी व्यापार अब भी चालू है । जरुरी काम थे । इसलिए मैं ने आप को कष्ट दिया ।" गुरुनाथ श्रेष्ठी ने कहा ।

राजमार्तण्ड का क्रोध उबल रहा था, पर उसने जब्त कर लिया- "आप जानते है कि हम किस कार्य से आये है ।"

"राजकुमार, क्या सारा धन ले आये ? बहुत ही जरुरी काम था । इसलिए आप को लिखना पडा । सोचा कि यह थोडी राशी आप तत्काल दे सकेंगे । इसी हिम्मत से कष्ट दिया । आप तो राजकुमार है, क्या कमी ?" श्रेष्ठी ने कहा ।

"श्रेष्ठी जी, आप के और हमारे परिवारो के बीच मैत्री आज की नही, आप जानते है ? "

"राजकुमार, उस मैत्री मे भग तो नही हुआ ? "

"मैत्री-भग न हो तो ये क्या है। इन शब्दो के साथ राजमार्तण्ड ने श्रेष्ठी के भेजे पत्र दिखाये।

"इस मे मैत्री-भग की क्या बात है ? मुझे यव द्वीप मे बडी राशी चुकानी थी, इसलिए मै ने आप को पत्र भेजा। वह नौका मोमलपट्टण से एक सप्ताह मे रवाना होने वाली है।"

"गुरुनाथ ! हम राजपुत्र टेढी-मेढी बाते करना नही जानते। हमारे ऋणदाताओ के सब ऋण आप अपने नाम लिखवा कर चन्द घडियो के अन्दर उस सारे धनको चुकाने की माग करना क्या मित्रता कहलायगी ?"

"आप यह क्या कह रहे, राजकुमार ! मुझे धनकी अत्यत आवश्यकता थी। इसलिए मै ने अपने ऋणियो से माग की, इस पर उन लोगो ने आप सब भाइयो के ऋण-पत्र मुझे सौप दिये। मै ने यह सोच कर उन ऋण-पत्रो को स्वीकार किया कि आपका धन मेरे हाथ मे रहने के बराबर है। इस मे मैत्री-भग की कौन बात है ?"

"इतना धन घडियो मे लाने की शक्ति होती तो हम आप जैसे लोगो से ऋण ही क्यो लेते? श्रेष्ठी जी। मै आप से यही चाहता हूँ कि हमारी पूर्व मैत्री का ख्याल रखते हुये आप हमारे परिवार की प्रतिष्ठा रखे।"

"पूर्व मैत्री को आप ही लोग भुला चुके है, मै नही भूला हूँ।"

"अब यह बात भूल जाइये। आपने भी इसका प्रतीकार किया। आपके दादा-परदादो ने राजा बेट विजयादित्य का कैसा समर्थन किया है। इसी प्रकार अब हम दोनो के बीच मैत्री दोनो के लिए श्रेयस्कर है।"

गुरुनाथ श्रेष्ठी मौन रहा। पर उसके व्यवहार मे जो सूक्ष्म परिवर्तन हो रहा था, राजमार्तण्ड भाप रहा था।

श्रेष्ठी ने कहा––"राजकुमार! यह प्रतीत है कि क्षत्रिय दीर्घ क्रोधी है। इसलिए आप क्षत्रियोचित ढग से बताइये कि मुझ पर आपका क्रोध नही है।"

राजमार्तण्ड तत्काल म्यान मे से खड्ग लेकर बोला- 'गुरुनाथ श्रेष्ठी! आप और हम लोग इस क्षण से पूर्ववत मित्र है।"

श्रेष्ठी की देह पुलकित हो उठी। राजनीति ने श्रेष्ठी नीति पर विजय प्राप्त की।

"राजकुमार! पूर्व स्मृतियो के ताजा होते ही मेरे मुह से बोल नही फूट रहे है।" गुरुनाथ ने गदगद कठ से कहा।

राजकुमार ने मौका पाकर अपने कठ से हीरो का हार निकाल कर श्रेष्ठी के हाथ मे दिया। श्रेष्ठी उन हीरो की जाच करने लगा। गुरुनाथ ने भाप लिया कि उस कठिका का प्रत्येक हीरा एक-एक राज्य का मूल्य रखता है। ऐसे हीरो के रखनेवाले राजकुमारो के वैभव के सामने करोडपति की सपत्ति का क्या मूल्य हो सकता है? श्रेष्ठी का मन हीरो मे निमग्न हो गया।

"कुतलेश्वर ने मेरे पितामह को वेगी महामण्डलेश्वर का पद अनुग्रह करते अपने हाथो से उनके कठ मे पहनाया था यह हीरो का हार है हम आपके ऋणी है। हमारी देह प्रति क्षण खतरे मे होती है। हमारी वृद्धि व क्षय के कारण हमारे मित्रो का नुकसान न हो। हम सब भाइयो की यही कामना है कि आप यह हार अपने पास रख कर हमारी आवश्यकता के समय धन की सहायता करे।"

ये बाते सुनने पर श्रेष्ठी भयकपित हो उठा इस बात का भली भाति प्रबध कर रखा था कि उनके वार्तालाप को कोई न सुने। फिर भी चकित हो उसने चारो तरफ दृष्टिपात किया।

"राजकुमार! मुझ पर ऐसा भार न डालिये। यह हार हम जैसे लोगो के गृहो में रहने योग्य नही है। अपने पास ही रख लीजिये।"

श्रेष्ठी ने हार देना चाहा, पर राजमार्तण्ड ने अस्वीकार करते हुये कहा- "जब हम ऋण विमुक्त होगे तभी हम इस हार को लेगे। यदि आप इसी वक्त हार को ग्रहण करने का अनुरोध करेंगे तो हम समझेंगे कि आप मैत्री-भग कर रहे है।"

गुरुनाथ श्रेष्ठी मौन रह गया। बलवानो से शत्रुता मोलना उचित नही कहलाता। सब के साथ अच्छा व्यापार करना व्यापार का धर्म ही है।

"राजकुमार, अब मैं कुछ न कहूँगा। आप के इन ऋणो का समाचार दूसरा कोई नही जानता। भविष्य मे भी मै गुप्त रखूगा। क्या आप और लोगो के भी ऋणी है?"

राजकुमार का चेहरा खिल उठा।

"इस वक्त पाँच लाख मुद्राएँ पर्याप्त है।"

"कल तक मै पहुँचवा दूँगा।"

राजकुमार विदा लेकर चला गया।

उसी दिन तीसरे प्रहर मे गुरुनाथ श्रेष्ठी ने अपनी हिसाब-किताब मे कुमार सप्तक के ऋण चुकाने का ब्यौरा लिखवाया। वह सारा ऋण उसकी धर्मपत्नी के हिसाब मे परिवर्तित किया गया था, पर गणको व लेखको से यह बात गुप्त रखी गयी। उसी हिसाब मे से पाँच लाख मुद्राएँ लेकर गुरुनाथ श्रेष्ठी दूसरे दिन राजमार्तण्ड के महल मे स्वय चला गया।

23

पाबुलूरि मल्लना की पत्नी भूत के प्रवेश से जब से मुक्त हुई तब से वेमुलवाड भीमकवि उसी के घर रहने लगा। दरवाजे पर बैठे भीम कवि ने आवेगपूर्ण जो कविताएँ सुनायी, उनकी शक्ति पर मल्लना बहुत ही प्रभावित हुआ। ऐसे प्रतिभाशाली कवि यदि महाकाव्य लिखे, तो कैसे यशस्वी होगा। यह कुतूहल मल्लना मे दिन प्रतिदिन प्रवर्द्धमान होने लगा। अनेक बार उसने कवि के मुँह से कविता सुनने की इच्छा प्रकट की पर भीम कविने नही सुनायी।

मल्लना ने अनेक बार भीमकवि से साहित्यिक चर्चा करनी चाही। सस्कृत काव्यो का रसास्वादन करना चाहा, पर भीमकवि मौन ही रहा। आखिर मल्लना ने भीमकवि के सबन्ध मे अपनी यह धारणा बना ली कि भीमकवि आवेश मे आने पर कविता सुना देता है। उस आवेश के कम होते ही शायद उसे उस कविता का स्मरण तक नही होता।

भीमकवि ने एक बार नन्नय भट्टारक के दर्शन कराने की माग की। एक बार दरबार मे ले जाने का अनुरोध किया, पर मल्लना बार-बार कोई न कोई बहाना बता कर बचता रहा, क्यो कि भीमकवि सभा मे बोलने का कौशल नही रखता। देखने मे वह भद्दा है। सभा मे ठीक से बैठने की तमीज नही रखता। ऐसे व्यक्ति को राज-सभा मे ले जाय तो उस की इज्जत जाती रहेगी।

फिर भी भीमकवि के महत्व को स्वय अपनी आँखो से देखने व उस की पत्नी की पैशाचिक चेष्टा को दूर करने की वजह से उसके प्रति मल्लना के हृदय मे अपार श्रद्धा व भक्ति थी। इसलिए उसने विचार करके यह निर्णय किया कि नन्नय भट्टारक के पास ले जाकर घटी हुई घटना का उल्लेख करके इसके बाद आगे के कर्त्तव्य पर विचार करना उचित होगा।

आज सुबह भीमकवि को नन्नय के पास ले जाने की बात कही, लेकिन सवेरे उसमे एक विघ्न आ उपस्थित हुआ। एक पडित अपने शिष्य से बडे-बडे ग्रन्थ ढोवाते मल्लना के घर का पता पूछते आ धमका।

पडित गोरे रग का था। नासिका लबी थी। उसकी आँखों मे तेज दमक रहा था। कानों मे मकर कुण्डलों जैसे भूषण थे। देह पर सुदर काश्मीरी शाल सुशोभित थी उसे देखते ही आदर भाव पैदा होता था।

पडित ने मल्लना के घर मे प्रवेश कर कहा– "मैं अथर्वणाचार्य हूँ। कुतल देश से आ रहा हूँ। विजयवाडा, वेंगीपट्टण इत्यादि मे सम्मान प्राप्त किया है। राज-राज नरेन्द्र का यश सुन कर उनके दर्शन करने के निमित्त आया हूँ। विजयवाडा की नडुबि बसति मे त्रिकाल योग सिद्धात देवर ने यह परिचय-पत्र दिया है। इसीलिए मैं आपके दर्शन के लिए सर्व प्रथम आया हूँ।"

मल्लना इस के पूर्व ही अथर्वणाचार्य तथा उन की प्रसिद्धि सुन चुके थे

उस परिचय-पत्र को मल्लना ने आदरपूर्वक ग्रहण कर आँखो से लगाया। मल्लना को सिद्ध मत्र का उपदेश करनेवाले गुरु का था वह पत्र। उसे पढने के पश्चात मल्लना ने श्रद्धापूर्वक अथर्वणाचार्य को नमस्कार किया, उन्हे पाद्य देकर कहा–"इस नगर मे आप जबतक रहेंगे, तब

तक आप मेरे अतिथि बनकर रहिये । आपकी यात्रा-सामग्री कहा पर है ?'

"धर्मशाला मे छोड आया हू ।"

'मेरे रहते आप का धर्मशाला मे ठहरना उचित नही है । तुरत यहाँ मगवाये देता हूं ।"

"मैं अपने शिष्य के हाथ का पकाया भोजन करता हूँ । आपके यहाँ अनुकूल नही हो सकेगा, यही सोच कर धर्मशाला मे छोड आया हूँ । आप के आदर भाव से हम बहुत ही प्रसन्न है ।"

"हमारे घर आप के स्वय पकाने की भी सुविधा है । अतिथियो के नियमो का पालन कर, उनका आदर करना गृहस्थधर्म है । अत: आप को यही रहना होगा ।"

इस प्रकार मल्लना ने अधर्वणाचार्य को मनवाकर उनके शिष्य के साथ अपने सेवक को भेजा और धर्मशाला से सारा सामान मगवाया ।

मल्लना तथा अधर्वणाचार्य के बीच कुशल प्रश्न हो ही रहे थे कि इसी समय भीमकवि वहाँ आ पहुँचा । मल्लना ने उन दोनो का परिचय कराया ।

"ये मत्र सिद्ध व्यक्ति है । इन की महिमा अपार है । अद्भुत कविता आवेशपूर्ण ढग से सुनाते है । इनका शुभनाम वेमुलवाड भीमकवि है ।– और ये महान पडित व कवि अधर्वणाचार्य है ।"

भीमकवि ने श्रद्धापूर्वक अधर्वण को प्रणाम कर कहा– "महात्मन ! मुझे केवल वेमुलवाड के भीमेश्वर स्वामी का प्रसाद प्राप्त है, अन्य कोई मत्र-सिद्धि नही ।"

भोजनोपरात मल्लना और अधर्वण के बीच राज राजनरेन्द्र की उदारता, दरबारी कवियो तथा पडितो की विशेषताओ पर चर्चा चली । अधर्वण ने बताया कि वह राजसभा मे अपने पाडित्य का प्रदर्शन कर सत्कार पाना चाहता है, तदनतर चोळ सम्राटो के दर्शन करने की अभिलाषा रखता है ।

मल्लना ने चीदमार्य तथा नन्नयभट्ट की विशेष रूप से प्रस्तुति की और कहा—

"राजराजनरेन्द्र पडित-पक्षपाती है । यदि आप चोळ सम्राटो से सम्मान प्राप्त करना चाहते है तो पहले पट्टमहिषि अम्मग महादेवी के दर्शन करना लाभदायक होगा । वे विदुषीमणि है ।"

"राजमाता कुदन महादेवी के नाम विशेष रूप से विजयवाडा के मठ से एक प्रशसात्मक परिचय पत्र लाया हूँ । उस पत्र की सहायता से अम्मग महादेवी के दर्शन भी शीघ्र प्राप्त हो सकते है ।" अधर्वण ने कहा ।

"कुदन महादेवी वृद्धा है । अश्रितो के प्रति वात्सल्य रखती है, फिर भी अम्मगदेवी का अनुग्रह प्राप्त करने वालो को भाग्यशाली कहना होगा ।"

"वे किस प्रकार की विद्वत्ता को अधिक पसद करती है ।"

"यह बात सरलता से कही नही जा सकती । वैसे वे सभी विद्वानो पर साधारणत अनुग्रह करती है, परतु उनके विशेषानुग्रह के लिए केवल विद्वत्ता पर्याप्त नही है । वे मनुष्यो के अतरग, स्वभाव आदि जानने मे सिद्ध-हस्त है ।"

"माने !"

"इस से अधिक विवरण देना कठिन है । हाल ही मे एक विचित्र व्यक्ति इस नगर मे आया है । कह नही सकते कि वह अभिनय करता है या सहज ही हकलापन रखता है, पर वह हकला है । हमने पहले उसे

देखने पर पडित न समझा। लेकिन बाद को हमने जाना कि वह अनेक भाषाओ मे पारगत विद्वान है। कई भापाओ मे कविता करता और सुनाता है। उसका चेहरा देखने पर अम्मगदेवी का उम पर अनुग्रह हो गया और सभी प्रकार से उम की रक्षा कर रही है।"

"उमका नाम नारायण भट्ट तो नही है?"

"नाम तो मैं नही जानता, पर हम लोग उमे हकला ब्राह्मण पुकारते है।" मल्लना ने कहा।

"उम की रूप-रेखा कैसी होती है?"

"दृढ काय, साबले रग का है, अश्वविद्या मे भी निष्णात प्रतीत होता है। मत्र-प्रयोग मे दक्ष मालूम होता है। कन्नड साहित्य का निधि है।',

"तब मदेह न रहा। वह आवश्य ही नारायण भट्ट है। वह यहा पर आकर आदर पा रहा है?"

अथर्वण के कठ मे एक अनभीनि ध्वनिन हुई। इस पर मल्लना को आश्चर्य हुआ।

"बेचारे, हाल ही मे बाण-विद्या के प्रदर्शन मे बाण लगने के कारण घायल हो गये है।"

"वह स्वभावत चुप नही रहता। सर्वत्र उसके शत्रु है, त्रैलोक्य-मल्लदेवर के यहाँ जब वह प्रधानामात्य रहा, तब उसने जैन पडिनो को जो यातनाएँ दी, इस का वर्णन नही किया जा सकता। ईश्वर की कृपा से वही नौकरी छोड कर भाग गया है। क्या वह यहा पहुँच गया है! "

"आप की कल्पना सत्य हो सकती है। मैं उस का पूर्व वृत्तात नही जानता। पहली बार सब की आँखो मे इसलिए पडा कि उसने सिधुदेशी

के अश्व-व्यापारी पर चोरी का इल्जाम लगाया। इस के चार-पाँच दिन बाद वह बाण-विद्ध हुआ।"

"हाँ, वही है! इस मे सदेह करने की कोई आवश्यकता नही है। मेरा सम्मान करना शायद उस को पसद न होगा। वह पप महाकवि कृत 'विक्रमार्जुन विजय' को महत्व पूर्ण काव्य नही मानता!"

"वहाँ पर भी उसने उस काव्य को व्यास कृत महाभारत के विरुद्ध बात कर उस की निंदा की है। मैं उस की चर्चा को सुनने मे भी असमर्थ रहा। क्या यहाँ पर भी निंदा प्रारभ कर दी?"

इस के उपरात उनका वार्तालाप नन्नयभट्टारक की सहायता को लेकर चला।

अथर्वणाचार्य मल्लना के मूँह से नन्नय की विद्वत्ता व सहृदता सुन कर उनके दर्शन करने को ललचा उठा। दूसरे दिन उनके शिष्य को भेजने पर पता चला कि नन्नय घर पर नही है।

24

प्राचीनकाल मे ही भारत और चीन के बीच विशेष सबंध रहा है। इन दोनो देशो के बीच थल तथा जल-मार्गो द्वारा आगमन चल रहा था। चोळ सम्राटो के दूत चीन मे तथा चीन के राजदूत चोळ राज्य मे भी ।

अनेक चीन यात्री भारत मे आये। उन यात्रियो ने चीनी भाषा मे अनेक वृत्तात लिखे है जिनमे अतिशक्तियाँ तथा आत्मस्तुति भी भरी हुई है। फाहियान समुद्र मार्ग से स्वदेश लौटा था। ह्यूनत्साग हिमालय की घाटियो से हो कर भारत आया और उसी मार्ग से लौटा भी।

चीनी यात्री कई प्रकार के थे। कुछ लोग ज्ञान की पिपासा ले आये हुये विद्यार्थी थे। कुछ लोग देशाटन की इच्छा रखने वाले थे, कुछ लोग गुप्तचर भी थे। अधिकाश लोग अपने आराध्य भगवान बुद्ध के चरण स्पर्श से पवित्र बने तीर्थो के दर्शन एव सेवन करने आये हुये यात्री थे। कुछ लोग धर्म प्रचारक और व्यापारी भी थे।

कतिपय लोग ऐसे भी थे, जो राजसभाओ तथा पडित सभाओ में विजय पाने की अभिलाषा से भारत का पर्यटन करते थे। ऐसे लोग बौद्ध तीर्थ तथा विश्वविद्यालयो मे गये जहाँ विशेष आदर एव प्रशसा-पत्र प्राप्त कर स्वदेश लौटते थे, जहाँ पर भारत भरके पडितो पर विजय पाने की डीग हाका करते थे।

भारत मे प्रधानत पश्चिमोत्तर मार्ग, ईशान मार्ग तथा कम मात्रा मे समुद्र मार्गों से भी विदेशी भारत मे आये, उनमे कुछ लोग हमला करने आये तो शेष लोग व्यापार, गरीबी, गुलामी तथा अन्यान्य कारणो से भी इस देश मे आये और यही पर अपना स्थिर निवास बना लिया। हिमालय के प्रात मे ऐसी जातियो मे बौद्ध धर्म का उद्भव एव प्रचार भी हुआ।

बौद्ध धर्म मे जाति एव वर्ण-व्यवस्था नही है। विदेशो से आये हुये लोगो मे ही बौद्ध धर्म की व्याप्ति हुई। यह इप प्रचार किया गया कि आर्य धर्म वर्ण-व्यवस्था (चातुर्वर्ण्य) तक सीमित है, बौद्ध धर्म समस्त मानव जाति के लिए लागू है। विजातियो मे उद्भूत हो उनके पोषण मे ही यह धर्म फैला, जहाँ-जहाँ वे शक्तिशाली बने, वहाँ-वहाँ इस धर्म का भी विकास हुआ। जब वैदिक धर्म का आन्दोलन प्रबल हो उठना था, तब बौद्ध धर्मावलबी विजातियो से मिल कर देश मे उपद्रव पैदा करने आर्येतर धर्मों की भी सहायता करते थे।

काम, लोभ इत्यादि से जाति से बहिस्कृत हो वैदिक धर्म के आश्रय को जो लोग खो चुके थे, बौद्ध धर्म की ही शरण लेते थे। उनमे पडित भी हुआ करते थे। वे वैदिक धर्म की गलत व्याख्या करते बौद्ध धर्म को वैदिक धर्मावलबी बना देते थे।

सघ के बल पर बौद्ध धर्म का विकास हुआ था। परतु अब उसमे भी फूट आ गयी थी। उसका बल भी क्षीण पड गया था। शिथिल होने वाले सघारामो के आश्रय मे स्थित समस्त शक्तियो को केन्द्रित कर वह धर्म एक बार और वैदिक धर्म से टक्कर लेने को तैयार हो रहा था। सिहल, यव द्वीप (जावा) मलया, स्वर्णद्वीप इत्यादि से आने-जाने वाले व्यापारी आवश्यक आयुध सामग्री बेचकर इस कार्य मे सहायक बनते थे।

इन्ही दिनो मे चीन का एक महा पडित कलिग से होते हुये वेगी मण्डल मे आया और राजमहेन्द्रपुर के सारगधर टीले पर स्थित सघाराम मे ठहर गया।

उमके आगमन के पूर्व ही उमका यश सारे देश मे फैल चुका था, अत जन ममुदाय उम की महत्ता का बखान किया करता था ।

वेगी मण्डल मे उम पडित के दर्शनो के लिए सारी जनता उमड पडी । उम की चरण-धूलि को कुछ लोग मर पर लगा रहे हे ।

कहते है कि उम चीनी यात्री का जन्म एक सपन्न परिवार मे हुआ है । लेकिन उस मारी सपत्ति को इम प्रकार उसने त्याग दिया है जैसे प्राचीन काल मे शाक्य गौतम ने राज्य को त्याग कर त्रिशरणो को स्वीकारा था । हिमालयो मे ढाई सौ वर्ष तक धर्म का उद्धार करने के हेतु उसने तपस्या की, गुरु से सिद्धि प्राप्त करके लोकोपकार के निमित्त सारे भारत मे यात्रा कर रहा है ।

वह यात्री अपने मर ही नही वल्कि भौहो का भी मण्डन कराता है। उसके वस्त्र पीतवर्ण के है जो मदा चमकते रहते है ।

यात्रा के समय वह किमो प्रकार के वाहन का उपयोग नही करता । सारी यात्रा पैदल ही करना है । उस के माथ शिष्य अथवा भक्तो का परिवार तक नही है । माथ मे एक जोडा वस्त्र मात्र है । उस के ग्रन्थो को ढोने के लिए साथ मे एक खच्चर मात्र चलता है ।

शरीर स्थूल है, नाक चौडी, आँखे छोटी, व चमकदार, बाहु दृढ पर नाटी, पैर भी छोटे, पर बलिष्ठ–यही उस की आकृति थी ।

कानो मे कडे जैसी लबी बालियाँ पडी थी, कठ मनुष्य की अस्थियो से निर्मित अक्षमाला थी, उसके नायकमणि के रूप मे शिशु का एक कपाल था । उसके हाथ मे सदा एक वालव्यजन सुशोभित रहता था । पैरो मे पतले चप्पल थे । यात्रा के समय वह पीठ पर बेतो से निर्मित एक पेटिका लाद लेता था । उस के एक तरफ खुली छतरी होती थी । इस प्रकार वह धूप और वर्षा से अपने को बचा लेता था ।

कहा जाता है कि त्रिपिटक उसे कठस्थ थे। चीन के समस्त शास्त्रों का वह ज्ञाता था। हिमालयो मे तपस्या करते समय उसने सस्कृत सीखी और अनेक शास्त्रो का भी विद्वानो के यहाँ अध्ययन किया। उत्तर भारत मे उसे पराजित कर सकनेवाला कोई पडित ही न था।

शास्त्रार्थ के समय छोड अन्य समयो मे वह मितभाषी था वह सदा अन्य मनस्क सा दिखाई देता था।

उसे देखते ही पिशाचग्रस्त चिल्ला पडते है, यदि वह अपने हाथ से धूलि अभिमन्त्रित कर देता या तीर्थ का स्पर्श कर देता तो समस्त प्रकार की बीमारियाँ दूर हो जाती है।

इसलिए मार्ग के दोनो तरफ तीर्थ प्रजा की भाति जन समुदाय खडा हो गया था। सब प्रकार के रोगी व विकलाग भी उसके दर्शनो केलिए उमड रहे थे। सबको वह दया सागर व करुणा की मूर्ति प्रतीत हो रहा था।

वेगी मण्डल मे उसके आगमन का समाचार जान कर भीड उमड पडी। सारगधर के टीले पर स्थित सघाराम मे उस पडित के दर्शनो के लिए सब जाति एव वर्ण के लोग आ पहुँचे।

चीनी पडित के सघाराम मे आने के दो दिन बाद राजमहेन्द्रपुर मे विवाद-पत्र बाटे गये –

"गौतम बुद्धने जगत मे जिस धर्म का उपदेश दिया, वही सच्चा धर्म है। अन्य धर्म कृत्रिम है। इस प्रतिज्ञा का खण्डन करनेवाले किसी भी समय सघाराम मे आकर चीनी पडित से तर्क कर सकते है। वैशाख शुक्ला पूर्णिमा के अन्दर इस स्वागत को स्वीकार कर चर्चा करने के निमित्त कोई न आवे तो विज्ञ यह समझेगे कि बौद्धवाद विजयी हुआ है और बुद्ध जयति के

दिन अर्धरात्रि के समय चोनी पडित को विजय-पत्र समर्पित किया जायगा।"

इस प्रकार के अनेक पत्र प्रकाशित किये गये। बडे-बडे अक्षरो मे दीवारों पर लिखाये गये। चौको पर, फलको पर लिख कर प्रदर्शित किये गये।

अलावा इसके प्रमुख पडितो के नाम विशेष रूप मे ये पत्र भिजवाये गये। नन्नय भट्ट, भीमन भट्ट, चॉदमार्य आदि को ये पत्र मिले। उन लोगो ने यह सोचकर चर्चा करने मे उपेक्षा की कि वेदो की निदा करनेवाले के साथ चर्चा करना ही दोष है।

पावुलूरि मल्लना तथा अथर्वणाचार्य के नाम न मालूम क्यो ये पत्र भेजे नही गये। किंतु वज्जिय प्रेग्गडा के यहा भिक्षा के हेतु जानेवाले एक बौद्ध श्रमण ने ये पत्र उन्हे भी पहुँचा दिये।

अथर्वणाचार्य अपनी प्रतिभा का परिचय देने केलिए उचित मौके की प्रतीक्षा मे ही था, इस पत्र को देखते ही उस का प्रत्युत्तर भेजा।

वौद्ध धर्म क्षणिक है, तुच्छ है। जैन स्था द्वाद उपादेय है। इस प्रतिज्ञा का हम निर्वाह कर सकते है। इसके निमित्त सभा का आयोजन कर उसके नियमो का निर्णय कर दे, हम सदा चर्चा के लिए तैयार है।

अथर्वणाचार्य"

यह पत्र चीनी पडित के नाम भेजकर सारे नगर मे प्रकाशित किया गया। हठात् पावुलूरि मल्लना का अहाता जैन मतावलबियो से भर गया।

25

कल तक क्रीडा द्वीप के विनोद-कार्यक्रम समाप्त हो गये थे। मल्ल-युद्ध मे राजराज नरेन्द्र का अगरक्षक राजमय्या प्रथम निकला, चन्द्रादित्य दण्डनाथ खडगयुद्ध मे अद्वितीय सावित हुआ, शूल तथा कुत प्रयोगो मे जगन्नाथ और मुप्पिमय्या पुरस्कृत हुये।

क्रीडाओ के अतिम दिनो मे युवराज, चोळ राजकुमार, कुमार सप्तक आदि ने भाग नही लिया। सम्राट भी अतिम दिन केवल पुरस्कार बाटने के निमित्त आया था। इसलिए ये विनोद नीरस थे और जनता मे कई प्रकार की अफवाहे उड रही थी।

आज राजराज नरेन्द्र न्याय का निर्णय करनेवाला था। दरबार खचाखच भरा हुआ था। राज परिवार से सबधित घटना थी, इसलिए राजाने प्रमुख नागरिको को भी उपस्थित रहने की घोषणा की। विदेशी व्यापारी भी उपस्थित थे।

वन्दी जनो की प्रशसा, कवियो के आशीर्वचन तथा कन्याओ की मगल आरतियाँ हुई।

न्यायासन पर सम्राट उपस्थित थे। चीदमार्य प्राड्विवाक था, गणक पावुलूरि मल्लना, लेखक गगचार्य था। असख्य सामत, दण्डनाथ आदि अन्य सदस्य थे।

युवराज राजेन्द्रदेव एक तरफ तथा कामराजपुत्र दूसरी ओर अन्यो-न्याभिमुखी हो बैठे थे।

राजदूत ने सभा के प्रारभ होने की घोषणा की। तत्काल बाण विद्ध ब्राह्मण दो ब्रह्म चारियो की सहायता से पार्श्व के कक्ष मे से सभा मे आया। उसके लिए विशेपरूप मे एक आसन तैयार था। बाहू की पीडा को सहते प्रयत्नपूर्वक उसने सारी सभा को प्रणाम किया और आज्ञा पाकर आसन पर उपविष्ट हुआ।

प्राड्विवाक चीदमार्य ने राजेन्द्र देव तथा कामराज पुत्र से पूछा कि इस ब्राह्मण की गवाही देने मे कोई आपत्ति हो तो सूचित करे।

"इस ब्राह्मण को क्रीडा-विनोद कार्यक्रमो के पूर्व मैंने कभी नही देखा था इसलिए मेरी कोई आपत्ति नही है।" युवराज ने कहा।

"मै भी इस ब्राह्मण को नही जानता। फिर भी युवराज के प्रति विशेष स्नेह व वात्सल्य रखनेवाले वज्जिय प्रेग्गडा के भवन मे यह चिकित्सा पा रहा है। इसलिए इस पर मेरा पूर्ण विश्वास नही है। फिर भी गवाही के पश्चात आवश्यक प्रतीत हुआ तो मै दो-चार प्रश्न पूछने की अनुमति चाहूँगा।" कामराज-पुत्रने बताया।

ब्राह्मण के सामने अग्नि होत्र रखा गया। ब्राह्मण ने अग्नि होत्र को प्रणाम कर बताया कि वह अग्नि को साक्षी बनाकर सत्य ही कहेगा। उसने अपना बयान शुरू किया–

"मेरा नाम नन्नि नारायण भट्ट है। मेरे पिता का नाम अकलका-शकनामात्य है। जाति से ब्राह्मण हूँ। मेरा हारीत गोत्र व आपस्तब सूत्र है। मेरी अवस्था चालीस वर्ष की है। फिलहाल मेरा निवास राज-महेन्द्रपुर ही है। कोई स्थाई निवास नही है।"

प्राड्विवाक ने आक्षेप करते हुये कहा– "स्थाई निवास न हो तो, इसके पूर्व का निवास, पेशा इत्यादि का विवरण देना होगा।"

"जी हाँ, बताता हूँ। आज से करीब एक वर्ष पूर्व तक कल्याण-कारक मेरा निवास था।

एक साल से देशाटन करते मेरे पूर्व पूर्वजो का निवास वेगी मण्डल मे आया। तीन वर्ष पूर्व तक मै त्रैलोक्य मल्लदेश्वर के यहाँ प्रधान मन्त्री रहा।" नारायणभट्ट ने कहा।

"चैत्रशुक्ला त्रयोदशी के दिन शाम को विनोद-कार्यक्रमो के प्रदेश मे तुम्हारी दक्षिण बाहू मे बाण का अघात हुआ?" प्राड्विवाक ने पूछा।

"जी हाँ।"

"वह किस का बाण था।"

"आयुष्मान युवराज के हाथ का बाण ही मुझ पर लगा।"

"इस के पूर्व क्या बाण ब्राह्मण वृन्द मे आये?"

"दो बाण, मेरी तरफ ही आये थे।"

"उन बाणो को किसने छोडा?"

"वे दोनो कामराज पुत्र के धनुष से निकले थे।"

"उसने भूल से ये वाण छोडे या जान बूझ कर!"

"एक ही साथ दो बाण मुझ पर ही छोडे गये है, इसलिए यही समझता हूँ कि जानबूझ कर ही ये बाण मुझ पर छोडे गये है।"

"तब वे दो बाण तुम पर क्यों न लगे?"

"एक भटने अपने दण्ड मे उनको रोका। देखिये वही।" नारायण भट्ट ने राजमय्या को दिखाया।

"तीसरा बाण भूल से जा लगा था ?"

"भूल से भी कह सकते है, जान बूझ कर भी।"

"सो कैसे ?"

"युवराज को कामराज-पुत्र अंतिम क्षण मे न हिलाते तो उनका बाण मुझे न लगता।"

"मतलब प्रयत्नपूर्वक ही तुमको मारने कामराज पुत्र ने दो बाणो का प्रयोग किया और विफल हो युवराज के बाण को हिलाया, ताकि वह तुमको जा लगे ? यही है न ?"

"यही मेरा दृढ विश्वास है। प्राड्विवाक ने मेरे भाव की सुदर व्याख्या की है।"

सम्राट ने कहा– "यह तो बडा विचित्र है ! प्राड्विवाक इस बात का पता लगावे कि कामराज-पुत्र को इस ब्राह्मण का वध करने का प्रयत्न करने के मूल मे विरोध तो नही है ?"

"तुम्हारा कामराज-पुत्र के साथ कोई वैर है ?" प्राड्विवाक ने पूछा

"मैं उस राजकुमार के मन की कल्पना कैसे कर सकता हूँ ?"

"तुम इसके पूर्व उस राजकुमार को जानते थे ?" मैं प्रत्यक्षरूप से नही जानता। यह सुना है कि राजपरिवार के रिश्तेदारो मे से एक है। हाँ, मैंने कल्याणकटक मे एक बार उनको दूसरे वेष मे देखा है !"

"ये सब बाते यहाँ पर अनावश्यक है। इस सबन्ध मे तुमको कुछ और कहना है ?"

"नही !"

नारायणभट्ट की गवाही समाप्त हुई। गडाचार्य ने उसे एक फलक पर लिखा। प्राड्विवाक ने सभा के समक्ष पढकर सुनाया। स्वीकृति पाकर एक पत्रपर लिखने का आदेश दिया।

इस पर कामराज-पुत्र ने ब्राह्मण से कुछ सवाल पूछने की अनुमति मागी। चीदमार्यने न्याय विरुद्ध मानते सम्राट की ओर देखा। सम्राट ने अनुमति दी।

"घायल होने के पश्चात आप वज्जिय प्रेग्गडा के महल मे चिकित्सा पा रहे है न ?"

"जी हाँ !"

"वहाँ पर आप दोनो के बीच इस अभियोग के सबध मे वार्तालाप हुआ है न ?"

"मेरे होश मे आने के बाद घाव के कारण पर हमारे बीच वार्तालाप हुआ है। तब तक इस अभियोग की सुनवाई नही हुई है।"

"आप को आपके सम्राट ने क्यो मत्री-पद से हटाया ?"

"उन्होने नही हटाया, मैने ही त्याग दिया।"

"किस लिये ?"

"मैं शाति के साथ नित्य नैमित्तक कर्तव्य पूरा करने का सकल्प रखता हूँ, इसलिए!"

"आप इस देश मे क्यो आये ?"

"मैने सुना कि सम्राट राज राज नरेन्द्र ब्राह्मणो पर आदर रखते है, कवि तथा पडितो के आश्रय दाता है। अलावा इसके ब्राह्मणो के निवास योग्य है, यह राज्य! ये सब बाते सुन कर आया हूँ।"

"आप का हकलापन जन्म से ही है ?"

"आप के बाणाघात से मेरा जादू का हकलापन भी जाता रहा!" सभा मे हँसी छा गयी।

'आपने कहाँ पर अध्ययन किया ?"

"काचीपुर मे।"

"क्या आप बज्जिय प्रेग्गडा के पुत्र को जानते है?"

"वह मेरे सहपाठी थे!"

"नन्नय भट्टारक को?"

"वे भी मेरे सहपाठी थे!"

"राजेन्द्रदेव को?"

"युवराज की बात पूछते हे? उन्हे इतना ही जानता हूँ कि वे युव-राज है।"

"युवराज से आप स्नेह रखते हैं?"

"क्यो नही! आयुष्मान से कौन स्नेह नही रखता?"

राज राज नरेन्द्र के चेहरे पर क्रोध की रेखाएँ खिच गयी, फिर काम राज-पुत्र प्रश्न करते ही जा रहा था।

"आप ने क्या-क्या अध्ययन किया ?"

मैं ने शस्त्र-साधना की धनुष, खड्ग, गदा, कुन्त, शूल आदि चला सकता हूँ।"

"क्या वेदशास्त्रो का अध्ययन किया ?"

"अनत वेदो का सपूर्ण अध्ययन किसने किया है? मैं कृष्ण यजुर्वेदी हूँ। इसी का मैंने थोडा-बहुत अध्ययन किया है। शास्त्रो की बात क्यो नही पूछते ?"

कामराज–पुत्र कुछ पूछने को ही था।

राजगुरु नन्नय भट्टारक का कठस्वर सुनाई दिया।

"राजपुत्र! यदि ये ही मेरे सहाध्यायी नारायण भट्ट है तो कहना होगा कि ये सरस्वती के वरदपुत्र है। इनके पाडित्य की परीक्षा देना तुम्हारे लिए व्यर्थ प्रयत्न ही साबित होगा।"

कामराज–पुत्र ने आगे कहा–"मैं निर्दोषी हूँ। युवराज के प्रति प्रेम रखनेवाले सब मिलकर मुझ पर दोषारोपण करने का प्रयत्न कर रहे है। वज्जिय प्रेग्गडा की सूक्ष्म बुद्धि को सारा राज्य जानता है!"

वज्जिय मौन ही रहा। सम्राट ने क्रोध मे आकर कहा– "अब सभासद ही दोषी का निर्णय करेगे!"

समस्त सभासदो ने मुक्त कठ से कहा– "कामराज-पुत्र ही दोषी है!"

सम्राट ने स्पष्ट शब्दो मे कहा– "कामराज-पुत्र! हमने यह सोच कर इस सभा मे न्याय निर्णय का शुभारभ किया। पर यह सिद्ध हुआ कि युवराज निर्दोषी है।

तुम्हारे अपराध का स्मरण करने पर मुझे लज्जा हो रही है। एक चालुक्यवशी राजकुमार ने एक विद्वान ब्राह्मण की हत्या करने का तीन बार प्रयत्न किया है और दो विष मे बुझे बाणो का प्रयोग किया है।

अलावा इस के तुमने अपना अपराध युवराज पर आरोपित करने के हेतु उस के नामांकित बाणो की सृष्टि की है। सभा के सम्मुख तुमने निस्संकोच यह असत्य कहने का साहस किया है कि युवराज के बाणो ने ही ब्राह्मण को आघात पहुँचाया है।

हमे मालूम होता है कि तुम धनुर्विद्या मे कौशल रखते हो। पर यह विद्या तुम को शोभा नही दे रही है। फिर भी तुम्हारे ऊपर मेरा वात्सल्य भाव है। इसलिए हमने इस के पूर्व तुम्हे जो उपाधियाँ दी, उन्हे वापस ले रहे है। तुम को केवल एक खड्ग धारण करने की अनुमति दे रहे है।"

सम्राट के ये वचन सुनकर कामराज-पुत्र ने अपनी सारी उपाधियाँ त्याग दी और जो पदक उसे प्राप्त थे, सब निकालकर राजराज के चरणो पर रख दिये। सभा आवाक रह गयी।

सभा भवन मे कामराज-पुत्र के भाई विजया दित्य, विमला दित्य विक्रमा दित्य, विष्णुवर्द्धन, राज मार्ताण्ड वगैरह थे। सम्राट ने उन्हे सबोधित कर कहा–

"तुम लोगो ने अपने भाई के प्रति स्नेहभाव से प्रेरित हो कर राज सभा के सम्मुख जो जो बाते कही, उन पर हम विश्वास नही कर सकते। मै आदेश देता हूँ कि तुम लोगो को भविष्य मे सत्य भाषण और धर्म-निरति को प्रमुखता देना होगा।"

पाँच भाइयो ने नतमस्तक हो प्रणाम किया।

राजा का सकेत पाकर राजभटो ने राजसय्या को सम्राट के सम्मुख उपस्थित किया।

"तुमने बडी सामर्थ्य के साथ दो बार इस ब्राह्मण की रक्षा की है। इसलिए हम अत्यत प्रसन्न हुये। तुम को हम दण्डनाथ का पद प्रदान कर

रहे है। भविष्य मे तुम्हे इस से अधिक तत्परता के साथ अपनी योग्यता को प्रदर्शित करना होगा!" सम्राट ने कहा।

गडाचार्य ने आज्ञा पत्र लिखकर उस पर सम्राट की मुहर लगवा दी सम्राट ने उस आज्ञा पत्र को स्वय राजमय्या को प्रदान किया। राजमय्या ने नतमस्तक हो आज्ञा-पत्र स्वीकार किया और उसे नेत्रो से लगाया। तदनतर उसे दण्डनाथ के योग्य पदक आदि प्रदान किये गये। राजमय्या ने उन पदको को ग्रहण करते हुये प्रतिज्ञा की—

"मै इस पदक को सर्वलोकाश्रय श्री राज राज विष्णुवर्द्धन महाराजा की सेवा के कार्य मे लाऊँगा।"

सम्राट ने पुन यों कहा— "कामराज-पुत्र! तुम्हारे अपराध अक्षम्य है। हम तुम्हारे प्रति वात्सल्य भाव रखने के कारण दण्ड सुना नही पा रहे है। इसलिए हम आदेश देते है कि यहाँ पर उपस्थित मन्त्री, दण्डनाथ, पडित, नारायण भट्ट, प्रौड्विवाक आदि उचित दण्ड का निर्देश करे।"

सम्राट ने इन शब्दो के साथ सब पर दृष्टि डाली। सब लोग मौन थे। प्रौड्विवाक ने कहा—

"ईश्वर की असीम कृपा के कारण बाण-विद्ध ब्राह्मण जीवित है। इसलिए इस अपराधी पर हम अधिक से अधिक कृपा दिखाये तो यही उचित होगा कि इस की सारी सपत्ति छीनकर आजीवन इसे कारावास की सजा दे।"

सम्राट ने पुन सब मान्य सदस्यो पर दृष्टिपात किया, किंतु इस बार वे सब मौन रहे।

सम्राट ने कहा— "इस का अभिप्राय है कि सभा प्रौड्विवाक के निर्णय का समर्थन करती है। आज से कामराज-पुत्र के नाम किसी प्रकार

की सँपत्ति न होगी। उसे आजीवन कारावास मे रहना होगा। पर हा, उसे केवल एक खड्ग धारण करने की अनुमति हमने दी, उस मे कोई परिवर्तन न होगा।"

लेखक गण्डाचार्य ने तत्काल आज्ञा-पत्र लिखकर प्रौड्विवाक को दिखाया। उस पर राजाधिकार सूचित करनेवाली मुहर अकित की गयी। दो राज भट कामराज-पुत्र के दोनो ओर आ खडे हुये।

कामराज-पुत्र ने नम्रतापूर्वक हाथ जोडकर निवेदन किया–

'सम्राट! मेरी एक विनती है! महाराजा कुब्ज विष्णुवर्द्धन के राज्यकाल से यह राज्य कल्याण कटक के राजाओ का सामत राज्य रहा है। मैं निर्दोपी हूँ। अत आपके निर्णय पर पुनर्विचार करने की प्रार्थना कुतलेश्वर से करने की अनुमति प्रदान करे।"

सारी सभा उसके साहस पर स्तब्ध रह गयी उसके सहोदर भाई भी चकित रह गये!

सम्राट ने भटो को अपराधी को ले जाने का सकेत किया। दण्ड देने के बाद अपराधी का मुँह देखना राजा के लिए अमगल की बात मानी जाती है!

भटोने कामराज-पुत्र के दोनो हाथ थाम लिये। हठात् उसने भटो को ढकेल दिया। वे पुन उसे पकडने के प्रयत्न मे थे। वह चिल्ला उठा–

"इस पक्षपात पूर्ण निर्णय के लिए मैं आबद्ध नही हूँ। अधर्म मुझे बदी नही बना सकता।" इन शब्दो के साथ कामराज-पुत्रने अपनी छाती मे खड्ग घुसेड लिया। और सारी सभा के देखते-देखते वह लुढक पडा।

26

कामराज-पुत्र के साहसपूर्ण वचनो पर सारी सभा स्तब्ध रही। दण्डित व्यक्ति के पास राजभटो को छोड कोई जा नही सकता था। इस लिए उसके भाई अपने अपने स्थान पर रह गये। राज भट उसे बाहर ले गये।

नन्नय भट्टारक नारायण के पास पहुँचा और उसके साथ गाढालिगन किया। दोनो के नेत्र आर्द्र हो उठे।

"नारायण क्या मैं भी इस प्रकार बदल गया हूँ जिस से तुम मुझे पहचान नही पाये?"

"सात वर्ष तक मैंने मत्री-पद जो सभाला, उस का फल है, यह!" ये शब्द कहते उसने बलात् अपनी नासिका के अग्रभाग को निकाल कर नन्नय के हाथ दिया रक्त हीन उस माँस खण्ड को देख नन्नय ने जुगुप्सापूर्वक उसे फेक दिया। इतने मे अपने कानो के दो खण्ड, दक्षिण खड भाग का एक खड निकाल कर नन्नय के हाथ देते हुये बोला— "क्या तुम मेरे इन देह-खण्डो से नफरत करते हो?"

"हाँ, यह तो बताओ, तुमने यह हकलापन कहाँ से प्राप्त किया?"

"ओह! हकलापन? मत्री-पद को त्यागने के बाद यहाँ आते-आते मा—मार्ग म मध्य मे प्राप्त हो गया।"

नन्नय ने सर उठाकर नारायण का चेहरा देखा तो उस का पूर्वरूप उसके सामने प्रत्यक्ष था ।

"वाह रे, वेषधारी !" नन्नय कुछ कहने को था कि भीमनभट्ट वहाँ आ पहुँचा । नन्नय ने उसकी ओर संकेत करते कहा– "नारायण ! इन्ही भीमनभट्ट ने तुम से दूर रहने का मुझे गुप्त रूप से एकात मे उपदेश दिया था । ये हमारे लिए पूज्य है । इन को प्रणाम करो ।"

नारायण ने भीमनभट्ट को प्रणाम किया ।

"लो, यह चेट्टनभट्ट है, भीमनभट्ट का सुपुत्र है ! इसकी कविता बडी मधुर होती है । और यह है– हमारे पावुलूरि मल्लना । हमारा आप्त मित्र है । तुमने इसके साथ वादविवाद किया था । इस की कविता शास्त्र सम्मत होती है । गणित मे पारगत है । द्रविड और कन्नड भाषाओ मे प्रवीण है ।"

इसी समय सभी कवियो ने नारायणभट्ट को घेर लिया । नन्नय के द्वारा उस की प्रतिभा से सब लोग इसके पूर्व ही परिचित थे । अलावा इसके कुछ दिन पूर्व अम्मग देवीने जो अर्चना की उस समय नारायण की कविता सुन कर सारा पडित समाज चकित हो गया था ।

"अरे, तुम आज तक चोरी की भाति मुझसे बचकर घूमते रहे । चोरी का यह काम तुमने कब से सीखा ?" नन्नय ने पूछा ।

वज्जिय प्रेग्गडाने निकट पहुँच कर पूछा– "अरे, कवि भी चोरी करते है ?"

नारायणभट्टने मदहास करते हुये कहा– "वज्जिय मत्रिवर ! मुझसे यह नन्नय पूछता है कि 'तुमने चोरी का काम कब से सीखा है ?' मैं कहने ही वाला था कि जब से मैने मत्री का पद स्वीकार किया है–अब आप आ गये मैं क्या बताऊँ?"

वज्जिय हँसते-हँसते लोट-पोट हो गया। उस के मुँह से हँसी कभी फूटती ही न थी। इस पर सारा कवि वृन्द हँस पडा।

"लगता है कि कवियो को मत्री-पद शाश्वतरूप से शोभा नही देता!" वज्जिय के ये वचन सुन कर सब कवि नारायणभट्ट को देख हँस पडे।

इतने मे नारायण भट्ट को वज्जिय के महल मे ले जाने के लिए पालकी आ पहुँची। "ओह! समझ गया, कवियो को अपने कविबधुओ को देखने पर देह के घावो की पीडा का भी पता नही चलता। वे परवश हो जाते है।" वज्जिय ने परिहास किया। वज्जिय उस दिन अत्यत प्रसन्न दीख रहा था।

नारायण भट्ट ने सब कवि बधु से विदा ली। चीदमार्य आदि पडितो को प्रणाम किया।

पालकी पर चढते नन्नय भट्ट को भी साथ चलने का अनुरोध किया।

आगे आगे वज्जिय प्रेग्गडा की पालकी तथा पीछे नन्नय और नारायण भट्ट की पालकी राजमहेन्द्रपुर के पथो से होते वज्जिय के महल की ओर बढी।

नन्नय और नारायण भट्ट ने पालकी मे चलते मार्ग मध्य मे अनेक विषयो की चर्चा की। परस्पर सान्निध्य के कारण उन दोनो के मुख मण्डल पर एक नूतन तेज दमक रहा था। दीर्घ काल के पश्चात उन मित्रो के मिलन का आनद अपार था।

एक पालकी मे चलते वे दोनो दो दीपशिखाओ की भाति दीप्तिमान लग रहे थे।

कुछ सोमयाजियो ने यज्ञ करने की अनुमति वज्जिय से मागी थी, पर वज्जिय ने उन्हे अनुमति न दी थी। इस कारण उन्हे सम्राट से यह बात निवेदन करने की भी अनुमति प्राप्त न हुई। आज पुन वे लोग राज-दर्शन के निमित्त सभा मे आये थे, किन्तु उन्हे मौका न मिला। पुन. उन लोगो से परस्पर विचार-विमर्श कर यह निर्णय कर लिया कि सभवत उस दिन कार्य-व्यस्त रहने के कारण वज्जिय ने सावधानी से उनकी बाते नही सुनी। अत आज फिर से निवेदन करेगे। यह सोच कर वे ब्राह्मण वज्जिय के महल पहुँचे और उन की प्रतीक्षा मे बैठे थे। किन्तु उन्हे देखते ही वज्जिय ने अपने भटो द्वारा यह समाचार भेजा कि आज मुलाकात करने की अनुमति नही मिल सकती।

27

गगैकोड मधुरातक राजेन्द्र चोळ न केवल राज राजनरेन्द्र का मामा था, बल्कि ससुर भी था। गगैकोड का आदेश पाकर उसके तीन सेना-पतियो ने बडी सेना के साथ आन्ध्र की कृष्णा नदी के तट पर स्थिति कलिदडि के पास कर्नाटक की सेनाओ का सामना किया। भयकर युद्ध छिड गया। उसमे परस्पर मुष्टामुष्टि, केशा-केशि, दण्डा-दण्डि, कुता-कुति हुआ। धनुषधारियो के बाणो से उभय सेनाओ के बीच अनेक सिपाही वीर स्वर्ग को प्राप्त हुये। उस युद्ध मे कर्नाटक तथा तमिल दण्डनाथो ने युद्धभूमि मे प्राण त्याग दिये। वहाँ पर राज राजनरेन्द्र ने द्रमिल दण्डनायको के नाम शिवायतन स्थापित कर मधुरातक नल्लूर गाँव का निर्माण कराया।

उस युद्ध मे कर्नाटक की सेना तितर-बितर हो गयी। उस साथ आये हुये व्रेतो ने गाय आदि को कृष्णा नदी पार करायी, कुछ समय तक जगलो मे सचार करते आखिर एक छोटे से कानन प्रदेश को साफ करके कुटियाँ बनायी। वही प्रदेश बाद को व्रेपल्ले कहलाया।

सोमिदेवी और कुपमा को चोर पिशाचो के वेश मे उठा ले आये और उस रात को उन्हे व्रेपल्ले के एक घर मे छिपा रखा। व्रेपल्ले मे जब उन्हे होश आया तब उनको पीने के लिए दूध दिया गया।

सोमिदेवी और उसकी पुत्री से कोई बोलता-चालता न था, पर उन्हे खाने की सामग्री व बर्तन दिये गये। उन पर पहरा लगा था। अगर वे भागने की कोशिश करती तो उनके साथ कठोर व्यवहार किया जाता था।

सोमिदेवी की समझ मे न आया कि उन्हे क्यो व्रेपल्ले मे उठा लाये। उनके आभूषण छुपे तक न थे। इसलिए उसने सोचा कि किसी देवी या देवता की बलि देने के निमित्त उन्हे ले आये हो।

वहाँ पर किसी देवी का उत्सव हो रहा था उसने स्वय देखा भी एक महिष की बलि दी जा रही है।

एक दिन सोमिदेवी को एक नादियावाला दिखाई दिया। वह सोमिदेवी से इनाम भी पा चुका था। उसे पुकारा, पर वह पास न आया, उसी ने स्वय जाकर पूछा– "बोलते क्यो नही ? मैंने रेशमी साडी जो दी थी ! क्या इतनी जल्दी भूल गये हो ?" इस पर भी उसने जवाब न दिया। चुपचाप वहाँ से चला गया।

सोमिदेवी को पिछली घटनाओ की स्मृति मात्र से बड़ी चिंता पैदा हुई। यह व्यक्ति यही हो जो सुबह धनदुप्रोलु मे मिला और शाम को भट्टिप्रोलु मे फिर से उस से मुलाकात हुई। सोमिदेवी विकल होने लगी। सोचने लगी कि मैंने जल्दबाजी मे आकर इस सार्थ के साथ यात्रा क्यो की।

सोमिदेवी इस प्रकार चिंतित थी, पर कुपमा उल्लास मे आकर कन्नड व तेलुगु के गीत गा रही थी। व्रेत भी तेलुगु व कन्नड मिश्रित भाषा का व्यवहार करते थे; इसलिए कुपमा शीघ्र ही गोप नारियो का प्रेम-पात्र बनी।

दुग्गव्व नामक चालीस वर्ष की नारी कुपमा से विशेष आकृष्ट हुई। दुग्गव्व की एक लडकी जो कुपमा की उम्र के बराबर थी, गत साल भर

गयी थी। उसके और कोई सनान न थी। इसलिए कुपमा को देखते ही उसे अपनी पुत्री की याद आने लगी। वह बराबर अपनी लडकी की बोल व करनियो का स्मरण कर जताती-वह ऐसा बोलती, यह करती वह करती, वगैरह। कुपमा दुग्गव्व की चेष्टाओ का अनुकरण करती, इस पर दुग्गव्व रो पडी।

त्रेपल्ले मे देवी उत्सव समाप्त हो गया। इसलिए सोमिदेवी का डर जाता रहा कि अब इस की बलि नही दी जायगी। वहाँ भोजन आदि की अच्छी सुविधा थी। सोमिदेवी को लगता था कि वह किसी दूसरी दुनिया मे है।

सोमिदेवी सोचने लगी-पोन्न मोटुपल्लि क्यो न आया। उस के परिचारक क्या हो गये! खच्चर का क्या हुआ? श्री नारायणभट्ट कहाँ पर है। कुशल तो है न। वे कैसे जानेगे कि हम दोनो यहा पर है। क्या यहाँ से हमे छुटकारा कभी मिल सकता है? हमे दुर्गादेवी की कृपा कब प्राप्त होगी।

'दुर्गे! स्मृता हारसि भीति मशेषजैनो।"

28

राजमहेन्द्रपुर मे विनोद-कार्यक्रम समाप्त हो चुके थे। सामत एव दण्डनाथ भी राजा की अनुमति लेकर अपने प्रदेश को लौट रहे थे।

एक दिन मध्याह्न के समय अम्मगदेवी के अत पुर मे शतरज का अयोजन था। अम्मगदेवी के लिए यह खेल अत्यन्त प्रिय था। राजराज नरेन्द्र ने इस खेल का अच्छा अभ्यास किया था अत पुर मे शतरज खेलते समय बुजुर्गों तथा प्रिय पात्रो को निमत्रण भेजने की परिपाटी थी। ऐसे निमत्रण पानेवाले व्यक्ति वे ही होते है जो राजा का आदर प्राप्त कर चुके हो।

वैसे वज्जिय प्रेग्गडा तथा नृपकाम दण्डनाथ को सामन्यत निमत्रण जाते थे। आज युवराज राजेन्द्रदेव तथा उसके साथी करुणाकर तोडमान और जयगोडर को भी निमत्रण गये थे। नारायण भट्ट भी निमत्रित था।

यह क्रीडा कुछ गुप्त रूप मे ही होती थी। प्रेक्षको को क्रीडा की विशेषताओ का अन्यत्र उल्लेख करना मना था। कभी इस नियम का अतिक्रमण कोई करता तो फिर उसे आइदा निमत्रण न जाता।

शतरज के लिए एक विशाल कक्ष निर्दिष्ट था। उसमे थोडे से ही लोग समाविष्ट हो जाते। सेवक भी घटा नाद सुनकर उपास्थत होते है। वायुसचालन के निमित्त सेवक वायु चालनिको को कक्ष के वाहर रह कर

सूत्रो द्वारा खीचा करते फल, रस, जल ताबूल इत्यादि पहले ही व्यवस्था पूर्वक रखवा देते

कक्ष के मध्य भाग मे विशाल फलक पर सफेद व काले खाने होते थे। एक मानिक का बल है तो दूसरा इद्रनील का बल है। अम्मगदेवी ने यथा प्रकार मानिक-बल को स्वीकार किया। राज राजनरेन्द्र ने इन्द्रनील बल को।

शतरज कई दिन व मास-पर्यन्त भी खेलने की परिपाटी भी है। पर आज समय का बधन रखा गया था।

शतरज का खेल युवराज बडी उत्सुकता से देख रहा था। खेल के प्रारभ होने के पूर्व उस दिन अम्मगदेवी ने युवराज तथा उसके दो दाक्षिणात्य मित्रो को सहायक चुना। सम्राट मदहास कर उठे।

"शतरज मे भी महारानी चोळवेश के प्रति सहानुभूति रखती है।" सम्राट की बातो पर महारानी का मुखमण्डल प्रेम मिश्रित लज्जा से लाल हो उठा।

"महाराज, क्या युवराज भी चोळ है?" "नही" किंतु महारानी चालुक्यो को भी चोळ वशियो मे बदल रही है।"

"करूणाकर तोडमान के पूर्वज पल्नाटि के पल्लव यह आन्ध्र वासी हैं, दक्षिणात्य नही।" वज्जिय प्रेग्गडा ने कहा।

"आज खेल के निर्णायक के रूप मे मैं कुतल देश से आये हुये नारायण भट्ट की अभ्यर्थता करती हूँ।" महारानी ने कहा।

"क्रीडा की बात हम नही जानते, पर आज महारानी बातो मे महाराजा को बाध रही है।" मदहास के साथ राजा ने कहा।

"महाराज, पूज्य श्री वज्जिय प्रेगडा, नृपकाम दण्डनाथ, राजगुरु नन्नय भट्टारक के आपके पक्ष मे रहते चिता की कोई बात नही है।" रानी ने कहा।

नारायण भट्ट निर्णायक के आसन पर विराजमान हुआ। गणाधिपति आदि का स्मरण करके क्रीडा प्रारभ करने की आज्ञा दी।

अम्मगदेवी क्रीडा मे कुशल है। राज राज की चाल सूक्ष्म होती है। इसलिए दर्शको को ऐसा प्रतीत होता है कि महारानी की ही विजय होगी। लेकिन साधारणत राज राज ही विजयी हुआ करते है। आज अम्मगदेवी ने इस खेल मे अनुभव न रखनेवाले युवको को अपने सहायक चुन लिया था, इसलिए थोडी लापरवाही दिखाने लगे। राजा के सहायक वज्जिय और नृपकाम दूर पर चर्चा मे निमग्न थे। पर नन्नय भट्टारक चुपचाप खेल का अवलोकन कर रहा था।

खेल की अवधि कम थी। महारानी का खेल प्रशसनीय था। युवराज तथा उसके दाक्षिणात्य मित्र भी काचीपुरम के खिलाडियो की चालो का परिचय दे सब प्रकार से महारानी की सहायता कर रहे थे।

सम्राट को जल्दी खेलने का अभ्यास न था। अलावा इस के आत्म विश्वास के आधिक्य से लापरवाही दिखाते एक पैदल सिपाही और एक रथ को खो बैठे। घोडो को आगे बढ़ने का मौका न था। अम्मग देवी के घोडे सारे फलक पर स्वेच्छापूर्वक विहार कर रहे थे।

वज्जिय प्रेगडा का ध्यान शायद और कही था। वह शतरज के मोहरो की चाल का परिशीलन नही करता था परतु अचानक वह चिल्ला पडा–" महाराज, आप किले मे शीघ्र न पहुँच गये तो महारानी की विजय निश्चित है।"

"ओह् प्रेग्गडा जी, क्रीडाओ मे भी आप महाराज की पराजय हमारे हाथो होना पसद नही करते ।" महाराणी ने कहा ।

राज राजनरेन्द्र ने तुरत अपने राजा को दुर्ग मे प्रवेश कराया । इस से अम्मगदेवी की सारी चाले व्यर्थ हो गयी ।

"महारानी जी, दुर्ग को भेदने की युवराज की कुशलता देखने की मेरी बडी इच्छा है ।" वज्जिय की इन बातो पर सब हर्षित हुये ।

"पुत्रा दिच्छे त्पराजयम!" नारायणभट्ट ने कहा—

अम्मगदेवी की सेना सम्राट के दुर्ग पर हमला कर बैठी, रानी की सेना ही सम्राट की सेना से आगे चल रही थी । सम्राट सभी दुर्बल प्रदेशो को दृढ बनाने लगा । महारानी के सिपाहियो ने सम्राट के एक घोडे को मारा । तब अम्मगदेवी सम्राट की दुर्बल स्थानो की ओर अपने बल को बढाने लगी ।

इसी समय युवराज ने अम्मगदेवी को दो चाल सुझायी, वे चाल स्पष्ट रूप से व्यर्थ मालूम होती थी, फिर भी अपने प्रिय पुत्र की इच्छा की पूर्ति के लिए अम्मगदेवी ने मोहरो को आगे बढाया ।

सम्राट को ऐसे व्यर्थ प्रयत्न करना कतई पसद न था । उसने अनादर भाव से युवराज की ओर देखा । युवराज ने सर झुका लिया । नारायण भट्ट मदहास कर उठा ।

इसी समय वज्जिय ने सलाह दी— "महाराज महारानी के दल जबर्दस्त हमला करने जा रहे है, आप को तुरत दुर्ग छोडना होगा ।"

सम्राट ने युवराज की जिन चालो को व्यर्थ समझा था, वे ही चाले राजा के दुर्ग को भेदने के लिए तैयार थी । अपने पुत्र की प्रतिभा पर प्रसन्न हो सम्राट ने युवराज की पीठ थपथपायी ।

"प्रेग्गडा के कितनी आँखे है !" रानी ने पूछा— "सहस्त्र शीर्षा पुरुष सहस्त्राक्ष स्सहस्त्रपात् !" नारायण भट्टने कहा ।

सम्राट ने अपने राजा को दुर्बम स्थानो मे भेज कर उस मार्ग द्वारा एक दूसरे किले मे पहुँचा दिया । इस मे सहायता देने वाले सम्राट के हाथी को महारानी ने अपना हाथी दे कर हटाया । यो ता नुकसान दोनो के लिए समान था, पर सम्राट का बल कुछ आर घट गया ।

इस प्रकार सम्राट चोट पर चोट खाते अपने बल से बचित होन लगा , फिर भी जैसे नैसे सभल जाता था

इतने मे पूर्व निश्चित अवधि पाच घडियाँ समाप्त हुई । नारायण भट्ट ने मदहास करते घोपित किया कि खेल बराबर है । न किसी की हार न किसी की विजय !

"प्रेग्गडा की बुद्धि कुशलता ने सम्राट को आज बचाया ।" महारानी की इन बातो पर सब मदहास कर उठे ।

29

थोडी देर विश्राम करने के पश्चात एक और प्रकार खेल प्रारभ हुआ। नृपकाम दण्डनाथ ने एक बडी तस्वीर मत्री वज्जिय प्रेग्गडा के सामने रखा। उस मे नदी, पहाड, जगल, नगर और राज-पथ चित्रित थे, एक दूसरी तस्वीर मे स्थल व जल-दुर्ग चित्रित थे। उस मे प्राचीर, द्वार, खाइयाँ स्पष्ट अकित थी। कुछ और छोटी-बडी तस्वीर भी प्रस्तुत की गयी। नृपकाम दण्डनाथ ने उन सबका भलीभाति परिशोलन किया।

वज्जिय प्रेग्गडा ने युवराज तथा उसके चोळ मित्रो का परामर्श करके पूछा "युवराज, क्या यात्रा की तैयारी पर विचार किया ?"

"हम अनुभव नही रखते! यथाशक्ति हमने गत तीन दिनो से विचार-विमर्श कर लिया है, फिर भी हमारी योजनाओं की स्वीकृति आप, दण्डनाथ, सम्राट और मातृदेवो से प्राप्त हो जाये हम कृतार्थ समझेगे। युवराज ने उत्तर दिया।

इस के उपरात वज्जिय प्रेग्गडा की सलाह पर नृपकाम दण्डनाथ ने युवराज को सेना-सचालन, व्यूह-रचना, नदी-नाले, जगल व पर्वतो को कब कैसे पार करना है, इत्यादि का विशद वर्णन करते समझाया।

नृपकाम दण्डनाथ प्रश्न पूछते जाते थे, युवराज उनको उत्तर देता जाता था। वज्जिय केवल निरीक्षण कर रहे थे।

आधी रात तक मत्रणा चलती रही। अत मे नृपकाम ने सम्राट से निवेदन किया–"महाराज, युवराज और उनके मित्र अत्यन समर्थ है। उन पर हम यह उत्तरदायित्व रख सकते है। उनकी कल्पना व योजनाएँ मौलिक है। अगर इस प्रकार की मौलिक योजनाओ का परिचय मेरी युवावस्था मे मुझे होता तो सभवत मैं इस के पूर्व कुछ युद्धो मे पराजित न होता।'

नृपकाम की बातो से सम्राट और सम्राज्ञी परमानेदित हुये ।

युवराज ने नृपकार के चरण छूकर प्रणाम किया। युवराज की विनय पर राजा भी मन ही मन अत्यत आनदित हुआ।

"महाराज, हमारे इस प्रयत्न मे युवराज अवश्य विजयी होगे। फिर भी सभी कार्य हमारी कल्पना के अनुरूप नही होते इसलिए सतर्कता के लिए समय पर युवराज को आवश्यक मत्रणा देने के निमित्त एक अनुभवी वृद्ध व्यक्ति को साथ भेजना श्रेयस्कर होगा।' नृपकाम ने सम्राट को सुझाया।

"इस कार्य मे आप से बढकर अनुभवी कौन हो सकते है, नृपकाम?" सम्राट ने कहा।

"महाराज, इस कार्य मे दण्डनाथ को श्रम नही देना चाहिये नृपकाम को युवराज के साथ भेजने पर सारा भार उनपर पडेगा। युवराज को यदि युद्ध का अनुभव प्राप्त करना है, तो नृपकाम को उनके साथ भेजना उचित न होगा।" वज्जिय प्रेग्गडा ने सुझाया।

"तब तो युवराज का कवच बनकर उसकी रक्षा करने वाला कौन है?" सम्राट ने पूछा।

"यही बात हमे सोचनी है, नारायण भट्ट को साथ भेजना उचित होगा?

"नारायण भट्ट अनुभव न रखते तो हमारे प्रधानामात्य उन का नाम न सुझाते ! आपका विचार स्वागतई है ।...भट्टारक । आपका घाव कैसा है ?" राजराज ने प्रश्न किया ।

आपकी कृपा से बहुत कुछ भर गया है, महाराज ।" नारायण भट्ट ने निवेदन किया ।

"मै नन्नय भट्टारक की भी सलाह लेना चाहता हूँ । नन्नय, तुम्हारा क्या विचार है ।' वज्जिय ने पूछा ।

"युद्ध सबन्धी बाते मै क्या जानता हूं ।" यात्रा का मुहूर्त निर्णय कर सकता हूँ ।" नन्नय ने कहा ।

नृपकाम के प्रश्नो से उसे इस बात का विश्वास हो गया कि नारयण भट्ट यद्ध सबन्धी अच्छा अनभव रखता है ।

नारायण भट्ट जी ! आप ने हमारे विचार सुन लिए यह बताइय कि हमारी योजना के कोई तृटि तो नही है ?"

थोडी देर तक सोचने के उपरात नारायण भट्ट ने कहा—" आप की योजना प्रशसनीय है, किंतु मेरा एक सदेह है । भ्रमर कोट्य के अधिपति मधुरातक देवने गुप्त रूप से हमारी सहायता करने की जो प्रतिज्ञा की उस पर यह यात्रा कितने अशो मे निर्भर है । किसी कारण वश यदि समय पर हम उस की सहायता प्राप्त न हो तो हमारी सेनाओ का क्या होगा ?"

"ऐसी हालत मे एक और सेना-समूह हमारी सहायता के लिए सन्नद्ध रहना चाहिये । फिर भी चक्रकोट्य शीघ्र हमारे अधिकार मे न आवेगा, इसके लिए कम से कम एक वर्ष लग सकता है ।" युवराज ने तत्काल उत्तर दिया ।

इसके पश्चात वज्जिय ने युवराज तथा उसके साथियों को समझाया कि ऐसी स्थिति उत्पन्न न होगी। यदि उत्पन्न हो तो भी सहायता के लिए सेना कब, कहाँ तैयार रहेगी, इत्यादि का विवरण दिया।

वज्जिय तथा नृपकाम के सुझाव पर सम्राट ने नारायण भट्ट को चक्रकोटय पर आक्रमण की यात्रा मे मन्त्रित्व का भार ग्रहण करने की अभ्यर्थना की। नारायण भट्ट ने अपनी स्वीकृति देते हुए कहा-- 'युवराज की प्रथम युद्ध-यात्रा सफल होनेवाली है। ऐसी हालत मे साथ रह कर यश प्राप्त करने मे आपत्ति क्यो हो सकती है?

नन्नयभट्टने युद्ध यात्रा के प्रस्थान के आशीर्वाद दिये।

वज्जिय ने युवराज को समझाया-- "युवराज, इस युद्ध यात्रा की सफलता के हेतु हम समस्त प्रकार के प्रयत्न करेंगे। वैशाख शुक्ल पूर्णिमा के पहले जितनी जल्दी तुम चक्रकोटय पर अधिकार करोगे, उतना ही अच्छा है। धारावर्ष सामान्य व्यक्ति नही। उसके गुप्तचर राजमहेन्द्रपुर मे उलझने पैदा कर रहे है। वैशाख पूर्णिमा के दिन हम यहाँ व्यस्त रहेंगे। इसलिए तुम लोगो को पूर्णत हम पर निर्भर नही रहना चाहिये।

"चन्द्रादित्य दण्डनाथ हमारे विश्वास पात्र एव समर्थ व्यक्ति है। उसके नेतृत्व मे गुप्तरूप से अभी बहुत दूर चली गयी है। सभवत वे सेनाएँ इस वक्त भ्रमर कोटय के समीप पहुँच गयी होंगी। तुम, तुम्हारे साथी और नारायण भट्ट शीघ्र प्रस्थान करो और उन सेनाओं का सर्वाधिपत्य ग्रहण करो।

कई साल पूर्व तुम्हारे मातामह राजेन्द्र चोळ देवने गगा की यात्रा के समय चक्रकोटय से होते हुये जा कर विजय प्राप्त की। हमारा विश्वास है कि तुम्हारी चक्रकोटय की यह यात्रा विजय-परंपरा का सोपान होगा।"

सबने 'तथास्तु !' बताया।

दूसरे दिन ही युवराज की युद्ध-यात्रा के लिए शुभ मुहूर्त निश्चित किया गया।

परतु शत्रुओ को गफलत मे डालने के ख्याल से यह घोषणा करके राजधानी मे उत्सव मनाया गया कि युवराज अपने मित्रो के साथ काची-पुरम मे अपने मातुल के दर्शन करने के निमित्त जा रहा है।

30

चक्रकोटच मण्डल राजमहेन्द्रपुर के उत्तर-पश्चिम मे बसा था। इस मण्डल के उत्तर भाग मे दक्षिण कोसलवासी तथा दक्षिण मे आन्ध्रवासियो का निवास था। इस मण्डल की पूर्वी दिशा मे कलिग, दक्षिण मे आन्ध्र, पश्चिम मे कर्नाटक और राष्ट्रकूट तथा उत्तर मे कोसल थे। अत यह प्रदेश अनेक भाषाओ का केन्द्र था। इस मण्डल की उत्तरी सीमा पर वज्रपुर नामक विश्वविख्यात वाइरानगर है। उस के समीप न केवल उत्तम जाति के हीरे मिलते है, अपितु उस के समीप के जगलो मे हाथी भी मिलते है, अत वहाँ पर हाथी-दात की बनी वस्तुओ का विक्रय भी होता है।

फिर भी यह मण्डल बराबर हमलो का शिकार हुआ करता था। बहुत समयपूर्व कोसलाधिपति विजयादित्य ने इसी मण्डल से होते हुये दक्षिण की यात्रा की ओर त्रिलोचन पल्लव से लडते परलाकवासी बना। उसका पुत्र विष्णुवर्द्धन ने यह वृत्तात अपनी माता के द्वारा जान लिया, चळुक्य पर्वत पर तपस्या करके त्रिलोचन पल्लव को पराजित कर उसकी पुत्री उत्तम देवी के साथ विवाह किया। इस प्रकार वह चाळुक्य वश का जनक बना। अलावा इसके राजेन्द्रदेव के आक्रमण के पच्चीस वर्ष पूर्व राजेन्द्र चोळ गगा तट तक विजय-यात्रा के लिए चल पड़ा। पहले चक्र-कोटच मण्डल पहुँचा। उसे जीतने के बाद कलिग, तथा गगा तक यात्रा की। अनेक कुओ मे गगा-जल मगवाकर 'गगैकोड चोळ' नामक उपाधि

प्राप्त की। साथ ही समुद्री तट पर गगै कोंड चोळपुर नामक नगर का निर्माण कराया वहाँ पर गगाजल डलवाया। अलावा इस के चक्रकोटच-पुर बरावर राजाओ के हाथो मे बदलता रहा है। कलिग, वेगी, कर्नाटक-राष्ट्रकूट, कोसल इनमे जब जो बलवान होता, तब वह इस मण्डल पर अधिकार कर लेता था। फिलहाल वह राज राजनरेन्द्र का सामत मण्डल था। इस मण्डल के मध्यभाग मे इद्रावती नदी पूर्व से पश्चिम वहाँ से दक्षिण की ओर बह कर गोदावरी मे मिल रही है। जहाँ यह नदी पश्चिम से दक्षिण की ओर मुडती है, वही पर राजधानी चक्रकोट्य है। जहाँ गोदावरी मे यह नदी मिलती है वहाँ उसके सामत मण्डलो का मुख्य नगर भ्रमरकोटच है।

चक्रकोटच का महा मण्डलेश्वर जगदेक भूषण उपाधि प्राप्त धारा-वर्ष है। यह सैंधव वशी है। कहा जाता है कि इस वश का मूल पुरुष सिंधुनदी गर्भ मे स्थित अहिक्षेत्रपुर के अधिपति धारणीन्द्र नामक नाग राज को मानव रूप मे उत्पन्न पुत्र है। उस के जन्म के तुरत बाद एक व्याघ्र ने उसे उठा ले जाकर दूध पिलाया और उसे पाला। बडे होने पर उसने कदब राजकुमारी से विवाह किया और उनके तीन पुत्र हुये। वे तीनो पुत्र तीन सैंधव वशो के जनक हुये उनमे से एक वश का व्यक्ति यह धारा-वर्ष है।

ये लोग अपनी ध्वजाओ पर तक्षक, वासुकी, अनत इत्यादि नाग-चिह्नो के साथ वश के मूल पुरुष को पालनेवाले व्याघ्र का चिह्न भी अकित करते है। इन की कुलदेवी विन्ध्यवासिनी देवी है।

अनेक प्रदेशो के बीच मे अवस्थित होने के कारण चक्रकोट्य के अधिपति एक के अधिकार से बचने के लिए दूसरे की सहायता पाकर उनके सामत बन जाते थे। इसकेपूर्व वे राष्ट्रकूट तथा कर्नाटक चालु-क्यो के सामत रहे थे। धारावर्ष के पिता वेगी चालुक्य तथा गगैकोंड चोळ की सहायता पाकर कर्नाटक चालुक्यो का सामना करके वेगी

चालुक्यो का सामन्त बन गया था। वेंगी का शासक इस महामण्डलेश्वर के प्रति विशेष आदर भाव रखता था। पर धारावर्ष को यह भी पसद न था। इस वर्ष चैत्र मास मे कर्नाटक चालुक्यो ने वेंगी राज्य पर आक्रमण करने का निश्चय किया और धारावर्ष के पास समझौते के लिए दूत भेजा।

कर्नाटक चालुक्यो के दूतो ने यह बताया कि धारावर्ष की इच्छा के अनुरूप उस के राज्य की सहायता के निमित्त अनेक सेना-दल भेजने को त्रैलोक्यमल्लदेव तैयार है। धारावर्ष जानता था कि दूसरे राज्य की सेनाओ को अपने मण्डल मे रखना अपने लिए ही खतरनाक है, इसलिए उसने घोडे और आयुध-सामग्री की माग करके उन्हे मगवा लिया।

चक्रकोटच ठीक इद्रावती नदी के मोड पर है। वहाँ पर बष्ठि स्थल एव जलदुर्ग है। उसके उत्तर एव पश्चिम मे खाई के रूप मे इद्रावती नदी बह रही है। उन दिशाओ मे दुर्ग के प्राचीन अत्यत दुर्भेद्य है। पूर्वी व दक्षिणी दिशाओ मे मजबूत प्राकार है, उनकी रक्षा के निमित्त सेना व आयुध सामग्री है। धारावर्ष ने इस दुर्ग के भागो को और दृढ बनवाया। सारे दुर्ग को खाद्यपदार्थो से भर दिया। युद्ध के इन प्रयत्नो मे धारावर्ष की इकलौती बेटी विन्ध्यवासिनी ने उस की बडी सहायता की। धारावर्ष ने अपनी पुत्री को ही पुत्र मानकर राजोचित समस्त प्रकार की विद्याएँ सिखायी। वह भी पुरुषवेष धारण करती थी। उसने यह प्रतिज्ञा की थी कि जो राज-कुमार समस्त प्रकार की शस्त्र-विद्याओ मे उसे पराजित करेगा, उसके साथ वह विवाह करेगी।

धारावर्ष ने इस वर्ष राज राजनरेन्द्र की सेवा मे उपहार नही भेजे और न उस महासभा मे भाग लिया या प्रतिनिधि भेजा। उस का विचार था कि कर्नाटक चालुक्यो के आक्रमण के परिणाम देखकर धीरे-धीरे स्वतत्र बन जाय।

यह विचार करके धारावर्ष चुप न रहा। उसने असख्य गुप्तचरों को राजमहेन्द्रपुर तथा वेंगी राज्य के अन्य शहरो मे भी भेज दिया। वे लोग अपने को फारसी सैंधव व कलिग व्यापारी बताते हुये व्यापार कर रहे थे। उन लोगो ने सोचा कि सारगधर-टीलेवाला सघाराम उनके इन प्रयत्नो के लिए अधिक अनुकूल होगा।

फारस से लाये तेल का व्यापार करनेवाले व्यापारी धारावर्ष के गुप्तचर थे। वे लोग प्रकट मे तेल के पीपो को दिखाते हुये नावो पर अनेक खड्ग, आयुध इत्यादि मगवाकर सघाराम मे सुरक्षित रखा। नारायण भट्ट के सेवक पोन्न ने इनके रहस्यो का पता लगाया और इस की सूचना रार्पनि बेतय नायक को दी। इसीलिए राजभटो ने फारस के व्यापारियो को बदी बनाया।

दूसरे दिन फैसला के समय पोन्न को अदालत मे आने से रोकना चाहा। इसके दो-तीन पूर्व से ही रातो मे पोन्न नावो के बीच तैरते उनके रहस्यो का पता लगाने मे सलग्न था। वह स्थूलकाय व्यक्ति था इसलिए उन लोगो ने पोन्न को बडी आसानी से पहचान लिया। एका, दशी के दिन रात को पोन्न उन नावो के बीच गोदावरी मे तैर रहा था- तब सघाराम के यमभट षट्क ने उसे पकड कर एक कोठी मे बन्द किया। अगर उस की हत्या कर देते तब भी उन का काम सरलता से बन जाता, मगर उन लोगो ने सोचा कि उसे अपनी अधीन मे रखने से विशेष लाभ दायक होगा। वह दो दिन तक उसी कोठी मे बन्दी था।

दो दिन पर्यत पोन्न के न्यायालय मे उपस्थित न होते देख उस की गवाही लिये बिना ही प्राड्विवाक की सलाह पर तेल के व्यापारियो के अभियोग का फैसला सुनाया, गया। सभी सदस्यो ने एक मत से यह विचार व्यक्त किया कि दो व्यापारी दण्ड के अधिकारी है और सेवक क्षमा करने योग्य है। विक्रय करनेवाले द्रव्यौं मे मिलावट करना बडा अपराध है। इसलिए उन दो व्यापारियो को एक एक वर्ष का कारावास का दण्ड

और एक हजार गद्याण जुल्माना लगाया गया। उस धन मे से थोडा भाग तेल खरीद कर नुकसान पाये हुये लोगो मे बाटने का गुरुनाथ श्रेष्ठी ने फैमला सुनाया। तीनो सेवको को मुक्त किया। उन्हे रिहा करने के दूसरे क्षण ही राजभटो ने फिर उन्हे बन्दी बनाया। वह राजद्रोह का अपराध था। उस का फैमला होना था।

पोन्न के बन्दी बन जाने पर उस की गवाही के प्राप्त न होने से सेवक तो बच गये, मगर राज-बधन से बच न पाये। नारायण भट्ट जिस दिन बाघाघात हो वज्जिय के घर गया था, उस रात को उसने वज्जिय से कहा था कि दो दिन से पोन्न दिखाई नही देता है। उसी रात को वज्जिय ने गुप्तचरो से जान लिया कि एक स्थूलकाय व्यक्ति सघाराम मे दो दिन से बदी है। तुरत वज्जिय ने गुप्त सेवको को भेज कर सघाराम से पोन्न को मुक्त कराया। बेताय नायक ने वहाँ पर जो चीजे पायी उस से सारी बात उसने स्वय समझ ली।

वज्जिय सहस्त्र नेत्रों से धारावर्ष के गुप्तचरो पर निगरानी रखते उस की प्रतिक्रिया सोच रहा था।

वज्जिय को पहले ही मालूम हो गया कि कर्नाटक के अधिपति नाहवमल्ल सोमेश्वर की सेनाएँ वेंगी पर हमला करने को सन्नद्ध हैं। उन सेनाओ का समाना करने के लिए वज्जिय ने दुर्गो को मजबूत बना कर समर्थ दण्डनाथो के नेतृत्व मे सेनाएँ रखी। हठात उनका सामना करना कठिन भी था, इसलिए वज्जिय की सलाह पर अम्मगदेवी तथा राज राजनरेन्द्र ने चोळ सम्राट राजाधिराज के पास दूत भेजे। राजाधिराज अम्मगदेवी का भाई था। उस का छोटा भाई राजेन्द्र चोळ वेंगी के युवराज राजेन्द्र देव का श्वशुर था। इस लिए वेंगी राजा का समधी था। उस के पास भी विशेष रूप से दूत भेजे गये। उन चोळ भाइयो ने दो दिशाओ से कर्नाटक चालुक्यो पर आक्रमण करके उन का सर्वनाश करने की स्वीकृत दी और वे उचित प्रयत्न कर रहे थे।

धारावर्ष की अवहेलना के लिए उसे दण्ड देने मे वज्जिय विलब करना नही चाहता था। भ्रमरकोट्य के अधिपति मधुरातक देव को वज्जिय ने अपना विश्वासपात्र बना लिया था। अलावा इस के विज्य सभा के दूसरे ही दिन चन्द्रादित्य दण्डनाथ के नेतृत्व मे बडी सेना देकर गुप्त मार्ग से चक्रकोट्य पर आक्रमण करने की आज्ञा दी थी। पहले वह सेना भ्रमरकोट्य पर अक्रमण करेगी, अतरगी मित्र मधुरातक देव उनके वशवर्ती हो जायगा। इसके बाद चक्रकोट्य पर हमला होगा। चन्द्रादित्य सेना की सहायता के लिए थोडी और सेना देना सब पर युवराज को अधिकार दे चोळ मित्र व नारायण भट्ट के साथ वज्जिय ने युवराज को भेज दिया था।

राजमहेन्द्रपुर तथा वेगी मण्डल के अन्य जिन प्रदेशो मे बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। उन सब प्रदेशो मे विद्रोह के प्रयत्न हो रहे थे। उन प्रयत्नो मे--'चन्द्रग्रहण, बुद्ध जयति शब्द सकेतिक रूप मे प्रचार पा रहे थे। ज्योतिषियो ने बताया था कि इस वर्ष वैशाख शुक्ला पूर्णिमा को चन्द्रग्रहण होगा। उसी दिन बुद्ध जयति थी। इसलिए बौद्धो ने इन शब्दो को साकेतिक रूप मे ग्रहण किया। अलावा इस के राज राजनरेन्द्र चन्द्रवशी राजा है और उसे राज्य-भ्रष्ट करने का बौद्धो ने सकल्प किया। यहाँ चन्द्रग्रहण और बुद्ध जयति है। वज्जिय ने समझ लिया था कि वैशाख पूर्णिमा के दिन विद्रोह होगा। इसलिए उसे कुचलने के लिए कठोर आदेश दे रखे थे।

वज्जिय चाहता तो कभी इस विद्रोह को दबा देता, इसके लिए पहले बौद्ध सघारामो पर आक्रमण करना होगा। तब लोग सोचेगे कि अन्य धर्मो के प्रति अन्याय किया जा रहा है। इस लिए वह चाहता था कि विद्रोह के फैलने पर सभी राज द्रोही एक साथ हाथ मे आ जायेगे।

अगर विद्रोह समय से पूर्व ही फूट पडे। तब भी उसे दबाने के लिए वज्जिय ने नृपकाम दण्डनाथ की सहायता की अभ्यर्थना की थी।

वज्जिय को मदेह था कि धनुर्विद्या के प्रदर्शन के दिन कोई दुर्घटना होगी। यही कारण है कि सम्राट उस समय उपस्थित हुआ था।

इस प्रकार एक ओर धारावर्ष तथा दूसरी तरफ त्रैलोक्य मल्लदेवर के प्रयत्न चल रहे थे, पर उन सबका सामना करने के लिए वज्जिय आवश्यक प्रतिक्रियाएँ कर रहा था। वेगी राज्य के राज कर्मचारियों मे उनके जैन थे। वज्जिय की दूरदर्शिता थी।

31

नारयण भट्ट का नाम सभा भवन मे जिस दिन प्रकट हुआ, उस दिन से प्रति नित्य नन्नय भट्ट उसे देखने जाने लगा। बचपन की मित्रता के स्मरण आते ही उस का हृदय आद्र हो उठा और वह सोच कर भी समझ न पाया कि इतने दिन वह अपने मित्रसे दूर कैसे रह सका।

महाभारत का प्रवचन नन्नय के निवास पर चलता ही रहा। कभी कभी श्लोक का अर्थ समझ ने के बदले नन्नय स्वय तेलुगु की कविताएँ सुनने लगा। उसके हृदय से अप्रयत्न ही जो तेलुगु कविता की स्रवति निर्गत होती थी। उस पर वह स्वय चकित था।

नारायण भट्ट जिम समय चक्रकोट्य की यात्रा के लिए प्रस्थान कर रहा था, उसी समय उसे यह दुखद समाचार मिला कि उस की पत्नी व पुत्री को मोट्टुपल्लि से लौटते वक्त चोर उठा ले गये। वज्जिय ने यह समाचार दे कर नारायण भट्ट के मुख मण्डल का अवलोकन किया।

नारायण भट्ट के चेहरे पर दैन्य छा गया वज्जिय नतमस्तक हो उठा। नन्नय निश्चेष्ट रह गया।

दूसरे ही क्षण नारायण भट्ट ने अपने को सभालते हुये कहा—"वज्जिय मत्री को ही उन्हे बचाने का उपाय सोचना होगा। राज-कार्यो के निर्वहण मे प्रजा के पारिवारिक सुख-दुख बाधा न डाले।"

"मेरा विश्वास है कि आप की श्रीमती व कन्या कही न कहीं अवश्य सुरक्षित होगी। मेरा यह भी दृढ विश्वास है कि चक्रकोट्य की विजय-यात्रा मे तुम्हारे लौटते ही उन्हे देख सकोगे।"

नारायण भट्ट मौन धारण किया। नन्नय ने अपने मित्र को शीघ्र सफलता पूर्वक विजयी हो लौटने की शुभकामनाएँ दी।

नन्नय भट्ट ने घर लौट कर नारायण भट्ट का स्मरण किया। आश्चर्य की बात थी कि तत्काल उसके हृदय पर श्री कृष्ण द्वैपायन वेद व्यास का आविर्भाव हुआ। महाभारत की कथा आँखो के समक्ष झलक उठी। यह प्रेरणा पाकर नन्नय उत्साह के साथ महाभारत की कथा का स्मरण करने लगा।

उसी समय एक विद्यार्थी ने प्रवेश करके सूचना दी कि पावुलूरि मल्लना दो कवि बधुओ को साथ ले प्रतीक्षा मे बैठा है।

नन्नय ने आगे बढकर उन कवि बधुओ का स्वागत किया। मल्लना के साथ आये हुये कवि अथर्वणाचार्य तथा वेमुलवाड भीम कवि थे।

"कर्नाटक से देश का सचार करते हुये अपनी विद्या का प्रदर्शन करने के हेतु आये हुये पडित श्रेष्ट है ये अथर्वणाचार्य है ये बडे वैयाकरण, कन्नड और तेलुगु भाषा के उद्भट कवि है। पप महाभारत का तेलुगु रूपातर कर रहे है, और ये युवकवि वेमुलवाड भीमकवि है। ईश्वर के वर प्रसाद से इन्होने कविता की सिद्धि प्राप्त की है। ये सिद्ध है और समर्थ है। भट्टारक, ये दोनो आपके दर्शनो के लिए पधारे है।" मल्लना ने इन शब्दो के साथ उभय कवियो का नन्नय भट्ट को परिचय कराया।

नन्नय ने आदर भाव से उनका स्वागत कर उचित आसनो पर बिठाया। इसके उपरात नन्नय ने अथर्वण से अनेक प्रश्न पूछे—"आप का निवास क्या है, माता-पिता कौन है ? गोत्र क्या है ? राजमहेन्द्रपुर मे

आपका शुभगमन कब हुआ ? कब तक रहेंगे ? पप महाभारत का अनुवाद कहाँ तक हुआ ? इत्यादि ।"

अधर्वण ने सभी प्रश्नो का समुचित उत्तर दिया ।

नन्नय को केवल अधर्वण के साथ वार्तालाप करते देख भीमकवि को क्रोध आया । क्या मंत्र सिद्ध कवि का यह अपमान ?

इसी समय नन्नय ने मल्लना की ओर अभिमुख हो कहा–"तुमने इस युवक को सिद्ध बताया । लगता है कि अभी तक इनका उपनयन नही हुआ है ?" फिर भीम कवि को देख प्रश्न किया–"वत्स, तुम्हारी अवस्था कितनी है ?"

मैं नही जानता । मेरी मातृश्री से पूछना होगा" भीम कवि ने उत्तर दिया ।

"तुम्हारे पिता नही है ? तुम्हारा गोत्र क्या है ?

मैं द्राक्षाराम मे विराजमान भीमेश्वर के वरदान से पैदा हुआ हूँ । मेरी माताजी ने मुझे बताया कि वे भीमेश्वर ही मेरे पिता है । मै ईश्वर गोत्री हूँ ।"

"उपनयन क्यो नही कराया । यौवन मे पग धरते हुये भी जो द्विज वेदो का अध्ययन प्रारभ नही करता, उसे क्या कहना होगा ।

भीम कवि लज्जित हो उठा । पूज्य नन्नय आदर भाव से उपनयन करने की सलाह दे रहे है तो वह क्या उत्तर देता ।

"मैं अपनी मातृश्री से यह बात निवेदन करूँगा ।" "अच्छी बात है ! दीर्घायुष्मान भव !"

इस के उपरात फिर अधर्वण से पूछा– "क्या आप नारायण भट्ट से परिचित है ?"

अधर्वण सोचता रहा । मल्लना ने ही उत्तर दिया—"कर्नाटक मे रहते समय ये उनसे परिचित बताते है ।"

"बेचारे उनकी दक्षिण बाहू मे बाणाघात हुआ हे । सुना ?"

मल्लना के द्वारा सुना ! वह बडा समर्थ व्यक्ति हे । धर्म और न्याय के हेतु वह तीव्र सघर्ष करता है । इसीलिए कर्नाटक मे भी उसके अनेक शत्रु निकले ।"

"आचार्यवर, आपका कहना सत्य हे । काचीपुर मे अध्ययन करते समय भी वह विद्यार्थी वृन्द का नेता था । उसने अनेक झगडे व वाद-विवाद मोल लिये थे ।"

"वाद-विवाद का मतलब शास्त्रार्थ तो नही ?" मल्लना ने जिज्ञासा प्रकट की ।

"शास्त्रार्थ हो तो डरने की क्या बात थी ? हम बहुधा यादवप्रकाश से शास्त्रार्थ किया ही करते थे । पर साक्षात् झगडे भी चलते थे । एक बार नारायण ने सघाराम के तीन श्रमणो को पीटा । उस रात को उन श्रमणो के भक्त तलवार व लाठियाँ लेकर गुरुकुल पर टूट पड़े । कुलपति ने उन्हे समझा-बुझा कर भेज दिया ।"

"उन श्रमणो का दोष क्या था ?" अधर्वण ने पूछा ।

"उन लोगो ने कहा कि वेद ब्राह्मणो के द्वारा कल्पित सफेद झूठ है । श्रुति मूर्खो का प्रलाप है । ये सारी बाते रास्ते चलने वालो को समझा रहे थे । रास्ते चलते हम दोनो ने भी ये बाते सुनी । मैंने दोनो हाथो से अपने कान बन्द किये । पर नारायण भट्ट ने उन श्रमणो के पास जा कर डाटा—"तुम लोग मुँह बन्द कर लो । वरना बुरा होगा !" उन लोगो ने

परवाह नही की। इस पर नारायण ने उनको पीटा। इतने मे राजभटो ने प्रवेश करके हमको गुरुकुल मे भेज दिया।" नन्नय ने कहा।

"थोडी जल्दबाजी करता है पर शम स्वभाव का नारायण ने व्याख्या की।

"जानते हैं, एक बार क्या हुआ। कामाक्षी मदिर के समीप वसतोत्सव मनाया जा रहा था। उस उत्सव मे एक युवती को घेर कर कई युवक उसका परिहास कर रहे थे। युवती सबको गालियाॅ दे रही थी। नारायण ने सोचा कि सब युवक उस नारी का अपमान कर रहे है। उसने सबको मार-पीट कर भगा दिया। इस पर वह युवती नारायण भट्ट पर मोहित हो उसका पीछा करने लगी। उससे बचना नारायण के लिए एक बडी मुसीबत ही हो गयी। अन्त मे हमे मालूम हुआ कि वह कोई वेश्या है, उन युवको मे से एक से धन लेकर उसकी वासना की पूर्ति किये बिना वह भाग गयी, इस उत्सव मे उस युवती को पहचान कर उसे रोक रहे है। नारायण कभी कोई नटखट का काम करता तो विद्यार्थी सब उसे धमकाते थे कि तुमको उस वेश्या के हाथ सौप देगे। ऐसी अनेक घटनाएँ नारायण की जिन्दगी मे है।"

नन्नय भट्ट नारायण की स्मृतियो मे खो गया। मौका पाकर अथर्वणाचार्य ने पूछा—

"उसके एक कन्या थी। वह बडी सुन्दर थी। आठ साल की उम्र भी पूरी न होने पायी थी कि वह लडकी सस्कृत का अच्छा ज्ञान रखती थी। इसलिए कल्याण कटक मे सर्वत्र उस लडकी को लेकर चर्चा चलती थी।"

नन्नय ने गहरी साॅस ले कर कहा—

"आज ही समाचार मिला है कि तीर्थयात्रा से लौटते वक्त, उस कन्या तथा उसकी माता को भी पालकी सहित चोर कही उठा ले गये है।"

कहाँ पर यह घटना हुई ?" मल्लना ने पूछा ।

'भट्टिप्रोल मे आधे कोस की दूरी पर· '

नन्नय ने जवाब दिया ।

"बौद्ध श्रमणो का ही यह काम होगा !"

अथर्वणाचार्य ने कहा ।

"बेचारे उन पर दोषारोपण क्यो करे । क्या सभी बौद्ध चोर होते है ? ' नन्नय ने पूछा ।

"ऐसा तो मैं नही कह सकता, किन्तु ऐसे कार्य बौद्ध सघारामों के समीप अधिक हुआ करते है । देशाटन करने वाले हम जैसे लोगो को ज्यादा अनुभव होता हैं ।"

"राजभट बडी सतर्कता से खोज कर रहे हैं । हो सकता है कि वे कही सुरक्षित हो ! उन्हे जो भी खतरा हो तो नारायण भट्ट की देह मे प्राणो का होना दुर्लभ है !"

"क्यो नही, बेचारे की इकलौती पुत्री ! नन्नय जी, आपके कितने पुत्र है ?"

"एक ही पुत्र है । काञ्चीपुर के गुरुकुल मे वेदाध्ययन समाप्त कर सिद्धात ग्रन्थो का अध्ययन कर रहा है । मल्लना जी ! मेरा पुत्र आर्यभट्ट के सिद्धातो की आलोचना करता है !" उसे म्लेच्छ सदृश करना हे । उसकी बाते मुझे भी सही मालूम होती है । आपका क्या विचार हे ? '

"जो लोग सूर्य सिद्धात को छोड अन्य प्रमाणो को स्वीकार नही करते, उनका मत है यह । आर्यभट्ट म्लेच्छ देश मे विद्याभ्यास कर जिन सिद्धानो का उपदेश देते हे, वे प्रत्यक्ष सत्य प्रतीत होते है ! तब उन्हे क्यो न ग्रहण किया जाए !" मल्लना ने तर्क किया—

"तब तो आप शब्द प्रमाण से प्रत्यक्ष को श्रेष्ठ मानते है ?"

"नन्नयजी ! आपके शब्द-प्रमाण को नमस्कार करता हूँ। प्रत्यक्ष विषयो की बात छोड भी दे, किंतु हमारे नयनो को दीखने वाले ग्रहो की गतियाँ सूर्य, सिद्धात से थोडा भिन्न हो तो हम गणक क्या कर सकते है।"

"क्या तिथियाँ आँखो को दिखाई देती है ?"

"आप की मीमासा के लिए एक और नमस्कार करता हूँ। हम अनुभवी ज्योतिर्षी है, पर सिद्धाती नही। आपके पुत्र के शिक्षाभ्यास समाप्त कर लौटने पर इस पर चर्चा करेगे।"

"नन्नयजी आप भाग्यवान है। विद्याव्यसन रखने वाले पुत्र को जन्म दिया। हमे बडी प्रसन्नता है।" अधर्वण ने कहा।

"बडो के आशीर्वादो का प्रभाव तथा ईश्वर की कृपा !" नन्नय ने विनय पूर्वक कहा।

"सुनते है कि हाल ही मे चीन का एक विद्वान इस नगर मे आया है। आपने उस विद्वान के बारे मे नही सुना, नन्नय ?" प्रसग बदलते हुये अधर्वण ने कहा।

"क्यो नही ? सुना है।"

"उसने शास्त्रार्थ के लिए चुनौती देते हुये सब को निमन्त्रण दिया है। सघाराम पर एक विजय ध्वज उठाया है। प्रति दिन रात को वहाँ पर विजय की भेरी बजवा रहा है।"

"मुझे भी निमन्त्रण मिला है। नास्तिक बौद्धो से शास्त्रार्थ कैसा ? जयभेरी की बात मै नही जानता क्या ?"

"चीनी पडित से शास्त्रार्थ करने कोई नही जा रहा है। इसलिए प्रति दिन उस पडित की विजय की सूचना देते भेरी बजायी जा रही है। क्या आपने भेरी शब्द नही सुना ?" मल्लना ने पूछा।

"नही, तब तो वह राक्षस भेरी है !" नन्नय ने कहा–

हाँ, हाँ, ऐसा ही प्रतीत होती है। अधर्वणाचार्य ऐसा मौका मिले तो अपनी तार्किक भक्ति प्रदर्शन करना चाहते है। भाग्यवश ऐसा अवसर प्राप्त हो गया है। तुरत उस चुनौती को स्वीकार करते हुये प्रत्युत्तर दिया है। इस सदर्भ मे आप के दर्शन करने आये है।"

नन्नय ने पलभर सोच कर कहा–

"मै तर्क-वितर्क करना नही चाहता। तिस पर भी नास्तिको से नही। उनको हमारे प्रमाणो मे समानता नही है। इसलिए मेरा विश्वास है कि ऐसी स्थिति मे शास्त्र-वाद के लिए मौका ही नही है। दस लोगो को इकट्ठा कर चिल्लाने के लिए कहना होगा। जो दल ज्यादा हो-हल्ला करेगा, वह विजयी माना जायगा।"

"आप का कहना सही है। परतु वे कितनी निर्भीकता एव अहकार के साथ चुनौती देते है ? अगर हम उनका सामना कर उन्हे पराजित न करे तो साधारण जनता उनके मायाजाल मे फँस जायगी। यही बात सोच कर मै ने चुनौती को स्वीकार किया है। आप से यह निवेदन करने आया हूँ कि आप मध्यस्थ रह कर शास्त्रार्थ चलावे।"

"आप का विचार प्रशसनीय है। परतु मै ऐसे वाद-विवादो मे पडना नही चाहता। क्षमा कीजिये।"

"आप जैसे समर्थ व्यक्ति ऐसी चुनौतियो का भले ही सामना न करे, कम से कम सामना करने वालो के सहायक तो बने।"

इस पर नन्नय ने कोई उत्तर न दिया, पर वह मंदहास कर उठा। मल्लना नन्नय के स्वभाव से परिचित था, इसलिए उसने जो न डाला। थोडी देर पर्यंत इधर-इधर की बाते कर मल्लना और अधर्वण लौट आये।

32

विमलादित्य के दो रानिया थी। उसमे पट्टमहिसि कुदवादेवी थी। वह चोळ सम्राट राज राज की पुत्री थी। उस के गर्भ से राज राज नरेन्द्र का जन्म हुआ। विमलादित्य की दूसरी रानी मालव देवी थी। उस के गर्भ से विजयादित्य का उदय हुआ।

विमलादित्य की मृत्यु के पश्चात उसके ज्येष्ठ पुत्र, राजराज नरेन्द्र का पट्टाभिसेक हुआ। राजराज नरेन्द्र ने बारह वर्ष तक राज्य किया ही था कि उसके सौतेला भाई विजयादित्य ने कुतल चालुक्यो की सहायता से वेंगी राज्य पर आक्रमण किया और राजराज नरेन्द्र को पराजित कर भगा दिया। तब शक सवत्सर ९५२ को कार्तिक शुक्ला पचमी रविवार के दिन कन्या लग्न मे राज्याभिषिक्त, हुआ। वेंगी राज्य के जिन सामतो ने विद्रोह किया। उन सब को विजयादित्य के दण्डनाथ भीमभूप ने दबाया। भीम-भूप नागराज था। उस के मेघगिरिनाथ, मेलरकदर्प। मलय भास्कर इत्यादि उपाधियाँ थी। विजयादित्य ने अपने द्वितीय राज्य-वर्ष के अवसर पर भीमभूप को कोपुलुगु नामक गाँव दान किया था।

राजराज नरेन्द्र ने उस युद्ध मे स्वय अत्यत उत्साह के साथ भाग लिया था। उसमे उम के युवा दण्डनाथो ने सहायता दी थी। पर उस के पिता विमलादित्य के सम जो विश्वास पात्र वज्जिय प्रोग्गडा तथा नृपकाम दण्डनाथ थे उनकी बात भूल गया था।

राजराजनरेन्द्र पराजित हो कतिपय परिवार के साथ चोळ देश मे भाग गया और अपने ससुर गगैकोड राजेन्द्र चोळ की शरण ली। वहाँ पर उसने जयापरनाम वाले व्यास महाभारत का श्रवण किया। राजराज को अवगत हुआ कि जनमेजय को वैशपायन ने क्यो उस काव्य का उपदेश किया। इस पर उसने वज्जिय प्रेग्गडा तथा नृपकाम दण्डनाथ का स्मरण किया। उस वक्त वज्जिय प्रेग्गडा राजा विमलादित्य द्वारा प्रदत्त रणस्थि-पूडि अग्रहार मे श्रेताग्नियो का सेवन करते शान्तिपूर्वक समय व्यतीत कर रहा था। ऐसे शान्तिकामी वज्जिय तथा नृपकाम को राजराज नरेन्द्र गगैकोड चोळपुर बुला भेजा। उनके साथ नन्नय भट्टारक को भी बुलवा कर पाडवो की भाति दुर्गा की उपासना की। उनके आदेशानुसार चोळ राज्य की सेना लेकर वेगी राज्य पर हमला किया। विजयादित्य के सिहासन पर बैठे दो ही वर्ष हो रहे थे कि वह भगा दिया गया। तब उसने भाग कर कर्नाटक के राजा जयसिह जगदेक मल्ल की शरण ली। इसके बाद विजयादित्य ने बहुत सारे प्रयत्न किये। पर वह वेगी राज्य पर अधिकार न कर पाया। नृपकाम दण्डनाथ तथा वज्जिय प्रेग्गड़ा राजराज-नरेन्द्र के राज्य की सब प्रकार से रक्षा कर रहे थे।

जयसिह जगदेकमल्ल की मृत्यु के उपरात उस का पुत्र अहवमल्ल सोमेश्वर कर्नाटक राज्य की गद्दी पर बैठा। उसने विजयादित्य की सहायता के हेतु जो सेना भेजी वह वेगी राज्य मे कृष्णा नदी के उत्तम मे स्थित गृध्रवार (गुडिवाडा) के द्वारा कलिदिंडि तक घुस आयी। उस सेना का सामना करने के लिए राज राजनरेन्द्र स्वय एक बडी सेना लेकर राज-महेन्द्रपुर से निकला।

इसी बीच राज राजनरेन्द्र की इच्छा पर चोळ देश से एक महासेना निकली। उस सेना का सचालन तीन चोळ दण्डनाथो ने किया था। उस मे प्रधान व्यक्ति राजराज ब्रह्ममहाराज नामक एक महादण्डनाथ था। दूसरा व्यक्ति उत्तम शोडचोडगोरेनु था। तीसरा उत्तम चोड मिलाडुडय्यानु था। राज राजनरेन्द्र की सेना के पहुँचने के पूर्व ही चोळ और कर्नाटक

मेनाओ के वीच भयकर युद्ध चिढ गया था। दोनो सेनाओ के बीच मुष्टा मुस्टि, केशाकेशि, दण्डादण्डी, कुताकुती सघर्स हुआ। धनु र्धारियो ने बाणो की वर्सा की। हाण्भियो की भयकर टकराहट हुई। भटो ने खड्गा युद्ध किया तो उस के घर्षण से स्फुलिग लूटने लगे थे। युद्ध क्षेत्र मे कबधो का नृत्य हो रहा था। गज, अश्व व पैदल सेनाओ के बीच भीकर सग्राम होने लगा। द्रमिल दण्डनाथ तीनो त्रेताग्नियो की भाति वीर विहार करने लगे।

फिर भी कर्नाटक और द्रमिल दण्डनाथो का युद्ध समान था। अनेक कर्नाटक दण्डनाथो के साथ तीनो द्रमिल दण्डनाथ वीर स्वर्ग को प्राप्त हुये।

कर्नाटक दण्डनाथो के मरने पर विजयादित्य ने बडी युक्ति से उस सेना का सचालन अपने हाथ मे लिया, कर्नाटक से आने वाली अतिरिक्त सेना की प्रतीक्षा करने कृष्णा नदी को पार कर उडवल्लि पहुँचा। वहाँ पर एक जैनवमति (सघाराम जैसा आश्रम) थी। वह पहाडी आचल पर तीन मजिलो मे गुफाओ के रूप मे काट कर बनायी गयी है। वह पर्वत प्रदेश आत्म रक्षा के लिए अधिक अनुकूल मान कर विजयादित्य ने वही रहने का निश्चय किया।

· विजादिन्य की सेना मे अनेक जैन दण्डनाय थे। वह मारा प्रदेश जैनमतावलवियो से भरा था। अत कर्नाटक के प्रति सहज ही आदर रखते थे। उडवल्लि की जैनवसति के आचार्यो ने भी विजयादित्य के प्रति थोडा आदर भाव दिखाया। उस प्रदेश के चारो तरफ उपजाऊ ज़मीन तथा सपन्न गॉव थे। कर्नाटक की सेना साम-दान उपायो से उन ग्रामो से अपने लिए आवश्यक खाद्य पदार्थो का सग्रह करने लगी।

राज राजनरेन्द्र की सेना जब कलिदिडि के निकट पहुँची तभी उसे उस सग्राम का समाचार मिला। वह क्रोधित हो कर्नाटक की सेना पर हमला करना चाहता था, किन्तु तब तक कर्नाटक सेना कृष्णा नदी को पार

कर चुकी थी। नृपकाम तथा वज्जिय ने भी राजा को सलाह दी कि तत्काल कृष्णा नदी को पार करना खतरे से खाली नही है।

राज राजनरेन्द्र अपनी सेना को कृष्णा नदी के दूसरे किनारे ले जाकर बेजवाडा आ पहुँचा। वहाँ पर उसने अत्यन भक्ति एव श्रद्धा के साथ कनक दुर्गा तथा मल्लिकार्जुन देव की आराधना की।

'जैनकाला मुखाचार्य' त्रिकाल योग सिद्धात देवर की मोगलिराजपुर मे एक बसति थी। उस बसति के लिए राजा राजनरेन्द्र के पिता विमला दित्य ने अपने शासन काल मे दान दिये थे। लेकिन उनमे से कुछ गाँवो की आमदनी इधर कुछ वर्षो से उस बसति को प्राप्त न हो रही थी। इसलिए उस आमदनी को पुन दिलाने की अभ्यर्थना करते उस आचार्य ने राजमहेन्द्रपुर प्रार्थना पत्र भेजे थे।

बेजवाडा पहुँचते ही वज्जिय ने उन प्रार्थना पत्रो का बण्डल निकलवा कर जनाचार्य को बुला भेजा। उन ग्रामाधिपतियो को भी बुलवा कर उन दोनो के वाद सुने। तदुपरात वज्जिय ने अपनी बुद्धि कुशलता का प्रयोग कर जैनाचार्य को वे गाँव दिलाये और साथ ही ग्रामाधिकारियों को भी सतुष्ट किया। इसलिए चतुर्दिक के जैनमतावलम्बी राज राजनरेन्द्र के प्रति अधिक श्रद्धा भाव रखने लगे।

इधर कृष्णा नदी की उत्तर दिशा मे राज राजनरेन्द्र की सेनाएँ तथा दक्षिण मे उडवल्लि मे विजयादित्य की सेनाएँ डेरा डाल कर युद्ध के लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा मे थी।

एक रात्रि को विजयादित्य पटकुटीर मे चिन्तामग्न था। कर्नाटक की अतिरिक्त सेनाओ के आने का निश्चित समाचार अभी तक उसे प्राप्त न हुआ था। समीप मे ही सोने वाला उसका पुत्र शक्ति वर्मा बडबडा उठा। बारह वर्ष के उस बालक का चेहरा निद्रा मे भय विह्वल था। उसे देख विजयादित्य काँप उठा।

कृष्णा नदी से ठण्डी बयार चल रही थी। विजयादित्य निद्रादेवी की गोद मे सुख की नीद लेने लगा।

उसने निद्रा मे एक सपना देखा। आज से तीस वर्ष पूर्व स्वर्गवासी हुए उसके पिता विमलादित्य की प्रेममूर्ति उसे दिखाई दी। पिता के पार्श्व मे कुल देवता आदि वराह भी दिखाई पडा।

विजयादित्य उन दोनो मूर्तियो को श्रद्धा भाव से देख ही रहा था कि आदि वराह की मूर्ति क्रमश राज राजनरेन्द्र के रूप मे बदल गयी। वह बडे स्नेह से अपने भाई को पास बुला रहा था। हठात् विजयादित्य के मन मे अपने बडे भाई के प्रति प्रेम और आदर भाव उत्पन्न हुए।

विजयादित्य की आँखे खुली तो उसे लगा कि उसके पिता विमलादित्य तथा भाई राज राजनरेन्द्र की मूर्तियाँ उसके हृदय भाग से वातायन मार्ग द्वारा चन्द्रमा की किरणो के साथ उत्तरी दिशा की ओर सरकती जा रही है।

प्रात काल मे अपने अतरगी स्वप्न-शास्त्र कोविद को बुला कर स्वप्न का फल पूछा। स्वप्नवेदी ने दीर्घकाल तक सोचा। उसे उडबल्लि जैनवसति के अधिपति त्रिकाल योग सिद्धात देवर के यहाँ से स्वर्ण प्राप्त हुआ था।

स्वप्नवेदी ने बताया—"महाराज यह स्वप्न अद्भुत है, दिव्य है। आपके पूज्य पिता का यह अभिमत है कि आप अपने भाई से सधि कर ले, यह आदिवराह का आदेश भी है। अलावा इसके यह भी स्पष्ट मालूम हो रहा है कि यदि आप राज राजनरेन्द्र का पक्ष ले तो उसके अन्तर आपको वेगी राज की प्राप्ति होगी।"

विजयादित्य ने स्वप्नवेदी को भेजा। उसका मन विकल था। क्या राज राजनरेन्द्र सधि करने तैयार होगे। स्वप्न मे दिखाई देने वाले राज राज से यथार्थ राज राज भिन्न न होगे ?

कर्नाटक की सेनाएँ विजयादित्य की सहायता के लिए आ रही थी। यह समाचार गुप्त रूप से वज्जिय प्रेग्गडा को पहले ही मालूम हो गया। परन्तु उसने यह समाचार विजयादित्य तक पहुँचने न दिया।

विजयादित्य ने सकोच के साथ ही अपने भाई के पास सधि के लिए प्रस्ताव भेजा। वज्जिय ने राजराज को समझाया—"भाइयो का सघर्ष करना दोनो के लिए अहितकारी है। इसी कर्नाटक की सेनाएँ हमारी उपेक्षा व अनादर कर रही ह। इस युद्ध के द्वारा जनता की क्षति हो रही है। फसलो का नाश हो रहा है। अत अपने भाई को प्रेम मे आश्रय देना हित कर होगा।"

राज राजनरेन्द्र सोचने लगा—इसी भाई ने एक बार उसे देश से भगा दिया था। अब भारी सेना लेकर हमला कर बैठा है। द्राविड सेनाओ के सघर्ष से अब उसकी सेनाएँ निर्बल हो गयी है। फिर भी उसकी सहायता के लिए कर्नाटक की सेनाएँ आ रही है। ऐसी हालत मे उसके साथ सधि कर लेना खतरनाक सिद्ध न होगा।

वज्जिय ने राज राज के विचारो को भाप लिया और कहा—

"राजन, यदि हम विजयादित्य से सधि कर ले, तो सहायता के लिए आने वाली कर्नाटक सेनाएँ वापस भाग जाएँगी। तब हम बडी आसानी से उनका विनाश कर सकते है। आपके भाई को राजधानी मे समस्त प्रकार के सुख एव गौरव देते हुए बदी बना सकते है।"

राज राज ने सधि करने का सारा भार वज्जिय प्रेग्गडा को सौप दिया। शीघ्र ही दोनो भाइयो के बीच सधि सम्पन्न हुई। विजयादित्य ने कल्पना तक नही की थी कि उसके साथ उसका बडा भाई आदर एवम् स्नेहपूर्ण व्यवहार करेगा। आदर पूर्ण पत्र पाकर वह सहसा विश्वास नही कर पाया। अपने भाई के प्रति प्रेम, स्नेह और आदर भाव उमड़ पडे। अत. विजयादित्य ने सधि पत्र पर विश्वास किया और सेना समेत वह राज राज के अधीन हो गया।

राज राज ने सधि की शर्तो का अक्षरशः पालन किया। विजयादित्य के प्रति आदरपूर्ण व्यवहार करने का सबको नत्काल ही आदेश दिया।

कर्नाटक विजयादित्य की सहायता के लिए आने वाली सेनाएँ कृष्णा नदी के दक्षिणी तट पर पूर्वी दिशा की ओर बढ रही थी। नृपकाम के नेतृत्व मे राज राज की सेनाओ ने कृष्णा को पार किया। उसने यही समाचार भेजा कि विजयादित्य की सेनाएँ उनकी प्रतीक्षा मे है। अत. कर्नाटक की सेनाएँ दर्प के साथ आगे बढी चली आ रही थी।

अचानक नृपकाम की सेनाओ ने कर्नाटक की सेनाओ पर धावा बोल दिया। कर्नाटक दण्डनाथ हठात् हमले को देख दग रह गये। अपनी सेनाओ को क्रमबद्ध रूप मे सगठित कर सामना करने का मौका उन्हे न मिला। अत उस भीकर सग्राम मे कर्नाटक की अधिकाश सेना नष्ट हुई। अनेक दण्डनाथ व सैनिक वन्दी हुए। शेष सेना भाग खडी हुई।

राज राजनरेन्द्र अत्यत उत्साह एव प्रसन्नतापूर्वक विजय यात्रा समाप्त कर अपने भाई विजयादित्य के साथ राजमहेन्द्रपुर लौट आया।

राजमहेन्द्रवर मे विजयादित्य का क्या स्थान था ? वह केवल सम्राट का भ्राता था। उसका आदर सर्वत्र होता था। सुख और वैभव के सभी साधन उपस्थित थे। विद्या गोष्ठी के निमित्त पपन भट्टाचार्य बहुधा आया-जाया करता था। राज राज के बायी ओर उसका आसन था, चाहे जो भी हो, वह आखिर राजा का भ्राता था। उत्सव मूर्ति की भाति!

विजयादित्य के कधो पर कोई उत्तरदायित्व न था। कोई उसके साथ गुप्त मन्त्रणा नही करता था। स्वभावत वह बुद्धि-कुशलता रखता था। केवल वैभवमय जीवन उसे कैसे सतुष्ट कर रख सकता था ? कवि, गायक, नर्तक, गोष्ठियाँ तथा विलासमय जीवन से वह तृप्त होने वाला न था। आध्यात्मिक चितन मे देह को भुलाने वाला भी न था। वज्जिय की भाँति राजनीति तथा नृपकाम की तरह युद्ध-कार्यो मे वह अपने भ्रात

को मत्रणा देने की सामर्थ्य रखने वाला था। किन्तु कोई उससे सलाह-मशविरा नही करता । इसीलिए उसकी बुद्धि कुठित होती-सी प्रतीत होने लगी।

सोने की जजीरो से वह ऊब उठता। कभी-कभी राज राजेन्द्र पर उसके हृदय मे क्रोध उमडता। पर वास्तव मे राज राजनरेन्द्र ने उसे किस बात की कमी की । धर्मप्राण भ्राता पर क्रोध करना उचित नही। यह क्रोध पितृपाद तथा आदिवराह के लिए भी स्वीकार्य नही ।

विजयादित्य के पुत्र शक्ति वर्मा की भी यही स्थिति थी। पिता के साथ युद्ध क्षेत्र मे सचार करते रहने की कठिनाइयाँ तो दूर हो गयी। राजोचित समस्त विद्याओ का उसे शिक्षण दिया जाता था। राजनीति व युद्ध नीति का वह अभ्यास कर रहा था। किन्तु उसकी प्रकृति अपने पिता की भाँति तीक्ष्ण न थी। उस पर कोई उत्तरदायित्व न सौप कर वैभव व विलासमय जीवन बिताने का उसे मौका दे, सतुष्ट होने वाला प्राणी है वह । कठिनाइयो से दूर हो सुखमय जीवनयापन करने वाले उसे इसी मे असीम आनन्द प्राप्त हो रहा था।

पर विजयदित्य को यह कतई पसद न था। उस का पुत्र भी उसी की भाति अकर्मण्य बन कर जीवन-यापन करे तो उसका भविष्य क्या होगा? यह बात वह अपने भाई से निवेदन करना चाहता था।

एकात मे चर्चा करने का अवसर प्रदान करने की अभ्यर्थना करते विजयादित्य ने राज राज के पास समाचार भेजा। उसी दिन शाम को मिलने की आज्ञा देते राज राज ने अपने भाई के पास सदेश भेजा। इतने शीघ्र राज दर्शन का अवसर प्राप्त देख विजयादित्य अपने भाई के वात्सल्य पर मुग्ध हुआ। राजमहल मे उस का जो स्वागत हुआ, उसे देख बिजयादित्य का हृदय आर्द्र हो उठा।

विजयादित्य ने सम्राट के समक्ष नतमस्तक हो उनके चरणो को अपने नयनो से स्पर्श कर अभिवादन किया। राजा ने अपने कर-स्पर्श से उसे

उठा कर उचित आसन पर बिठाया। वहाँ पर कोई अन्य व्यक्ति न था। अत उस पर अपने भाई का प्रगाढ विश्वास देख विजयादित्य का हृदय कृतज्ञतापूर्ण भाव से भर उठा।

कुशलप्रश्न के उपरात राज राज ने विजयादित्य के आगमन का कारण पूछा। विजयादित्य ने शक्तिवर्मा की अकर्मण्यता का प्रस्ताव रखा।

"हम शक्ति वर्मा को कठिन उत्तरदायित्व पूर्ण कार्यो पर नियुक्त करना चाहते है। क्या वह स्वीकार करेगा।" राज राज ने पूछा।

"आप जिन कार्यो पर उसे नियुक्त करेंगे, उनका निर्वहण करने मे शक्ति वर्मा को कभी आपत्ति नही हो सकती। आपके आदेश को वह अनुग्रह के रूप मे स्वीकार करेगा।"

"हाँ, इधर कुछ दिनो से हम विचार कर रहे थे कि उसे कोई उत्तर-दायित्वपूर्ण कार्य न सौपा जाय तो उस का अनुभव कुठित हो जायगा। किन्तु ऐसा कार्य तुम को रुचिकर होगा या नही, इसी शका से हमने व्यक्त नही किया।"

"सम्राट! आप मुझे और मेरे पुत्र को अपना स्वजन मान कर आदेश दीजिये।"

"तुम को भी वह स्वीकार्य है। इसलिए शीघ्र ही शक्ति वर्मा को बुलवाकर हम जान लेगे कि वह कैसे कार्यों मे अधिक रुचि रखता है। उस की इच्छा के अनुरूप उचित कार्य पर उसे नियुक्त करेंगे। हम पूर्णत. तुम्हारी बातो पर निर्भर हो उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सौपने जा रहे है अन्यथा वह भार हम किसी और को सौप देगे।"

"मैं इधर बहुत दिनो से इस बात की चिता कर रहा हूँ कि शक्ति-वर्मा अकर्मण्य बन कर कही मद बुद्धि वाला और विलासी न बन जाय!

इसी सबन्ध मे मैंने आपसे एकान्त मे वार्ता करने की अभ्यर्थना की है। बिना पूछे आपके अनुग्रह से मेरे अभीष्ट की सिद्धि हो गयी।"

सम्राट ने मदहास करते हुये कहा–

"हमारे पितृपाद पुज्य विमलादित्य जी हममे और तुममे समान रूप मे मूर्तीभूत है। इसलिए हमारे हृदय भी भिन्न कैसे हो सकते है। तुम्हारी इच्छा जान कर हमे अपार हर्ष हुआ।"

विजयादित्य थोड़ी देर तक अन्य बातो की चर्चा करके प्रसन्नता पूर्वक चला गया।

इस के उपरात सम्राट की सेवा मे अनेक ब्राह्मण उपस्थित हुये उन लोगो ने सम्राट से शिकायत की कि मत्री वज्जिय प्रेग्गडा उन्हे यज्ञ करने की अनुमति नही दे रहे है। इस पर सम्राट ने उन्हे आश्वासन दिया कि इस सबन्ध मे वे पूछताछ करेगे।

राज राज को लगा कि तात्कालिक रूप मे वज्जिय प्रेग्गाडा राजतन्त्र मे अधिक स्वतत्रता ले रहा है। उन्ही दिनो मे मोटुपल्लि मे स्थित नौकाध्यक्ष को राजमहेन्द्रपुर मे बुलवाना पडा था। यह विचार किया जाता था कि तात्कालिक रूप मे वह पद किस को सौपा जाय। सम्राट ने अपना उद्देश्य वज्जिय के सामने प्रकट किये बिना ही शक्तिवर्मा को बुलाकर चर्चा की और उसकी इच्छा के अनुरूप शक्तिवर्मा को तात्कालिक रूप मे मोटुपल्लि मे नौकाध्यक्ष के पद पर नियुक्त किया गया।

वज्जिय को यह कदापि पसद न था। उस का विचार था कि नौकाध्यक्ष-पद किसी समर्थ एव विश्वास पात्र व्यक्ति को देना चाहिये। क्योकि आने वाले दिन अत्यत खतरनाक थे।

राज राज ने जब वज्जिय को यह सूचित किया कि नौकाध्यक्ष पद शक्तिवर्मा को सौंपा गया है। तब वह अवाक् रह गया।

"प्रभु ! आपने हमारा भार और बढा दिया है। मैं आप से निवेदन करूँगा कि उन ब्राह्मणो को वैशाख मास मे यज्ञ करने की आज्ञा दे तो हमारा भार और भी दुर्भर होगा !"

वज्जिय के वचन सुन कर राज राज मुस्कुरा पडा।

"भयातुर आप जैसे वृद्ध ब्राह्मणो का भय हमारे भीतर भी प्रवेश कराना चाहते है ?"

वज्जिय इस के उपरात अनेक राजनैतिक बातो की मत्रणा करके चला गया।

कुछ ही दिनो मे शक्ति वर्मा नौकाध्यक्ष वन कर मोट्टुपल्लि चला गया। विजयादित्य ने अपने पुत्र को राज कार्य को अत्यत सामर्थ्य एव भक्ति के साथ निर्वहण करने का उपदेश एव आशीर्वाद दे भेज दिया।

33

ग्रीष्म का ताप राजमहेन्द्रपुर को व्याकुल बनाये हुये था । नगर मे सर्वत्र प्याऊ खोले गये थे । साधारण प्रजा के घरो मे वातायन कम थे । अधिकाश घर एक दूसरे से सटे हुये थे ।

धनिक वर्ग ने ऋतु भेद के अनुरूप विशेष सुविधाएँ बना रखी थी । राजराज तथा राज वधु भी अपने अपने ग्रीष्मावासो मे चले गये थे ।

विजयादित्य भी एक विशाल ग्रीष्मावास मे रहने लगा था । उनका महल एक सुन्दर उद्यान के मध्यभाग मे था । महल से गोदावरी की जल-धारा स्पष्ट दिखाई देती थी । वातायनो के पार्श्व भागो से जल यत्रो द्वारा फुहारे चलती थी । लू को रोकने के लिए द्वारो पर खस-खस की टट्टियाँ बधी थी । वे निरतर तर किये जा रही थी ।

विजयादित्य एक आसन पर आराम कर रहा था । दो यवन विला-सिनियाँ चॅवर डुला रही थी । एक और सुन्दरी देह पर चदन लगा रही थी । उस का मन शीतल था । भ्रातृप्रेम के प्रवाह मे बहते उसे शक्तिवर्मा का स्मरण आया ।

वेगी राज्य मे नौकाध्यक्ष का पद मडलाधिपतियो से ऊँचा माना जाता था । समुद्रयान करने वाले प्रवहणो, नदी-यान करने वाली नौकाओ इत्यादि के लिए नौकाध्यक्ष ही अधिकारी था । देश मे निर्यात होने वाले

मभी प्रकार के मालो पर कर वसूल करके उन पर वराह की मुहर वही लगा सकता था। उम के आज्ञा-पत्र क विना कोई भी नाव नदी मे प्रयाण नही कर सकती थी। इस कानून का भग करने वाले कठिन दण्ड के भागी होते थे। जनता की यात्रा भी नौकाध्यक्ष के अधिकार के अतर्गत थी। देश के आवागमन उमके आदेश पर स्तम्भित हो सकते थे। इम लिए यह पद अत्यन विश्वासपात्र, अनुभवी तथा जागरूक व्यक्ति को दिये जाने की प्रथा थी।

ऐसा ऊँचा पद राजराज नरेन्द्र ने विजयादित्य के पुत्र को दिया है। वह भी अयाचित रूप से प्राप्त हुआ। शक्तिवर्मा यदि विशेप सामर्थ्य के साथ सभाल सके तो उसे वेगी राज्य भर मे अपार यश प्राप्त होगा।

अलावा इस के उन दिनो मे राज्य मे सर्वत्र विद्रोह के फैलने की खबरे व्याप्त हो रही थी। यदि नौकाध्यक्ष जागरूक न रहा, तो विद्रोह को दबाना कठिन होगा। विश्वास पात्र राजभटो के शीघ्र आवागमन के लिए यातायात का प्रवध करना होगा। राज द्रोहियो को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से रोक कर सनसनी पैदा करने वाले समाचारो को फैलने से रोकना होगा। ऐसी कठिन दशा मे शक्तिवर्मा पर यह उत्तरदायित्व देना सोचने योग्य विषय था। इस पर विचार करते-करते विजयादित्य के हृदय मे सतोप के साथ भय भी पैदा हुआ। शक्तिवर्मा ने यदि अपनी यह जिम्मेदारी ठीक से न सभाली तो कैसा खतरा उत्पन्न होगा। सम्राट ने युवराज को यह जिम्मेदारी न सौप कर उस के पुत्र को क्यो सौप दिया है।

इस हालत मे युवराज को सम्राट ने चोळ राज्य मे क्यो भेज दिया? शायद राज महेन्द्रपुर मे उपद्रव मच जाय तो दोनो के लिए खतरा है न! इसलिए युवराज को काचीपुरम मे सुरक्षित रखना ही उत्तम है। फिर भी ऐसी विपत्तियो के समय खतरो का सामना करने का अनुभव प्राप्त न करे तो फिर युवराज कब प्राप्त करेगा।

इसी समय उसे उडतल्लि के स्कधावार का स्वप्न-वृत्तात याद आया। स्वप्नवेत्ता ने कहा था कि राजराज नरेन्द्र के अनतर मै ही वेगी राज्य का अधिपति बनूगा। क्षण भर इस की सुधि मात्र से अपार सुख प्राप्त हुआ। किंतु दूसरे ही क्षण मे उस का हृदय विकल हो उठा। छी., साक्षात पितृतुल्य भ्राता के राज्य की कामना करना कैसी नीचता है। मैं कैसा कृतघ्न हूं! विश्वासघाती हूं! सधि के समय मैने हाथ मे खड्ग धारण कर शपथ खाई थी कि सम्राट और उनकी सतति के प्रति विश्वास-पात्र बन कर उनकी सेवा करूगा! अप्रयत्न ही विजयादित्य की देह पुलकित हो उठी!

प्रयत्नपूर्वक विजयादित्य ने अपने मन पर नियत्रण कर लिया।

उसी समय प्रतीहारी ने प्रवेश करके सूचना दी कि राजकुमार मल्लप्पा उनके दर्शन के लिए प्रतीक्षा कर रहा है।

विजयादित्य की अनुमति पाकर मल्लप्पा ने भीतर प्रवेश किया। मल्लप्पा ने नतमस्तक हो विजयादित्य को अभिवादन किया।

कुशल प्रश्नो के उपरात मल्लप्पा ने कहा—"शक्तिवर्मा के योग्य पद इतने समय बाद प्राप्त हुआ है। हमे बडी प्रसन्नता हुई। आपके पुत्र को गौरव प्राप्त हुआ है। उसे हम सब भाई अपना ही गौरव मानकर आनदित

ये शब्द सुनकर विजयादित्य प्रफुल्लित हुआ। शीघ्र ही आत्म-निग्रह पाकर बोला—"तुम सब हमारे आप्त बधु है! तुम्हारे प्रसन्न होने मे विशेषता क्या है। यदि शक्तिवर्मा उस पद का दक्षता के साथ निर्वाह करे तो हम सब को अपार आनद होगा!"

"इसमे सदेह ही क्यो? पितृसहज अधीरता से आप ये बाते कह रहे हैं। किंतु शक्तिवर्मा तथा आप जो भी चाहेगे, सभव होगा आप दोनो के लिए असाध्य ही क्या है? आप दोनो साक्षात् सम्राट और युवराज के तुल्य है!"

वि॰यादित्य ने उन शब्दो को काटते हुये कहा—"अत्यधिक प्रशमा के अवसर पर भी सम्राट और युवराज के साथ साम्य जोडने का प्रयत्न नही करना चाहिये।"

इस प्रकार विजयादित्य तथा मल्लप्पा के बीच जो वार्तालाप हुआ। उसमे मल्लप्पा परोक्ष रूप मे विजयादित्य की स्तुति तथा सम्राट की आलोचना करता रहा। विजयादित्य मीठे शब्दो मे मल्लप्पा को सचेत करता रहा।

इसके उपरांत विजयादित्य ने प्रसग बदलने के ख्याल से मल्लप्पा के स्वास्थय का समाचार पूछा।

मल्लप्पा ने अश्वरोहण से गिर जाने व चिकित्सा पाने का समाचार सुना कर कहा—"तघाराम के वैद्यो ने मेरे प्राण बचाये। वरना ... हाँ सुनिये। बेचारे उस अश्व को लानेवाला सैधव चोर नही, वह कहता है कि वह एक अश्व शिक्षक है। राजा की अनुमति से वह क्रीडाओ मे भाग लेने आया था। उसे चोर बता कर बन्दी बनाया गया है और आज तक अदालत मे उस की सुनवाई तक नही हुई है। इसलिए विदेशी व्यापारी बहुत ही असतुष्ट हैं। मैं यह बात राजा से निवेदन करना चाहता हूँ।"

"अच्छी बात है। न्याय निर्णय मे सम्राट सदा निष्पक्ष रहते है। मैं उन को बचपन से ही जानता हू।" विजयादित्य ने उसे हिम्मत बधाई।

"यह सही है, किंतु राजा के कान भरने वाले लोग है, देखिये न, हमारे सभी भाइयो ने अपनी आँखो से देख कर जब बताया कि युवराज की गलती से ब्राह्मण घायल हुआ है। बेचारे गाडीवी जैसे मेरे भाई को दण्ड दिया गया। इसी प्रकार इस अश्व शिक्षक के सबध मे क्या करना है। मेरी समझ मे नहीं आता।" मल्लप्पा ने कहा।

"उसके सबध मे तुम क्यो परेशान हो?" विजयादित्य ने पूछा।

"मधाराम मे चिकित्सा पाते समय मुझे निश्चित रूप से मालूम हुआ कि वह अश्व-शिक्षक निर्दोष है। व्यापारी कहते है कि अश्व-शिक्षक के अभाव मे घाटे सब दाना-पानी तक छोड चुके है। जनता की कठिनाइयो को दूर न करे तो हमारा भी क्या शुभ होगा ?" मल्लप्पा ने कहा।

"तब तो तुम्ही यह बात सम्राट मे निवेदन क्यो नही करते ? इतने दिन तक अपराधी को न्यायालय के समक्ष उपस्थित न करने का कोई जबर्दस्त कारण होगा!"

"कुछ नही। लापरवाही और अहकार है।" मल्लप्पा ने क्रोधपूर्ण स्वर मे कहा।

"तब तो तुम ही तुरन्त राजा से निवेदन करो। देरी न करो।" विजयादित्य ने समझाया।

मल्लप्पा ने अनेक प्रकार से विजयादित्य को वश मे करने का प्रयत्न किया। किन्तु असफल हो चला गया।

विजयादित्य ने मल्लप्पा के व्यगपूर्ण वाक्यो का भाव समझते हुए भी ऐसा अभिनय किया मानो न जानता हो!

शक्ति वर्मा अननुभवी है। शायद इन लोगो की मीठी बातो मे आ कर अपनी जान पर खतरा तो न मोल लेगा!

यही विचार करते चित्त की शाति के लिए पपन भट्टोपाध्याय को बुला लाने का आदेश दिया। पपन भट्ट पाराशर गोत्र वशी है। वेद वेदाग विद है। मीमामा प्रवीण है। अगस्त्य की भाति समस्त साहित्य का सागर है। पाठ प्रवचन मे दक्ष है। सभा मे वाक्चातुर्य रखने वाला है।

बडी देर तक पपनभट्ट के साथ शास्त्रो की बाते सुनते विजयादित्य ने समय बिताया। अत मे उसने पपन भट्ट से पूछा—"समस्त शास्त्र ग्रथ सस्कृत भाषा मे विरचित है। उनका अनुवाद तेलुगु आदि अन्य भाषाओं मे क्यो न किया जा सकता है।"

पपन ने अनेक उदाहरण देते हुए बताया कि सूत्रों के रूप मे अनुवाद करना कठिन है। उदाहरण के लिए जैमिनीय धर्मसूत्र है। वे सब समस्त वेद को स्मरग मे रख कर रचे गये है। तेलुगु मे उसकी व्याख्या की जा सकनी है। किन्तु सूत्रबद्ध करना कठिन है। जो लोग भरत धर्म का सार सरलता से ग्रहण करना चाहते है, उनके लिए वेदव्यास कृत महाभारत ही एक मात्र उपयोगी ग्रन्थ है। इसका तेलुगु रूपातर सभव नही।

34

अनादि काल से भारतवर्ष सोने की फसल उगाने वाली भूमि मानी जाती रही है। मानव की तृष्णा का अंत नहीं है। भारतवासी भी धन की तृष्णा रखते है। यहा से भी अधिक मात्रा मे सोना सरलता के साथ प्राप्त होने वाले देशो की भारतवासियों ने यात्राएँ की है। ऐसे देश मुख्यत पूर्वी समुद्र मे अधिक थे। उनमे सुमित्रा द्वीप, यव द्वीप, सुवर्ण द्वीप, मधुर द्वीप, बाली द्वीप, लेबक द्वीप, शुभ द्वीप, ताम्र द्वीप, मलय द्वीप इत्यादि अनेक उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार इन द्वीपो के विशेष नाम होने पर भी सामान्य रूप मे सुवर्ण भूमि वा सुवर्ण द्वीप ही कहलाते थे।

भारतवर्ष मे उन दिनो मे पूर्वी समुद्र तट पर तीन प्रमुख बदरगाह थे। उत्तर मे गगा नदी के मुहाने मे ताम्रलिप्ति, वेगी राज्य मे कृष्णा नदी के मुख द्वार के समीप मोटुपल्लि तथा दक्षिण मे कावेरी नदी द्वार के पास नागपट्टणम प्रधान थे।

सुवर्ण द्वीप की यात्रा करने वाली नौकाएँ सीधे समुद्री यात्रा करते नक्कवरम (निकोबार) टापू पहुँचती है। उसके बाद सुमित्रा द्वीप की इद्रगिरी नदी के मुख द्वार अथवा मलया द्वीप के दक्षिणाग्र के सिहपुर मे पहुँचेगी।

राजराजनरेन्द्र के ससुर गगैकोड राजेन्द्रदेव ने नक्कवरम टापुओ, मलाया, प्रायद्वीप द्राविड वाङ्गमय मे कडारम नाम से प्रचलित कटाहम पन्नाय, मलैयूर नामक पर्वत दुर्ग, मायिरुडिग नामक समुद्री जल दुर्ग तथा

अन्य अनेक प्रदेशो पर विजय पायी थी। कटाहाधिपति विजयोत्तुग वर्मा ने जब राजेन्द्रदेव का सामना किया तब उसे पराजित कर बन्दी बनाया। इस प्रकार अनेक भू-भाग जीत कर उन सबका सम्मिलित रूप से 'श्रीविषयम' नाम से चोळ राज्य का एक मण्डल बनाया।

उन टापुओ पर विजय प्राप्त होने वाले प्रथम भारत सम्राट गगैकोड चोळ तथा उसके एक हजार वर्ष पूर्व ही एक घूर्जर राजकुमार ने यवन द्वीप को जीत लिया था। तभी से उस राजकुमार के नाम एक नूतन शक का प्रारम्भ हुआ।

प्राचीन समय मे इन द्वीपो मे व्यापार करने के हेतु व्यापारी मात्र जाया करते थे। किन्तु क्रमश बौद्ध श्रमण, जैन श्रावक भी जाने लगे। व्यापार, व्यापार के साथ धर्म तथा उसके साथ प्रवासी यात्राएँ भी शुरू हुई। प्रवासी यात्रा उन द्वीप वासियो को पसद न थी, अत ये यात्राएँ ही आक्रमण के रूप मे परिवर्तित होने लगी। विजय-पराजय समान होने पर भी आखिर उन प्रदेशो पर भारत की मुद्रा शाश्वत बन गयी। वहाँ पर देवालयो का निर्माण हुआ। भारत, रामायणो ने अपना स्थान बनाया। सधाराम सर्वत्र भर गये। भारतवर्ष के समुद्री तटीय प्रदेशो मे जहाँ भी हल-चल होती, जनता का जीवन दूभर होता, तो लोग स्वर्ण द्वीपो की यात्रा करते। खासकर यह आदत बौद्ध मतावलबियो मे विशेष रूप से बढ गयी।

बौद्ध धर्म मे वर्ण-व्यवस्था नही है। भारत धर्म वर्ण-व्यवस्था पर आधारित है। वर्ण-व्यवस्था को स्वीकार करने वाला बौद्ध धर्म जैनधर्म के रूप मे परिणत हो रूपातरो के साथ अवस्थित था।

इस देश मे बाहर से आनेवाले लोगो मे बौद्ध धर्म का उद्भव हुआ। वे जहाँ-जहाँ गये। वहाँ-वहाँ इस धर्म का प्रचार एव फैलाव हुआ। कहना होगा कि विशुद्ध बौद्ध धर्म भारत मे स्थिरता को प्राप्त न कर सका और सारे ससार मे फैल गया। तिब्बत मे लामा मत बना तो चीन, निप्पान,

ब्रह्म, सुवर्ण द्वीप तथा सिंहल मे अन्य स्थानीय धर्मों के साथ मिलकर हीन-यान तथा महायान बने ।

भारत मे बौद्ध धर्म की व्याप्ति मे पग-पग पर विघ्न पैदा होने लगे । परन्तु दीर्घकाल तक अवस्थित होने के कारण वैदिक धर्म, सांख्य योग इत्यादि के सहचर्य से बौद्ध धर्म को नयी शक्ति प्राप्त हुई । इसलिए वह धर्म जहाँ भी गया, वहाँ की जनता का विश्वास प्राप्त करता गया । स्वर्ण भूमियो मे बौद्ध वीर जहाँ खड्ग तथा अन्य व्यापारी माल ले जाते थे, वहाँ बौद्ध श्रमण मैत्री तथा श्रीध्वजो के साथ उन का अनुगमन करते थे ।

इस प्रकार बौद्ध धर्म रूपातर को प्राप्त करते हुये भी बहुत समय तक उत्तर तथा पूर्वी भागो के साथ मूल बौद्ध धर्म का सबध रहा है । शाक्य गोतम ने सर्व प्रथम दीपकर बुद्ध से बोध-दीक्षा ग्रहण की । चार असख्येय कल्प तथा लक्ष कल्प व्यतीत हुये । इस मे चौबीस बुद्ध हुये । इन अवधि मे बराबर जन्म धारण करते बुद्धो के यहाँ से दीक्षा ग्रहण करते रहे । अत मे काश्यप बुद्ध से दीक्षा ली । इस कलियुग के प्रारभ मे २४७८ वे मे वैशाख पूर्णिमा के दिन जन्म लिया,वैशाख पूर्णिमा के दिन पत्नी-पुत्र को त्याग, वैशाख पूर्णिमा के दिन बुद्धत्व को प्राप्त किया और वैशाख पूर्णिमा के दिन ही परिनिर्वाण प्राप्त किया । इसी गौतम बुद्ध ने मगध राज्य मे पर्यटन किया और धर्म-प्रवर्तक हुये । बुद्ध के पादनिक्षेप से भारत भूमि पवित्र हुई । उनकी अस्थियो को सम्राट अशोक ने समस्त भारत मे दस लाख चैत्यो मे बदल दिया । इसीलिए बौद्ध मतावलबियो के लिए भारत-भूमि पुण्य भूमि बन गयी । तिस पर भी मुख्यत. गौतम के उत्पन्न वेलुवन, बोधि प्राप्त बुद्ध गया, प्रथम धर्म प्रवर्तन किया गया सारनाथ, महा परिनिर्वाण प्राप्त कुशीनगर उन के लिए अत्यत ही पवित्र है । ये उनके तीर्थ स्थान है ।

वेगी राज्य से इसके अस्सी वर्ष पूर्व मे ही सुवर्ण द्वीप की यात्राएँ चल रही थी । उस समय सर्वत्र उपद्रव छाये हुये थे । बौद्ध मतावलबी सब सुवर्ण द्वीपो मे चले गये । वहाँ जाने के लिए सघारामो ने विशेष सुविधाएं

प्रदान की थी । इस प्रकार सघाराम भी समृद्ध हुये । और नौकाएँ रखने वाले व्यापारी भी लखपति व करोडपति बन गये ।

पुन चोळ सम्राटो की सहायता से वेगी राज्य मे जब शाति स्थापित हुई तब प्रवास की यात्राए कम हो गयी । फिर भी व्यापार, तीर्थ यात्रा, तथा रिश्तेदारो को देखने के लिए जब तब वे लोग वेगी राज्य मे आया-जाया करते थे । वे लोग स्वर्य द्वीपो के वैभव की प्रशसा बढा चढा कर करते जिस से सामान्य लोगो के हृदयो मे वहाँ जाने की लालसा पैदा होती । इस प्रकार की यात्राओ के लिए सघाराम सहाकारी होते थे ।

ये प्रवास कभी कभी वेगी के राजाओ के लिए स्वीकार्य थे, किंतु कभी कभी कुछ प्रदेश निर्जन होते जाते थे, इसलिए वे पसद नही करते थे । इतना होने पर भी प्रवासियो पर कोई रोक न थी । बौद्ध सघारामो को जनता मे लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए यह एक प्रबल साधन था ।

समस्त वेगी मण्डल मे यह समाचार फैल गया कि इस वर्ष वैशाख-शुक्ला पूर्णिमा के दिन सारगधर टीले के सघाराम से एक विशाल प्रवास-दल निकलेगा । क्रीडोत्सव एव हाटो के लगने की वजह से यह वार्ता सर्वत्र व्याप्त हो गयी थी । नागराजो ने सुवर्ण द्वीप के वैभव का कथा रूप मे गान किया था । बेकार लोग धनार्जन करने की इच्छा रखने वाले तथा अशातिमय जीवन बिताने वाले जल्दी-जल्दी यात्रा की तैयारियाँ करने लगे । यह समाचार भी फैल गया था कि चीनी पडित यात्रा के पूर्व उपदेश देकर उन्हे आशीर्वाद भी देगा । प्रवासी-दल मे शामिल होने की इच्छा रखने वाले चैत्र मास से ही राजमहेन्द्रपुर मे जमा होने लगे । उन सब के स्वास्थ्य एव निवास के लिए राजधानी मे आवश्यक प्रबध किये गये थे ।

यात्रियो मे कुछ ऐसे भी लोग होते थे, जो अधिक उद्दण्ड होते थे । शाति-रक्षा के हेतु राज्य की ओर से अतिरिक्त भट नियुक्त थे ।

अश्वारोही शीघ्र समाचार एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचा देते थे । हाथी नगर-रक्षा के निमित्त केन्द्र स्थानो मे खडे थे । पैदल सेना-सर्वत्र

फैली थी। इस प्रकार राजधानी नगर एक स्कधावार जैसा प्रतीत हो रहा था।

वैशाखपूर्णिमा बौद्धो के लिए एक महान पर्व था। उस दिन यह पर्व बौद्ध सघारामो, चैत्यो मे भी मनाते है। लोग अलकृत रथ तैयार करके जुलूस निकालते है। नाविक सब बौद्ध ही होते हे। अत वे भी यात्रिको को ले जाते समय अपनी नौकाओ को सजाते है।

प्रत्येक श्रेणी का रथ अपने ढग का होता है। गॉव नगर, जाति पेशेवर लोग अपने आराध्यदेवताओ की पूजा करके उन चिह्नो से अकित रथो का जुलूस निकालते है।

बौद्ध उत्सवो के समय जैसे अलकृत रथो का जुलूस निकाला जाता था, वैसे शैव भक्तो ने भी प्रारभ किया। प्रवास पर जाते समय भी उत्सव मनाने की परपरा चल पडी।

आज अमरावती नगर से वेगी नगर होते राजमहेन्द्रपुर मे एक प्रवासी यात्री दल आया। उनके साथ एक रथ का भी नगर की गलियो मे जुलूस निकलने लगा। उसके चिह्न व्याघ्र और खडग थे। कुछ लोग वाद्यो के साथ आवेश मे ‘शरभ शब्द के गीत गाने लगे।

35

सोमिदेवी का समय कटता न था । उस की चिता बढती जाती थी। वह दुर्गा की स्तुति करने लगी ।

दूसरे दिन अमावास्या पडता था । बुधवार का दिन था । सोमिदेवी तथा कुपमा ने प्रात काल की पूजा समाप्त की। मध्याह्न भोजनोपरात कुपमा दुग्गव्वा से मिलने गयी ।

कुपमा की अबोध पूर्ण बाते सुन कर दुग्गव्वा के नयनो से आँसू निकल आये ।

'नानीजी, रोती क्यो हो ? क्या नाना ने पीटा है ?" कुपमा ने पूछा ।

कुपमा के सरल हृदय से निकली बातो ने दुग्गव्वा के दिल को झझोड दिया । वह अपने ऊपर नियत्रण न कर पायी, सो फूट-फूट कर रोने लगी ।

थोडी देर बाद कुपमा को गोद मे ले दुग्गव्वा ने उसका अलिगन किया और बार-बार उस का मुह चूमने लगी । उसके प्रेम-बधन से छूटने का प्रयत्न करते कुपमा पुन पुन वे ही प्रश्न पूछने लगी ।

"सुनती हूँ वैशाखपूर्णिमा के दिन कही तुम्हारी बलि देने वाले है । आज या कल रात को तुम को यहाँ से ले जायेगे । बेटी, तुम को छोड मैं

कैसे रह सकती हूं ? मै यह बात दूसरा से कह दूं तो मेरा पति मेरा गला घोट देगा। किसी से न कहोगी न बेटी ?"

दुग्गव्वा की बाते ध्यान से सुन कर कुपमा अपनी माँ के पास दौड गयी और सारी बाते सुना दी। तुरत दही का बहाना कर सोमिदेवी दुग्गव्वा के यहाँ जा पहुँची। उससे मीठी-मीठी बाते कह कर तथा धन का लालच दे सोमिदेवी ने दुग्गव्वा को अपने वश मे कर लिया।

दुग्गव्वा ने सोमिदेवी को समझाया कि वह आधी रात के समय माँ-बेटी को दूसरे गाँव मे ले जायगी और वह भी उनके साथ चल कर अपना शेष जीवन बितायेगी। उस अधेरे मे जगल मे यदि तीन कोस की दूरी चल सके तो वह उन दोनो को एक सपन्न ब्राह्मण के घर पहुँचा देगी वहा पर शायद राजभटो की सहायता मिल सकेगी। दुग्गव्वा की योजना को सोमिदेवी ने स्वीकार किया।

वह अमावास्या की रात थी। माँ बेटी सोने का बहाना करके लेट गयी। दुग्गव्वा ने सतर्क रह कर पहरा देने वालो को रोक दिया और किवाड़ पर कुडी चढा दर्वाजे के पास बैठ गयी। उस का पति ग्वालो का मुखिया था, इसलिए किसी ने आक्षेप नही किया।

आधी रात होने को थी। ब्रेपल्ले गहरी नीद मे था। दुग्गव्वा ने कुडी निकाली। तुरत सोमिदेवी कुपमा को साथ बाहर निकली। माँ-बेटी दुग्गव्वा के साथ चलने लगी।

उस अधेरी रात मे तीन नारियो का चोरो के गाँव से होते यात्रा करना जान पर खेलने के समान था। अलावा इस के उस गाँव की पूर्वी दिशा मे शेर का अड्डा था। रातो मे उस प्रदेश मे शेर स्वेच्छापूर्वक विहार करते थे। फिर भी वे तीनो जान हथेली पर रख कर बढती चली गयी।

आधी रात के बाद ग्वाले सोमिदेवी तथा कुपमा को पालकी पर ले जाने आ पहुँचे। उनका विचार था कि उन्होने दूध मे जो नशीली दवा

मिला कर दुग्गव्वा के हाथ सोमिदेवी तथा कुपमा को पीने के लिए भेजा था, वह दूध पीकर बेहोश होगी। सोमिदेवी को उसी स्थान पर पहुंचा कर, जहाँ से उठा लायी, कुपमा को बलि देने के लिए निर्णीत प्रदेश पर ले जा सकते हैं।

ग्वालो ने देखा। दर्वाज़े पर दुग्गव्वा न थी। भीतर सोमिदेवी तथा कुपमा भी न थी। सोचा कि बाहर गयी होगी।

पर बडी देर तक न लौटते देख वे लोग मशाल लिये उनकी खोज मे चल पडे।

उसी समय किसी नारी ने बताया कि थोडी देर पहले यहाँ पर शेर का दहाड सुनाई दिया था। दो-तीन नारियो की चिल्लाहटे भी सुनायी दी थी।

ग्वालिन की बाते सुन कर ग्वाले सब जगल की ओर दौडे। उन्हे एक जगह खून, मास व शेर के पजे के निशान भी दिखाई पडे। पर उनके शव दिखाई न दिये। ग्वालो ने सोचा कि शायद एक साथ कई शेरो ने हमला कर दिया हो।

सबने निश्चय किया कि वे तीनो औरते शेरो का आहार बन गयी होगी। दुग्गव्वा का पति ही नादिया वाला था। उसके दुःख की सीमा न थी। वह अपने परिवार के साथ कही आ कर वहाँ बस गया था। हाल ही मे उसकी एक पुत्री भी मर गयी थी। अब वह अपनी पत्नी को भी खो बैठा। वह सोचने लगा कि जिस देवी ने श्रद्धापूर्वक रेशमी कपडे दिये, उसके साथ उसने जो दगा दिया था, वह उसी का फल है।

गाँव के लोग यह सोच कर परेशान थे कि इस दुष्ट ने ब्रह्म हत्या करने का निश्चय किया था। इसलिए इसका शुभ कैसे होगा। न मालूम गाँव पर कैसी विपत्ति आएगी।

36

चीनी पडित का नाम 'टयोलिन' था। वह बोद्ध धर्म का निधि माना जाता था। कहा जाता या कि उसके भारत मे आये तीन सो साल हो गये है। उसके पूर्व उसकी क्या उम्र होगी! कोई जानता न था।

भारत मे उसने अनेक भाषाएं सीखी। असख्य शास्त्रो का अध्ययन किया। उसने अनेक पडितो को हरा कर विजय प्राप्त की थी। उन्ही पत्रो को वह सदा अपने साथ रखता था। वह सस्कृत मे भी धारा प्रवाह बोल सकता था।

ऐसे महात्मा के साथ शास्त्रार्थ करने के लिए एक अथर्वणाचार्य ने ही अगीकार किया। अथर्वण ने जैन धर्म के सिद्धातो का सूक्ष्म अध्ययन किया था। साथ ही बौद्ध धर्म का प्रधानवाद, क्षणिकवाद तथा उसकी कमियो को भी पूर्णत हृदयगम कर लिया था। इसके पहले किये गये पूर्व पक्षो के साथ स्वय चितन द्वारा कतिपय अशो को सोच रखा था। किसी के सदर्भ पूछने पर दिखाने के लिए प्रमाण स्वरूप कोश-ग्रथो मे आवश्यक चिह्न अकित कर रखे थे।

पर चीनी पडित न केवल पडित था, अपितु वह मत्र-सिद्ध भी था। कहा जाता था कि उससे तर्क करने वालो को वह अपने मत्र-बल से पराजित करता है। जरूरत पडने पर वह वाणी को स्तम्भित कर सकता है!

राज कर्मचारियो मे पटवारी सब जैन थे। बडे-बडे ओहदो पर भी जैनमतावलबी अधिक थे। वैश्यो मे भी अधिकाश लोग जैन धर्म के समर्थक

या पक्षपाती थे। यही कारण है कि अल्पकाल मे ही अथर्वणाचार्य को ऐसी को ऐसी लोकप्रियता प्राप्त हो गयी।

बौद्ध मतावलबियो मे अधिकाश लोग मेहनत करके पेट भरने वाले थे, साथ ही वे अशिक्षित थे। जैन मतावलबी सुशिक्षित थे। फिर भी जैन मतावलबियो ने अथर्वण को समझाया कि क्षुद्र उपासना का वल रखने वाले चीनी पडित से वाद-विवाद करने पर न मालूम कैसा खतरा उत्पन्न होगा।

अथर्वणाचार्य ने सोचा-विचारा। उसे लगा बौद्ध और जैनियो के बीच शास्त्रार्थ अनेक वर्षो से चला आ रहा है। बौद्ध सदा अपनी उपासना से जैन पडितो को पीडा दिया करते थे। प्राचीन काल मे 'सघश्री' नामक एक बौद्ध पडित ने जैन मदिर के रथोत्सव को रुकवा दिया था। उसी समय भट्टाकलक वहाँ पर आया। वह लगातार छह मास पर्यंत सघश्री से वाद करके भी विजयी न बन सका। इस पर उसने चक्रेश्वरी देवी का ध्यान कर पच नमस्कार मत्र का जाप किया। तुरन्त देवी ने उसे सघश्री का रहस्य बता दिया। 'पर्दे मे एक कलश मे तारा देवी का सघश्री ने आवाहन कर रखा है। आज तक तारा देवी ने ही कुछ चर्चा की है। कही हुई बात को पुन कहने को माँग करने पर तारा देवी नही बोलती।"

इस रहस्य को जानने पर दूसरे दिन भट्टाकलक ने पुन पुन उसी बात को दुहराने की माग की। पर्दे के पीछे नीरवता छा गयी। तुरन्त भट्टाकलक ने पर्दा फाड दिया। तारा देवी को प्रतिष्ठापित कलश को लात मारा और इस प्रकार सघश्री का पराभव किया। इस प्रकार पच नमस्कार मत्र जैनियो के लिए रक्षा-कवच बना हुआ था।

"धर्मिणो येत्र वर्तते ज्ञातश्री जिनसद्गिरः
नित्य परोपकाराय सतु ते परमार्थत ॥
"ओ नम"
"णमो अरिहताण णमो सिद्धाण णमो आचरियाण
णमो उवज्झायाण णमो लोक सव्वसाहूण ॥"

शास्त्रार्थ के स्थान को लेकर प्रारम्भ मे विवाद उत्पन्न हुआ । चीनी पडित ने नारगपुर टीके मे स्थित बौद्ध सघाराम मे भिक्षुओ के समक्ष शास्त्रार्थ चलाने की माग की परन्तु अथर्वणाचार्य ने युक्ति सगत बताया कि तटस्थ प्रदेश ही उभय पक्षो को हित कर होगा ।

इसके उपरान्त न्याय-निर्णायक को लेकर विवाद उपस्थित हुआ । चीनी पडित ने बौद्ध श्रमणो को निर्णायक बनाने का अनुरोध किया, अथर्वणाचार्य ने दिगम्बर श्रावक अथवा श्वेताम्बर साधको को । दोनो पडितो का अपने-अपने विचार पर हठी देख दोनो के बीच समझौता करने वालो ने सोचा कि ये लोग वाद करने से बचना चाहते है ।

अत मे समझौता करने वाले लोगो ने राज दरबार के प्रसिद्ध मीमासक को मध्यस्थ बनाने का निश्चय किया । किन्तु यह भी दोनो पडितो के लिए अगीकार न था ।

शास्त्रार्थ के लिए प्रमाण के निर्णय को लेकर विवाद उत्पन्न हुआ । चीनी पडित ने बौद्ध ग्रथो को प्रमाण बताया । अथर्वण ने जैन शास्त्रो को । चीनी पडित ने अथर्वण से यहाँ तक पूछा—"जैन मतावलम्बी अपने को 'निर्ग्रन्थी' बताते है, ऐसी हालत मे उन्हे ग्रथो के प्रमाण से क्या तात्पर्य है?"

अथर्वणाचार्य एक दिन अनुष्ठान दीक्षा मे था, इसलिए वह घर से बाहर न निकला । इस पर चीनी पडित के पक्षपातियो ने यह अफवाह उडायी कि अथर्वण शास्त्रार्थ से डर कर भाग गया है । इस आशय के कर-पत्र बाटे और चित्र अकित कर मार्गो मे प्रदर्शित किये गये ।

उसके दूसरे ही दिन अथर्वणाचार्य ने सार्वजनिक सभा बुलायी । उसमे निर्भय होकर उच्चस्वर मे घोषित किया कि चीनी पडित तस्कर की भाँति सघाराम की दीवारो के मध्य छिपा बैठा है । दिवान्ध की भाँति प्रकाश को देखने से डरता है ।

बौद्ध तथा जैन धर्मावलबी अपने-अपने धर्म के सिद्धातो का नगर के सभी मार्गो पर प्रचार करने लगे । यह प्रचार क्रमश देहातो, उत्सवो, दिन व रातो मे भी तीव्र से तीव्रतर होता गया ।

एक ओर अपने पुराण और भक्तो की जीवनियाँ सुनाते थे तो दूसरी तरफ मंत्र तंत्र तथा अमानवीय शक्तियों का प्रदर्शन कर जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे।

बिच्छू, साँप, कुत्ते के काटने पर अपने मंत्र-बल से चिकित्सा कर रहे थे। अन्य रोगो के लिए मंत्र-तंत्र फूंक कर लोगो मे लोकप्रिय होते जा रहे थे।

इस प्रकार के उपदेश तथा मंत्र-तंत्रो के प्रयोगो ने जनता मे उन-उन धर्मों के प्रति श्रद्धा के भाव पैदा किये। किन्तु विवेकशील व्यक्ति यही विचार करने लगे कि उभय धर्मों मे अवश्य सत्य व सत्त्व भी है। ऐसे ही लोग इन दोनो पडितो के बीच समझौते के प्रयत्न कर रहे थे।

समझौता या मध्यस्थ करने वालो मे मुख्यत सरकारी पदो से अवकाश प्राप्त लोग, धनी व्यापारी, कवि, देशाटन द्वारा अनुभव प्राप्त किये हुए लोग थे।

प्रारभ मे राज्य की ओर से इस सभा को चलाने से निषेध किया गया था। राज्य के अधिकारियो का विश्वास था कि विवादपूर्ण सार्वजनिक सभाओ द्वारा झगडा होगा।

इस पर मध्यस्थ करने वाले लोगो ने मत्री वज्जिय प्रेग्गडा से मिल कर निवेदन किया। तब वज्जिय ने सारा भार मध्यस्थ मडली पर डाला और शास्त्रार्थ सभा चलाने को अनुमति दी। तत्काल ही अनुमति-पत्र लिखवा कर राजमुद्रा सहित उनके हाथ सौंप दिया।

इस प्रकार मध्यस्थो ने नाना प्रकार के कष्ट उठाकर सभा चलाने की अनुमति तो प्राप्त कर ली, किन्तु दोनो पडित परस्पर दोषारोपण करते ऐसा व्यवहार करते थे कि मानो वे लोग एक दूसरे पर बहाना कर अपने को विजयी घोषित कर बैठे।

बौद्ध मतावलंबियों में चित्रकार अधिक थे। वे अथर्वणाचार्य का अपहास करते और तरह-तरह के चित्र खींच कर प्रतिदिन मार्ग मध्य में प्रदर्शित करते थे।

जैनियों में शिल्पियों की संख्या अधिक थी। वे रात भर जाग कर चीनी पंडित की आकृतियाँ गढ़ते और गलियों में उन मूर्तियों का जुलूस निकालते थे।

इन प्रदर्शनों के समय वे लोग परस्पर निंदा कर लेते थे। एक नयी भाषा का उदय हो रहा था। उभय धर्मावलंबियों के बीच अहिंसा सिद्धांत आचरण में दिखाई नहीं देता था। बीच-बीच में गलियों में झगड़े-फिसाद होते थे।

अंत में मध्यवर्तियों ने स्पष्ट रूप से बताया —"हम जहाँ पर सभा का आयोजन करेंगे, वहाँ पर उपस्थित जनता ही निर्णायक है। केवल हेतुवाद को प्रमाण बनाकर आप लोग अपने धर्म को उत्तम धर्म साबित करने के लिए तैयार होइये। अन्यथा हम मानेंगे कि आप लोग कुवाद करते अपने को पंडित बताकर धन संपादन कर जनता को धोखा दे रहे हैं। इस आरोप पर हम आपको राज-पुरुषों के हाथों में सौंप देंगे।"

दोनों पंडितों ने मध्यवर्तियों के निर्णय को स्वीकार किया।

वैशाख शुक्ला विदिया शुक्रवार के दिन मध्याह्न बारह बजे गोदावरी के तट पर, जहाँ पहले हाट व उत्सव मनाये गये थे, महासभा चलाने का निर्णय हुआ। इसकी घोषणा भी हुई।

37

गोदावरी तट पर विशाल पडाल डाला गया। एक ऊँची वेदिका पर दो आसन लगाये गये थे, वेदिका के आगे दोनो तरफ वाद–निर्णय करने वाले निर्णायको के लिए उचित आसन लगाये गये थे।

सभासदो के लिए विशेष रूप मे स्थानो का प्रबन्ध किया गया था। एक तरफ बौद्ध मतावलब', दूसरी ओर जैनानुयायी तथा मध्य भाग मे साधारण प्रेक्षको के बैठने क व्यवस्था कर दी गयी थी। सभा मे हलचल पर नियत्रण रखने के लिए निर्णायको ने यत्र-तत्र स्वय-सेवको को खडा कर दिया था। सभा स्थान के चतुर्दिक बेतयनायक के आदेशानुसार सायुध भट पहरा दे रहे थे। उस सेनादल के साथ चार हाथी तथा सोलह अश्व भी थे।

सभा मे उपस्थित जन समूह का बर्णन करना असभव था। उन दिनो में आध्रवासियो मे उत्साह एव वीर रस का सचार होता था।

बौद्ध मतावलवी अपने धर्म को सर्वोत्तम मानते थे। यह उनका विश्वास था। उनका यह भी विश्वास था कि बौद्ध धर्म ही जगत का उद्धार कर सकता है और जनसमुदाय को निर्वाण प्राप्ति मे सहायक है। यह निष्ठा उन लोगो के रग-रग मे कूट-कूट कर भरी हुई थी। इसी स्व-धर्म-निष्ठा के कारण वे जैन धर्म पर घृणा करते थे। इसका अभिप्राय द्वेष अथवा शत्रुता के कारण न था। इसी भाति जैन मतावलबी भी अपने धर्म के प्रति निष्ठावान थे।

बौद्धानुयायियो का विश्वास था कि आज सभा के सम्मख चीनी पडित निर्विवाद रूप मे बौद्ध धर्म को सर्वोत्त म धर्म प्रमाणित करेगा ।

जैनमतावलबियो का विश्वास था कि आज आधर्वणाचार्य यह निरूपण करेगा कि जिन मत ही अनादि धर्म है। बोद्धमत आदि मूर्ख-वाद है।

सभा मे जैन व बौद्ध पडितो की सख्या भी अपार थी। एक बौद्ध त्रिशरण का प्रारभ किया, तुरत बौद्ध सघ मे वह घोष प्रतिध्वनित हुआ।

जैन सघ मे रत्नत्रय का स्मरण गूँज उठा। ये दोनो घोष अन्य प्रेक्षको के लिए विनाद प्रदान कर रहे थे। पर स्वयसेवको को शाति स्थापित करने मे बडी कठिनाई मालूम होती थी।

सभा के प्रारभ होने का निश्चित समय निकट था। अधर्वणाचार्य ने तीन शकटो पर कोश समुदाय को मगावा कर वेदिका पर सजाया।

चीनी पडित ने अस्ति, दत, नर कपाल तीन शकटो मे मगवाया और वेदिका के समीप रखवाया।

निर्णीत समय पर निर्णायको ने बायी ओर चीनी पडित को तथा दायी ओर से अधर्वणाचार्य को वेदिका पर बुलवाकर उचित आसनो पर विठाया।

वेदिका पर पहुँचते ही अधर्वण ने टयोलिन को तथा टयोलिन ने अधर्वणाचार्य की ओर तिरस्कार भाव से देखा। जन समुदाय ने तालियां वजाते हर्षनाद किया।

दो मत्त हाथियो की टकराहट, दो प्रकाड पडितो का वाद-विवाद जन समुदाय के लिए उत्साह का कारण था।

सभा के सचालक ने खडे होकर सभा को प्रमाण किया। दोनो पडितो की प्रतिज्ञाओ का स्मरण दिलाकर सभा के नियमो का परिचय दिया। सबने साधुवाद के साथ स्वीकृति दी।

चीनी पडित टयोलिन की प्रतिज्ञा को सचालक ने पढ कर सुनाया ।

"नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सबुद्धस्स---बुद्ध जगत को पुन -पुन बोध कराने वाला धर्म ही उत्तम धर्म है । उस के विरुद्ध धर्म तुच्छ-धर्म है । जो पडित इस सिद्धात को अप्रमाणित कर देगा, उसे मैं सभा के सम्मुख मेरा सर काटने की अनुमति देता हूँ ।"

इस पर बौद्ध सघ ने जयनाद किये ।

इस के उपरात निर्णायक ने अथर्वणाचार्य की प्रतिज्ञा पढ सुनायी :-

"श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघ लाछनम्
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिनशासनम् ।"

"ऋषभनाथादि वर्द्धमान पर्यंत चतुर्विंशति सख्याक तीर्थंकर ही पवित्र धर्मवेत्ता है । जिन शासन के विरुद्ध मत हेय है, अनुपादेय है । यदि कोई इसे गलत प्रमाणित करेगा, तो मैं इसी सभा मे सल्लेखन कर प्राण त्याग करूँगा ।"

अथर्वणाचार्य की इस कठोर प्रतिज्ञा पर जैन पक्षपातियो ने उच्च स्वर मे साधुवाद दिया ।

अब यह प्रश्न उठा कि वार का प्रारभ कौन करे ?

चीनी पडित ने कहा--"समस्त धर्मो मे बौद्ध धर्म सर्वोत्कृष्ट है । अत सर्व प्रथम मैं ही भाषण करूँगा ।"

अथर्वणचार्य जानता था कि पूर्वपक्ष करना बडा सरल कार्य है । इस लिए चीनी पडित का प्रारभिक भाषण देना उसे व्यक्तिगत रूप मे सम्मत था, तथापि इस बात को स्वीकार करने पर उस का अनादर होगा । यह विचार कर अथर्वण ने कहा--

"असख्य तीर्थकरो द्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रेष्ठ धर्म है, गौतम का बोध किया धर्म सच्चा धर्म नही कहलाता । अत मैं ही प्रथम भाषण का अधिकारी हूँ ।"

इस पर चीनी पडित ने बताया—"मै सन्यासी हूं। इसलिए गृहस्थ प्रतिद्वन्द्वी से पूर्व उसे ही प्रथम बोलने का अधिकार होना चाहिये।"

अथर्वण ने चीनी पडित के विचारो का खण्डन करते समझाया—

"बौद्धो मे वर्णाश्रम धर्म नहीं है, इसलिए बौद्ध भिक्षुओ मे सन्यासाश्रम ग्रहण करने वाले गृहस्थो की भाति वे पूज्य नही हो सकते। बौद्ध भिक्षु का तात्पर्य भ्रष्टो मे अति भ्रष्ट होता है। इसलिए उसे सभा की पूज्यता प्राप्त नही हो सकती। मै स्वय पडित ही नहीं हूँ, अपितु मैंने अनेक पडित-समाजो मे विजय-पत्र भी प्राप्त किये है। अत सभा का प्रारभ करने का अधिकार मुझे दिया जाना चाहिये।"

बौद्ध मतावलम्बियो मे रोष पूर्ण हलचल प्रारम्भ हुई।

निर्णयिको मे से अधिक बुद्धिमान गुरनाथ श्रेष्ठी ने खडे होकर यो कहा :

"आप दोनो महान पडित है। आप परस्पर एक दूसरे का वाद स्वीकर नही करते। एक से बढ कर एक शक्ति रखते है। विद्वत्ता रखते है। किंतु स्थूल रूप से विचार करने पर यही न्याय सगत प्रतीत होता है कि सर्व प्रथम चीनी पडित ने शास्त्रार्थ के लिए निमत्रण दिया है। इस लिए मेरे विचार मे चीनी पडित को ही प्रथम भाषण देने का अवसर प्रदान करना उचित होगा।"

बौद्ध सघ से जयनाद गूज उठे। वे चिल्लाने लगे कि चीनी पडित ही विजयी हुये है।

जैन समुदाय से 'अन्याय! अन्याय' के शब्द सुनाई दिये। पर कोई भी यह साबित न कर पाया कि गुरुनाथ श्रेष्ठी का निर्णय अन्याय पूर्ण है।

चीनी पडित ने अपना भाषण प्रारभ किया। प्रारभ मे उसने चीनी भाषा मे कुछ स्तोत्र पढे। तदुपरात पाली भाषा के स्तोत्र सुनाये। इसके पश्चात सस्कृत के श्लोक भी पढ सुनाये।

सभा मे सर्वत्र शांति विराजमान थी। चीनी पंडित ने गंभीर कंठ मे घोषणा की––"मैं अपना भाषण चीनी भाषा मे दूंगा। एक बौद्ध भिक्षु उस का तेलुगु मे रूपांतर करेंगे।"

अथर्वणाचार्य ने आक्षेप करते हुये कहा–"हम दोनो को संस्कृत मे अथवा तेलुगु मे शास्त्रार्थ करना होगा। अब तक जिस चीनी पंडित ने तेलुगु मे अपने विचार व्यक्त किये। ऐसी हालत मे वे तेलुगु मे ही अपना भाषण क्यो देना नही चाहते? दूसरा भिक्षु उसका रूपांतर या व्याख्या परिवर्तित कर भी कर सकता है! मुझे पता लगा है कि ये पंडित चीनी नही है, पंडित तो कभी हो ही नही सकते! सभासद जिस भाषा को नही जानते, उस भाषा मे शास्त्रार्थ करने पर उसकी श्रेष्ठता का निर्णय करना कठिन है। अगर आप लोग चीनी पंडित को चीनी भाषा मे भाषण की अनुमति दे तो मुझे कन्नड मे अपने तर्क को उपस्थित करने का मौका देना होगा। मेरे भाषण का भी कोई न कोई पंडित तेलुगु रूपांतर करेंगे।"

निर्णायको ने निर्णय दिया कि सभासद तेलुगु मे ही दोनो विद्वानो के विचार सुनने का कुतूहल रखते है। अत तेलुगु मे ही दोनो विद्वानो का भाषण होगा।

जैन समुदाय ने उत्साह के साथ जयनाद किये। बौद्ध संघने 'अन्याय, अन्याय' कह हलचल मचायी।

चीनी पंडित ने तेलुगु भाषा मे भाषण प्रारंभ किया। सारी सभा मंत्र-मुग्ध सी हो गयी। पर उस की भाषा पुस्तकीय प्रतीत होती थी। सभासद चीनी पंडित की भाषा पर आश्चर्य चकित हुये।

अथर्वणाचार्य भी चीनी पंडित की भाषा साधना पर कम चकित न था!

38

"दान, शील नैष्कर्म्य, प्रज्ञा, वीय. मन्य क्षाति, अधिष्ठान, मैत्री, उपेक्षा---ये दश पारमित है। ये सब चार असन्येय कल्प है। निरतर अनेक जन्मो मे साधना करके सिद्धि को प्राप्त कर शाक्य गौतम बुद्ध बने। उस महानुभाव ने दीपकर बुद्ध के यहाँ प्रथम दीक्षा प्राप्त कर काश्यप बुद्ध तक चौबीस बुद्धो के यहाँ बुद्ध दीक्षा पायी ओर अन मे गौतम के रूप मे जन्म धारण करके सम्मासबुद्धि का अधिगमन किया।

"बुद्ध-दीक्षा कैसा कठिन साध्य है, शास्त्र यो बताता हे

जब यह सारा जग समुद्र बन जाता है, तब यदि कोई उस सागर को अपनी बाहुओ मे तैरकर पार जाने वाला समर्थ बनता है, तब ऐसा व्यक्ति बुद्धत्व को प्राप्त करता है। जब यह सारा जगत प्रज्वलित होने वाला अग्निकुड बनता है तब कोई पादचारी हो एक सिरे से दूसरे सिरे को पैदल पार करता है। तब ऐसा व्यक्ति बुद्धत्व को प्राप्त करता है। ऐसे बुद्धत्व को गौतम बुद्ध ने अनेक जन्म धारण कर साध्य बना लिया था।

"बुद्ध भगवान को बुद्धत्व के प्राप्त होते ही मार ने प्रवेश करके उन्हे निर्वाण मे प्रवेश करने का उपदेश दिया। जब यह सारा विशाल जगत दुख के सागर मे तडप रहा है, पब उस को इसके तरने का उपाय बताये बिना निर्वाण को अस्वीकार करने वाले दयापूर्ण व्यक्ति का धर्म हमारा बौद्ध धर्म है! ऐसे धर्म को अस्वीकार करने वाले अमृत को लात मारने वाले मूर्खो के समान मूर्ख होते है।"

चीनी पडित ने अपने धर्म की श्रेष्ठता का परिचय देते 'मूर्ख' शब्द पर जोर दिया। उस वक्त वह अधर्वणाचार्य व जैन समूह की ओर देख रहा था।

जैन पक्ष मे से हाहाकार उठे—"क्या हम मूर्ख   मुह बद करो ! तुम शास्त्रार्थ करने आये हो या निंदा करने ?"

चीनी पडित कुछ कहना चाहता था, पर उस कोलाहल मे उस के शब्द सुनाई न दिये।

गुरुनाथ श्रेष्ठी ने जैनियो को नमस्कार करते मौन धारण करने की अभ्यार्थना की—"आप के क्रोध का कारण अवश्य है, किंतु वाद-विवाद के समय निंदा को भी सहनने की क्षमता पैदा करनी चाहिये। यो तो अपने-अपने सिद्धातो का प्रतिपादन करना चाहिये, पडित से यही प्रार्थना करता हूँ।"

अधर्वणाचार्य तथा जैनमतावलबी शात हुये।

चीनी पडित ने अपना भाषण चालू किया

"धर्म का बोध करने के लिए मुझे कोशो की आवश्यकता नही है। ये तो बैल का बोझा है। मेरे लिए ये अस्तियाँ, दत और कपाल पर्याप्त है। यह सारा जगत दुखमय है। उस का कारण जान कर उसे दूर करने का मार्ग भी समझ लेना है।"

"पतिच्च समुप्पाद" है वह ! वह ऐसा होता है, इसलिए यह होता है ! उसके अस्तित्व के कारण ही इस का अस्तित्व है। उस का अस्तित्व न हो तो यह अदृश्य होगा ! यदि यह रुक गया तो वह भी रुक जायगा !"

' निर्वाण का सपादन 'आर्याष्टागमार्ग' मे ही सभव है । वे अष्टाग यो है । सदभिप्राय, सद विचार, सत्यभाषण, सच्चरित्र, सज्जीवन, सत्यप्रयत्न सन्मनस्कता, और सन्मनन ।

"अलावा इस के बौदधो का मार्ग 'मध्य मार्ग' है । देह को विशेष रूप से कष्ट देकर उसे निर्बल नही बनाना है और न इद्रिय के वशीभूत हो केवल दैहिक सुख का सपादन ही करना है ।

बौद्धो का धर्म सक्षेप मे यो है

'सब्ब पापस्स अकरणम् कुशलस्स उपसपदा सचित्त परियोद पानम् एव बुद्धन शासनम् ।'

"ऐसे सन्मार्ग का अनुसरण करने मे कोई तिरस्कार करने वाला भी होता है ? सम्मासबुद्ध व्यक्ति महेन्द्र, ब्रह्मा तथा देवताओ से भी उत्कृष्ट होता है । उस महानुभाव के इस जगत मे सचार करते समय उस सम्मासबुद्ध के शिर तथा नयनो से नील किरण, देह से सुवर्ण पीत किरण, अधरो से लोहित किरण, दतो से यवदात किरण, कर पदो से माजिष्ठ किरण, प्रसारित हो, सब मिल कर एक दिव्य प्रभाभास्वर रूप मे प्रकाशित होती है । चित्रकार सब एक हो अपने समस्त रगो का प्रयोग करने पर भी अद्भुत रूप को चित्रित करने मे असमर्थ होगे ।"

"ऐसे तथागत के धर्म का कौन पूर्वपक्ष कर सकता है ?"

इन शब्दो के साथ हुँकार करते चीनी पडित ने अपना भाषण समाप्त किया ।

बौद्ध सघ से जयनाद गूज उठे ।

अधर्वणाचार्य ने चीनी पडित का भाषण एकाग्र चित्त हो सुना था । वह सूक्ष्मग्राही था । इस लिए बडी सरलता से जान लिया कि चीनी पडित केवल कठस्थ किया हुआ सबक सुना रहा है ।

उस भाषण मे ऐसी कोई नवीनता न थी जिसे अधर्वण ने न सुनी हो। उसने केवल हुँकार करते अपने फेफडो की शक्ति का प्रदर्शन मात्र किया था।

जयनादो के शात होते ही अधर्वण ने मदहास करते खडे हो यो कहा

"गुरुनाथ श्रेष्ठी ने मुझे पूर्व पक्ष मे स्थान दिया है। चीनी पडित ने वाद का आह्वान किया है। अत मैं पहले जैन सिद्धातो का परिचय न दूँगा। थोडी देर प्रश्न पूछूगा। मै समझता हूँ कि सभा के लिए यह स्वीकार होगा।"

सभा मे विविध प्रकार के अभिप्राय व्यक्त हुए। किन्तु अन्त मे अधर्वण को प्रश्न पूछने की अनुमति मिली।

अधवर्ण ने अपना भाषण प्रारम्भ किया

"आप लोगो ने अब तक ध्यान से चीनी पडित का भाषण सुना। मुझे बडी प्रसन्नता हुई। आप मे से कुछ लोगो ने भाषण सुनने के पश्चात् साधुवाद दिये। किन्तु मैं पूछना चाहता हूँ कि यह भाषण किसी की समझ मे भी आया? मेरे प्रतिद्वन्द्वी ने गौतम की महानता की ही प्रशसा की, किन्तु गौतम के सिद्धातो का परिचय तक न दिया। सच्चरित्र पर सभी धर्म जोर देते है। इसमे गौतम की विशिष्टता कहाँ रही। उनको महानु-भाव बताने के लिए हमारे लिए प्रमाण ही क्या है?"

अधर्वण की व्याख्या सुन कर चीनी पडित की विद्वत्ता की दाद देने वाले मध्यस्थो ने भी कहा, "अधर्वणाचार्य सत्य कह रहे है।"

चीनी पडित ने उपेक्षा भाव से सर उठाये बिना उत्तर दिया .

"यही तुम्हारा पूर्वपक्ष है? इसके लिए असख्य बौद्ध ग्रन्थ ही प्रमाण

अधर्वण केवल इसी प्रत्युत्तर को पाना चाहता था। उसने मद स्वर मे पुन अपना भाषण शुरू किया, क्रमश उसका कठ गभीर होता गया।

"अच्छी बात है! तुम्हारे वाक्यो का प्रमाण बौद्ध ग्रथ है। मै अपने साथ जो शास्त्र ग्रथ लाया हूँ, वे बुद्ध को कुछ दूसरे ढग से चित्रित करते है। तुम अपने साथ प्रमाण ग्रथ नही लाये हो। तुम जो अस्थियाँ, दत व कपाल अपने साथ लाये हो, वे सब गौतम बुद्ध की महानता को कैसे प्रमाणित कर सकते है। बौद्ध धर्म हड्डियो का धर्म है। सघाराम मे तुम लोग हड्डियो तथा दतो की ही तो पूजा करते हो! चिताओ पर बनायी गयी समाधियाँ ही तो तुम्हारे चैत्य है। तुम तीन गाडियो मे प्रमाणार्थ जो भीभत्स वस्तुएँ लाये हो वे साबित करती है कि बौद्ध धर्म श्मशान धर्म है। श्मशानो के आश्रय मे पिशाच होते है, इसलिए तुम्हारा धर्म पिशाच धर्म है। यही है न ?"

अधर्वण का भाषण प्रेक्षको ने मत्र मुग्ध सा सुना। उन्हे लगा कि क्या अधर्वण महान मत्रसिद्ध व्यक्ति तो नही।

तटस्थ लोगो ने सोचा – "सत्य ही तो कहते है। धर्म की श्रेष्ठता प्रमाणित करने के लिए ये हड्डियाँ दत व कपाल किसलिए!"

चीनी पडित उग्र हो उठा।

"मैने सोचा था कि तुम एक पडित हो। यही तुम्हारा पूर्वपक्ष है। चीन मे ऐसा पूर्वपक्ष करने वाले के साथ कैसा व्यवहार करते हैं, जानते भी हो?"

ये शब्द कहते चीनी पडित अजुली मे हड्डियाँ भर कर वेदिका पर डालते कुछ कहने को हुआ।

अधर्वणाचार्य बिजली की भाँति उठ खड़ा हुआ। उन हड्डियो को उठा कर चीनी पडित के सिर पर डाला। इस पर उनका वार्तालाप युद्ध क्षेत्र के रूप मे बदल गया।

लगता था कि दोनो पक्ष वाले लडाई के लिए सन्नद्ध हो आये हो। पर बौद्धो मे जो सजगता थी, वह जैनियो मे न थी। शाति की रक्षा करने वाले स्वयसेवको के हाथो से उभय पक्ष वालो ने लाठियाँ खीच ली। अधाधुन्ध प्रयोग करने लगे। चीनी पडित अपने सिद्धातो को प्रमाणित करने जो तीन गाडियो के कपाल, हड्डियाँ व दाँत लाया था, वे सब एक दल के तथा अधर्वण के शास्त्र ग्रथ दूसरे दल के आयुधो के रूप मे काम मे लाये गये।

बौद्ध मतावलम्बियो मे दस तथा जैन पक्ष के वीस लोगो की तत्काल मृत्यु हुई। उभय पक्षो मे ऐसे व्यक्ति ढूँढे भी न मिलते थे जो घायल न हुआ हो या चोट न खायी हो। तटस्थ व्यक्ति भी बच न पाये।

बडी मुश्किल से चीनी पडित और अधर्वण अपने निवास पहुँचे। पावुलूरि मल्लना तथा वेमुलवाड भीम कवि रक्त सिक्त वस्त्रो से घर लौटे।

सभा का सचालक उभय पक्षो के बीच समझौता करते गया और दोनो दलो के प्रहारो से मूर्छित हो गिर पडा।

सयोग से गुरुनाथ श्रेष्ठी बच गया। अपने शकट पर सवार हो घर जा पहुंचा।

राजभटो ने उस दिन कुल तीन सौ लोगो को बदी बनाया। वे चीनी पडित तथा अधर्वणाचार्य को भी वदी बनाना चाहते थे पर सेनाय नायक ने उन्हे रोक दिया।

उस रात्रि को चीनी पडित की तरफ से कुछ लोगो ने तथा अधर्वण की ओर से कुछ लोगो ने निर्णायको के घर जा कर अनुरोध किया कि अपने प्रतिनिध की विजय की घोषणा करते विजय-पत्र लिख कर दे।

कुछ निर्णायको ने अधर्वणाचार्य का समर्थन करते उनकी विजय के सूचनार्थ जय-पत्र लिख कर हस्ताक्षर किये। उन्होने कहा कि अधर्वण ने वौद्ध धर्म को श्मशान धर्म प्रमाणित किया है।

कुछ लोगो ने बौद्ध धर्म की व्याख्या करने वाले चीनी पडित की याद देते उनको विजय-पत्र दिये। उन्होने कहा कि अथर्वण को हड्डियाँ चीनी पडित पर डाल कर उद्दण्ड नही होना चाहिए था। यह पडित को शोभा नही देता।

उस रात्रि को अथर्वणाचार्य के पक्ष-पातियो ने पहले गुरुनाथ श्रेष्ठी के घर जा कर उनकी विजय की माँग करके विजय पत्र प्राप्त किये। उसके अनतर चीनी पडित के पक्षपातियो ने भी अपने पडित के लिए विजय-पत्र पाये।

राजमहेन्द्रपुर के मार्गो मे अपने-अपने धर्म के पडित की विजय की घोषणा करते उत्सव मनाया गया।

बेचारे उस दिन अथर्वणाचार्य के अनुपलब्ध एव महत्वपूर्ण ग्रथो की बडी क्षति हुई। उसमे वह पाडुलिपि थी जो रच महाभारत का तेलुगु अनुवाद था। तीन पर्व पद्य मे अनुदित थे। विराटपर्व की प्रति जो घर पर थी, बच रही।

शकर स्वामी ने तैत्तरीयोपनिषद गीता के कतिपय श्लोक, प्रथम चार ब्रह्म सूत्रो का भी प्रवचन किया।

तीसरे पहर मे शकर गज पर शकर स्वामी का जुलूस निकला। किले के द्वार पर पहुँचने ही सम्राट राजराज नरेन्द्र अम्मगदेवी समेत विनीत हो आ पहुँचा। उन दोनो ने शकर स्वामी के चरण स्पर्श कर वन्दना की और उनके चरण रज सर पर लिया।

सध्या समय तक नगर का सचार समाप्त हुआ। तब तक असख्य सुवासिनियो ने दीपो को इस तरह सजाया कि समस्त धवलगिरि श्री चक्राकृति मे आलोकित हो उठे। सध्या के होते ही सुहासिनियो ने दीपक जलाये।

सध्या को शकर स्वामी ने श्री चक्रराजार्चना प्रारभ की, उसके अग के रूप मे वहाँ पर उपस्थित सुवासिनियो को पक्ति बद्ध बिठाकर परदेवता बुद्धि से भक्ति समेत विनम्र हो शकर स्वामी ने स्वय पूजा की। यह सुहासिनी पूजा का उत्सव महारुद्राभिषेक महोत्सव से बढ कर था।

वहाँ पर पूजा प्राप्त की हुई सुहासिनियो मे वज्जिय प्रेग्गडा की धर्मपत्नी वज्जिय सामिदेवी भी थी।

समस्त सुहासिनियो को आमृत-पात्र दिये गये। शकर स्वामी ने शिष्टामृत ग्रहण किया।

इसी समय राजराज नरेन्द्र तथा अम्मग देवी को अमृत पात्र भेजने के निमित्त शकर स्वामी ने राज पुरोहित को बुलाया। उस पुकार को सुनते ही राजराज नरेन्द्र अपनी पट्टमहिषि अम्मग देवी समेत वहाँ उपस्थित हुआ।

राज दपति ने शकर स्वामी के हाथो से यथाविधि-अमृत-पात्र ग्रहण किये।

शकर स्वामी ने राजराज नरेन्द्र से बताया–

"वत्स, तुभ्य मया दत्त शिष्ट जुष्ट सुधा रसम् ,
तव शत्रून् हरिष्यामि सर्वाभीष्टान् ददामिते ।"

राजराज ने–

"आदाय च गुरो स्साक्षात् आदिशक्ते रनुग्रहात्
दत्त शिष्टामृत पुण्य सविदग्नौ जुहोम्यहाम् ।"

ये शब्द कहते उस पात्र को स्वीकार किया ।

महाराज पूजा के समय बहुत कम आते है । अगर कभी आते भी है तो पूर्व सूचना देकर आने की परिपाटी हैं । ऐसी हालत मे महाराजा के बैठने केलिए विशेष रूप से स्थान नियत होता था । पूर्व सूचना न देकर आने पर भी कोई अतर नही होता । कोई यह नही जानता था कि राजदपति कब आया । पूजोत्सव के समयो मे महाराणियो के भारत सप्रदाय के अनुसार पर्दा नही होता ।

पूजा के अत मे ब्राह्मणो ने श्रीदेवी को वेद-वेदाग श्रवण कराया । शकर स्वामी ने वेदात-श्रवण कराया । इस के बाद चीदमार्य से निवेदन किया :

"पूजाग के रूप मे नाटक का पठन करने का आचार नही है । हॉ, महाभारत और रामायण का पठन होता है । केवल उपनिषद के अर्थ को दृश्य काव्य के रूप मे 'प्रबोध चन्द्रोदय' नाम से यहॉ पर उपस्थित कृष्णमिश्र ने रचा है । उस का एक दृश्य श्रीदेवी के समक्ष सुनने की आज्ञा चाहता हूँ ।"

शकर स्वामी ने मन्दहास करते हुये कहा–

"पूर्व मीमासक तुम ही काव्य-श्रवण की अभ्यार्थना करते हो तो हमे कोई आपत्ति न होगी, बल्कि अपार आनद ही होगा ।"

कृष्णमिश्र ने ाचार्य तथा परदेवी की। वन्दना की, तत्पश्चात प्रबोध चन्द्रोदय के छठवे अक की प्रस्तावना अश सुनाया ।

"तत' प्रविशति उपनिषद् शातिश्च ।" शब्दो के साथ समाप्त किया

श्रोतागण परमानदित हुआ

तदुपरात शकर स्वामी ने अपने गुरु श्रृगगिरि पीठाधिपति के द्वारा भेजा पत्र सभापति के हाथ देते कहा—"यह श्रीमुख इस समय श्रीदेवी के सान्निध्य मे समस्त जनो को सुनाने के लिए गुरुदेव का आदेश हुआ है ।"

सभापति ने उस पत्र को आखो से लगाकर पढ सुनाया

"श्रीमत्परमहस परिव्राजकाचार्यवर पद वाक्य प्रमाण पारावार पारीण यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार ध्यान धारण समाध्यष्टाग योगा-नुष्ठान निष्ठागरिष्ठ तपश्चक्रवर्त्यनाद्यविच्छिन्न गुरु-परपरा प्राप्त साप्रदा-यिक षडदर्शन स्थापनाचार्य व्याख्यान सिहनाधीश्वर सकल वेदार्थ प्रकाश साख्यत्रयी प्रतिपादक सकल निगमागम सार हृदय वैदिक मार्ग प्रवर्तक सर्वतत्र स्वतत्र श्रीमद्राजाधिराज महाराज गुरु भूमडलाचार्य ऋश्य श्रृगगिरिपुरवराधीश्वर श्रीमद्विद्या शकर परमावेश प्रकाशित श्रीमत्सच्चिदानद भारती स्वामी करकमलसजात श्रीबोधानद भारती स्वामिभि प्रवर्तिता श्रीमुखपत्रिका."

"आज से बीस वर्ष पूर्व कृष्ण शर्मा नामक एक कर्नाटक ब्राह्मण तुरीयाश्रम ग्रहण कर हमारे पास उपदेशार्थ आया। उस की अभ्यर्थना पर हमने उपदेश दिया। परतु अनुष्टान आदि का ज्ञान प्राप्त किये बिना ही वह हम से आज्ञा लेकर चला गया। इसके बाद हमे मालूम हुआ कि वह बौद्ध भिक्षुओ के साहचर्य मे हेयपूर्ण आचारो का अवलबन कर रहा है। इस पर हमने उसे चातुर्वर्ण्य शिष्य वृन्द से बहिष्कार किया। उस के हृदय

भाग पर हमारी मुद्रा नग्न कराकर लगवा दी और श्रीमुखपत्रिकाएँ कल्याण कटक आदि प्रदेशों में प्रकाशित करायी। परन्तु वह बहुत समय तक अज्ञात ही रहा।

"खोज खबर कराने से अब हमें मालूम हुआ कि वह राजमहेन्द्रपुर के समीप कुछ समय से वेष बदल कर सत्कार पा रहा है। लोगों द्वारा आदर प्राप्त कर रहा है। इसलिए हम अपने चातुर्वर्ण्य शिष्य वृन्द को सूचित करते हैं कि उस के वक्षोभाग में अंकित हमारी मुद्रा को पहचान कर उसको सभी प्रकार से बहिष्कृत करें।

इति नारायण स्मृति
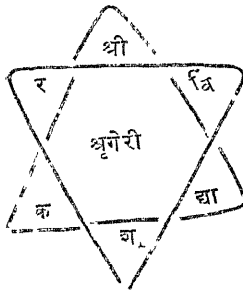
जगद्गुरु
श्री बोधानंद
भारती स्वामी

श्रीमुखपत्रिका के पठन के बाद प्रीति भोज दिया गया।

कृष्ण शर्मा कौन? वह किस वेष में पूजा पा रहा है? वेष बदलकर राजमहेन्द्रपुर में घूमने वाले ब्राह्मण ने अपना नाम नारायण भट्ट बनाया है।

वह अत्यंत वैदिक निष्ठावान जैसे व्यवहार कर रहा है। क्या वह बहिष्कार करने योग्य है? वह कदापि नहीं हो सकता। इस प्रकार उसे पहचानने के लिए कई लोग व्यग्र हो उठे।

सम्राट अपनी पट्टमहिषि के साथ आज्ञात रूप मे आया था। किंतु लौटते समय राजराज एक उत्तम अश्व पर सवार हुआ। अम्मगदेवी पालकी पर सवार हुई।

पच तूर्यों का नाद हुआ।

राजमय्या, जननाथ तथा मुप्पराज नामक तीन दण्डनाथो मे असख्य राज भटो के साथ राजदपति को परिवेष्ठित कर उन्हे सुरक्षित दुर्ग मे पहुँचाया

उस समय जो करदीपिकाएँ प्रज्वलित हुई, उनकी काति साक्षात् दिन का स्मरण दिला रही थी।

40

युवराज राजेन्द्रदेव अपने चोळ मित्र तथा नारायणभट्ट को साथ ले सेना समेत चन्द्रादित्य के आधिपत्य मे चक्रकोटचाभिमुखी हो जाने वाली सेना से जा मिला। उसी प्रदेश मे पूर्व योजनानुमार थोडी और सेनाएँ आ मिली। उन सम्पूर्ण सेनाओ का नेतृत्व राजेन्द्रदेव ने अपने अधीन मे लिया। इसके उपरात हठात भ्रमरकोटच पर आक्रमण करके उसे घेर लिया।

भ्रमरकोटच इद्रावती नदी तथा गोदावरी के सगम स्थल पर निर्मित एक स्थल एव जल दुर्ग है। वह दुर्ग अत्यन्त बलिष्ठ था। बलवान सेनाओ को भी उस पर अधिकार करने के लिए कई मास लगते है। भ्रमरकोटच चक्रकोटच के अधिपति का सामत मधुरातक देव का था।

मधुरातक देव अतरग रूप मे राज राजनरेन्द्र का भक्त र ा। मधु-रातक देव का राजगुरु मेडिपात्र काचीपुर मे नन्नय भट्टारक, नारायणभट्ट तथा वज्जिय पुत्र का सहपाठी था। मधुरातक देव कभी न कभी स्वतन्त्र होने की अभिलाषा रखते हुए अपनी सारी दृष्टि चक्रकोटचाधिपत्य पर केन्द्रित कर राज राजनरेन्द्र के बल पर आधारित था।

मधुरातक देव ने दुर्ग की रक्षा का प्रयत्न करते हुए से अभिनय किया। वह इस प्रकार वेगी सेनाओ के अधीन हुआ कि अकस्मात् वेगी सेना के आक्रमण से विवश हो पराजित हो गया हो। इसलिए उसके

अतरगी सेनापतियो को छोड कोई भी यह रहस्य नही जानता था। वेगी सेनाएँ यह सोच कर फूली न समायी कि युवराज राजेन्द्र देव के नेतृत्व मे भ्रमरकोटच पर मानो महान विजय प्राप्त की हो।

भ्रमरकोटच के अधीन होने से युवराज के लिए चक्रकोटच पर आक्रमण करना सुलभ साध्य बना।

भ्रमरकोटच चैत्र कृष्णा अमावास्या के दिन बुधवार को युवराज के अधिकार मे आया।

युवराज ने मधुरातक देव से सभा के सम्मुख अपना सामत बता कर उससे पुरस्कार ग्रहण किये, उसे क्षमा कर यात्रा के निमित्त अनेक नौकाओ को प्राप्त किया।

वहाँ पर दो दिन पर्यत विजयोत्सव मनाये। अनतर वैशाख शुक्ला विदिया शुक्रवार के दिन वृषभ सक्रांति के समय यात्रा की भेरी बजवायी। प्रारम्भ मे इन्द्रावती नदी पर नौकाओ पर अपनी सेनाओ को ले जाने का निश्चय करके युवराज मे नौकाएँ ली, किन्तु अतिम समय अपना विचार बदल कर स्थल मार्ग से ही यात्रा करने का निश्चय किया।

धारावर्ष को बिलकुल पता न था कि वेगी सेनाएँ भ्रमरकोटच पर आक्रमण करने जा रही है। पर वह यह जानता था कि चैत्र मास के अतिम चरण मे कर्नाटक चालुक्य नरेश अहोपमल्ल सोमेश्वर की सेनाएँ वेगी राज्य पर हमला करने वाली है। अलावा इसके वह स्वय अनेक गुप्त-चरो को वेगी राज्य के प्रमुख केन्द्रो मे भेज कर विद्रोह के प्रयत्न करा रहा था। उसे बराबर ये समाचार मिल रहे थे कि राजमहेन्द्रपुर मे राजबन्धु कुमारषट्क बौद्ध सघारामो की सहायता से विद्रोह करने की तैयारियाँ कर रहा है। उसने राज राजनरेन्द्र की सेवा मे न उपहार भेजे थे और न अपना प्रतिनिधि ही भेजा था, फिर भी प्रकट रूप मे रोष प्रदर्शित करते कोई घोषणा न हुई थी। इसलिए उसने निश्चय किया कि राजराजनरेन्द्र

ने अपनी असमर्थता के कारण ही मौन धारण किया है। पर उसने यह कल्पना तक नहीं की कि उसके विद्रोह के प्रयत्नों के प्रतिक्रिया स्वरूप राज राजनरेन्द्र गुप्त रूप से उस पर आक्रमण करने के लिए भारी सेना दल भेजेगा !

अहवमल्ल सोमेश्वर ने भी सारा समय के साथ व्यय नहीं किया। चैत्र पूर्णिमा के दिन ही वेंगी राज्य की पश्चिमी सीमा पर चामुण्ड राय नामक अपने दण्डनाथ के अधीन एक भारी सेना भेज दी। यह सेना आक्रमण की तैयारियाँ कर रही थी। इसी समय उसे यह समाचार मिला कि कामराज ने राज राजनरेन्द्र के फैसले पर असन्तुष्ट हो कर्नाटक राजा से क्षमादान का निवेदन करने की अपील की जो अभ्यर्थना की, उसे राजराज ने अस्वीकार कर दिया। इस पर अहवमल्ल सोमेश्वर ने राज राजनरेन्द्र के पास दूत भेजा कि इस अवहेलना का तुरन्त समाधान दे अन्यथा उसे दण्डित किया जाएगा।

दूत द्वारा यह समाचार सुन कर राजराज की भृकुटी तन गयी। फिर सँभल कर एक तिनका मँगवाया, उसे दूत के हाथ देते हुए कहा—"तुम्हारे राजा का प्रत्युत्तर यही है। यह उनको सौंप दो।"

राजदूत के वेंगी राज्य की सीमा पार करते ही चामुण्डराय की सेना ने अचानक आरुगडि दुर्ग पर धावा बोल दिया। उसके उत्तर के दो दुर्ग तथा दक्षिण के दो दुर्ग चामुण्डराय के अधीन हो गये। मध्य में स्थित दो दुर्गों ने चामुण्ड राय का सामना किया।

यह आक्रमण चैत्र कृष्णा अमावास्या के दिन हो गया था। यह समाचार अभी तक धारावर्ष महाराजा को मालूम न था।

इसी बीच अमरकोटच पर वेंगी सेनाओं के आक्रमण करने की खबर मिली। इस पर धारावर्ष आश्चर्यचकित हो गया।

धारावर्ष का यह विचार था कि अमरकोटच बलिष्ठ दुर्ग है। वह बहुत समय तक सामना करते ठहर सकता है। इसलिए धारावर्ष ने हिम्मत

बटोर ली और चक्रकोटच दुर्ग को और मजबूत बनाने के प्रयत्न चालू किये ।

शिथिलप्राय प्रदेशो को शिल्पियो द्वारा दिन-रात काम लेकर उनका पुन निर्माण कराया । खनको ने परिखा को और गहरा बना दिया ।

दण्डनाथो ने सेनाओ का सगठन कर सशस्त्र बना दिया । व्यापारियो ने खाद्यपदार्थ तथा अश्वादि के लिए आवश्यक घास का उचित प्रबन्ध किया ।

दूर के एक पहाड पर स्थित सरोवर से गुप्त मार्ग द्वारा दुर्ग के मध्य भाग मे स्थित विद्यवासिनी देवी के मदिर के प्रागण मे स्थित कुएँ मे जल आता है । विद्यवासिनी देवी चक्रकोटच के अधिपतियो की कुलदेवी है । यह प्रतीति है कि उस कुएँ मे स्वयभू लिग है । उसका जल जितना भी निकाले घटता नही । वही दुर्ग के समस्त प्राणियो का आधार है । उस कुएँ के जल का मूल दुर्ग के रहस्यो मे से एक है ।

धारावर्ष और उनकी इकलौती पुत्री विन्ध्यवासिनी ने स्वय इन प्रयत्नो का निरीक्षण किया ।

परतु दो ही दिनो मे भ्रमरकोट्य के पराजित होने का समाचार मिलते ही धारावर्ष डर गया । फिर भी उसने हिम्मत न हारी । भ्रमर-कोट्य से चक्रकोट्य जाने वाले सभी मार्गो को सेना-प्रस्थान के लिए निरु-पयोगी बनाने का तत्काल आदेश जारी किया । विशाल मार्गो पर महावृक्ष गिराकर अवरोध उपस्थित किया । बडे-बडे तडागो के बाध तुडवाकर उन प्रदेशो को निर्जल बनवा दिया ।

राजेन्द्रदेव ने पहले ही इन सब की शका की और उचित तैयारियाँ भी की । प्रारभ मे उसने घोपणा की कि प्रधान मार्ग से ही उसकी सेनाएँ आगे बढेगी, किंतु बाद को अपना विचार बदल कर लौटने वाले की भाति थोडी दूर सेनाओ को वापस ले जाकर दूसरे मार्ग का अनुसरण किया और तीन ही दिनो मे चक्रकोट्य दुर्ग के निकट पहुँचा ।

धारावर्ष भयभीत हो उठा। दुर्ग-रक्षा की तैयारियाँ अब भी चालू थीं। दुर्ग-रक्षा के निमित्त विद्यवासिनी के अधीन भारी सेना को छोड बाकी सैनिको के साथ धारावर्ष दुर्ग के बाहर आया और राजेन्द्रदेव की सेनाओ का सामना किया।

धारावर्ष की सेनाओ मे असंख्य हाथी थे। चक्रकोट्य मण्डल तथा उस के समीप मे स्थित वायिरा नगर नामांतर वज्रपुर प्रदेश हाथी और हीरो के लिए मशहूर थे।

राजेन्द्रदेव की सेना मे गजबल कम था और अश्व दल अधिक था। इसलिए उसने अश्व-दल को वाम तथा दक्षिण भागो मे नियुक्त कर मध्य-भाग मे गजदल को नियुक्त किया। गजदल को एक उन्नत प्रदेश मे ठहरा कर अश्व दल के साथ तीव्रतापूर्वक धारावर्ष की सेना पार हमला किया। उस हमले से धारावर्ष की सेना तितर-बितर हो गयी।

धारावर्ष का गजदल बेकार साबित हुआ। वेगी के अश्व दल ने हाथियो को क्लेश पहुँचाया। तब मौका पाकर करुणाकर तोंड मान वेगी गजदल के साथ आगे बढा।

धारावर्ष के पचास हाथी वेगी युवराज के अधीन हो गये। बाकी सेना को लेकर धारावर्ष शाम तक दुर्ग के भीतर चला गया।

युवराज ने अपनी सेनाओ को विजयोत्सव मनाने से निषेध किया। उसने कठिन आदेश दिया कि जिस दिन दुर्ग वेगी सेनाओ के अधीन पूर्णरूप मे हो जायगा, उस दिन वराह चिह्न वाला झंडा दुर्ग पर फहराया जायगा, तब तक विजयोत्सव मनाना मना है।

उस रात को युवराज, चोळ मित्र, नारायण भट्ट तथा दण्डनाथ चन्द्रादित्य को नींद ही कहाँ? वे सब चक्रकोट्य दुर्ग को भेदने के लिए अनुकूल स्थानो का चुनाव करने और आक्रमण की व्यूह-रचना मे संलग्न थे।

साथ ही चक्रकोट्य दुर्ग प्रवेश करने वाले सभी मार्गो का युवराज ने अवरोध कराया। समीप के ऊँचे प्रदेशों पर स्कधावार केन्द्रो का निर्माण कराया और उनकी रक्षा के लिए आवश्यक प्रबध भी किया।

स्कधावार की दिन-रात रक्षा के निमित्त सैनिकों का पहरा बिठाया गया।

क्षतगात्रो की चिकित्सा के लिए शताधिक वैद्य सेना के साथ थे। सेना के साथ साधारणत चलने वाले नट, गायक, विदूषक तथा अन्य मनो-रजन करने वालो पर युवराज ने प्रतिबध लगाया था।

यो तो सुरापान सैनिको के लिए युवराज ने निषेध किया था, फिर भी प्रतिदिन स्कधावार मे अमित मात्रा मे मद्य पहुँचाने कलारो को नियुक्त किया। वह मदिरा हाथियो तथा युद्ध क्षेत्र मे जाने वाले सैनिको को युद्ध के पूर्व देने का आदेश था। युद्धकाल मे वीरो के लिए दिया जाने वाला यह मद्य वीरपान नाम से व्यवहृत था।

इस प्रकार युद्ध की समस्त तैयारियाँ करते राजेन्द्रदेव ने सेनाओ को एक दिन युद्ध--विराम दिया।

चक्रकोट्व दुर्ग के उत्तर व पश्चिम मे इन्द्रावती नदी बह रही थी। पूरब और दक्षिण मे बलिष्ठ सिह-द्वार थे।

दुर्ग के चतुर्दिक बुर्जो तथा दीवारो पर सैकडो सायुध सैनिक पहरा दे रहे थ।

राजेन्द्रदेव ने अपने स्कधावार को बाणापात मार्ग के पार निर्माण कराया। इस का निर्द्धारण करने के लिए अनेक स्थानो मे जाकर युवराज ने बाण-प्रयोग कराया, तब यह निर्णय लिया था।

41

चक्रकोट्य दुर्ग के द्वारो मे पूर्वी द्वार अधिक बलिष्ठ था। उस अभेद्य द्वार को भेदने का रजेन्द्रदेव ने अपनी सेना को आदेश दिया। सूर्योदय के पूर्व ही उस की सेनाओं ने बडी मुस्तैदी के साथ पूर्वी दर्वाज़े पर धावा बोल दिया।

राजा धारावर्ष को गुप्तचरो द्वारा पता चल गया था कि इस हमले मे भाग लेने वाले सभी शत्रु सेनापति युवक है। यह भी पता चला था कि युद्ध के मैदान मे शत्रु की विजय का कारण वेगी सेनापतियो की युद्ध कुशलता नहीं, अपितु अश्व दल का आधिक्य था। ये लोग पूर्वी द्वार को भेदने का जो प्रयत्न कर रहे है, वह उनकी अनुभव हीनता का द्योतक है। अत खतरे का कोई डर नही है।

इसी समय युवराज राजेन्द्रदेव, करुणाकर तोडमान तथा जयगोडार अनेक प्रकार से अपने को सजाकर निर्भयता पूर्वक युद्ध भूमि मे सचार करने लगे। उन्हे युद्ध-भूमि विनोद भूमि सी प्रयीत हो रही थी। उफ! ऐसे लोगो ने भ्रमरकोट्य पर कैसे अधिकार कर लिया! इस मे कोई षड्यत्र होगा।

सेनापतियो को रणक्षेत्र मे सचार करते देख धारावर्ष को आश्चर्य हुआ। उसने तत्क्षण धनुर्धारियो को आदेश दिया कि मौका मिलते ही उन सेनापतियो पर बाणो की वर्षा करे।

वेगी सेना ने उन्ही हाथियो का दुर्ग के द्वारो को भेधने मे नियुक्त किया, जिन हाथियो को दो वर्ष पूर्व युद्ध मे प्राप्त किया था। उनके चेहरो पर लोह पट बाध दिये गये। हर बार पॉच हाथी दर्वाजो को तोडने आगे बढते थे। इस प्रयत्न को विफल बनाने के लिए चक्रकोटय के सैनिक बाण, अग्नि, गरम तेल एव शिलाओ का प्रयोग कर रहे थे।

चक्रकोट्य के सेनापतियो की दृष्टि मे वेगी राज्य का यह व्यर्थ प्रयत्न था। इसलिए चक्रकोट्य की सेनाओ का उत्साह बढता गया। राजेन्द्रदेव की सेनाएँ थक जाती थी, इसलिए उन्ह विराम देकर पुन नयी सेनाएँ दुर्ग भेदने को आगे बढती थी।

हाथी एक ओर दुर्ग के द्वारो को तोड रहे थे, तो दूसरी तरफ ताड की सीढियो पर सैनिक दुर्ग की दीवारो पर चढने का यत्न कर रहे थे। दो ऊँचे प्रदेशो पर तोप बिठाये गये थे जिनके द्वारा बडी-बडी शिलाएँ दुर्ग मे फेकवा दी जाती थी।

चक्रकोटच के सैनिको ने तोपो का नाम तो सुन रखा था, पर कभी उन्हे देखा न था! वेगी राज्य के तोपची भी दक्ष न थे, फलत उनके वार लक्ष्य से चूक जाते थे।

प्रथम दिन का हमला बेकार साबित हुआ, पर असख्य वेगी सैनिक घायल हुए। शाम तक यह समाचार सर्वत्र फैल गया कि युवराज का मित्र जयगोडार बाणाघात हो पट कुटी मे शस्त्र चिकित्सा पा रहा है।

दूसरे दिन भी वेगी सेना दुर्ग भेद्य मे असफल रही और समाचार मिला कि करुणाकर तोडमान घायल हो चिकित्सा पा रहा है। अत सारी सेना मे विपाद छा गया।

तीसरे दिन भी वेगी सेनाओ को सफलता न मिली। उस दिन युद्ध क्षेत्र मे युवराज कही दिखाई न दिया। युवराज के अगरक्षको को सैनिको

को बताया कि युवराज के चोळ मित्रो की हालत खतरनाक है। इसलिए उनकी चिकित्सा कराने मे युवराज अधिक दिलचस्पी ले रहा है।

युवराज और उनके चोळ मित्रो के रण क्षेत्र मे उपस्थित न होने से युद्ध-सचालन का सारा भार चन्द्रादित्य दण्डनाथ पर आ पडा था। वह बडा समर्थ सेनापति था।

चन्द्रादित्य ने चक्रकोटच के मण्डलाधिपति धारावर्ष की इकलौती पुत्री विंद्यवासिनी के सम्बन्ध मे अनेक अद्भुत कथाएँ सुन रखी थी।

विंद्यवासिनी बडी रूपवती एव विदुषीमणि थी। ज्योतिषियो ने धारावर्ष को बताया था कि उसके पुत्र-सतान होगी। इसलिए धारावर्ष को अपनी पुत्री को ही पुत्र मान कर राजोचित समस्त प्रकार की विद्याएँ उसे सिखलायी थी। वह सदा पुरुष वेश मे रहती। अस्त्र-शस्त्रो के सचालन मे बडी निपुण थी।

अनेक राजकुमारो ने विंद्यवासिनी के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की, परतु उसने शपथ ली ली कि जो राजकुमार उसे खड्ग युद्ध मे पराजित करेगा, उसीके साथ वह विवाह करेगी। कुछ राजकुमारो ने उसके साथ युद्ध किया और पराजित हुये थे। चन्द्रादित्य ने उसे पराजित कर विवाह करने का सकल्प किया था। वज्जिय प्रेग्गडा ने इसके लिए राजराजनरेन्द्र से निवेदन कर अनुमति भी दिलायी थी।

प्रति-दिन चक्रकोट्य की राजकुमारी दुर्ग की दीवारो पर सचार करते सैनिको मे उत्साह भरती थी। वह जहाँ भी पहुँचती, वहाँ के सैनिक जयनाद करते थे। इन जयनादो का रहस्य अज्ञातप्रेमी चन्द्रादित्य को पता लग गया था।

तीसरे दिन युद्ध मे चन्द्रादित्य ने जो कुशलता दिखाई, वह वर्णन के बाहर थी। दुर्ग मे जिस दिशा की ओर चन्द्रादित्य अपनी सेनाओ को ले जाता था। विंद्यवासिनी का कवचावृत रूप चन्द्रादित्य के हृदय-पटल पर अकित हो गया था। उसके दर्शन की अभिलाषा से चन्द्रादित्य पुनः पुनः

बाणाघात मार्ग का अतिक्रमण कर आगे बढता जाता था। शाम के होते-होते चन्द्रादित्य के वक्षस्थल पर एक बाण आ चुभा। वह विद्यवासिनी नामाँकित बाण था।

चन्द्रादित्य को पटकुटीर मे ले जा कर वैद्य परिचर्या करने लगे।

इसके उपरात नारायण भट्ट ने सेनाओ का सचालन प्रारम्भ किया। किन्तु सैनिको का उत्साह मद पड गया था। इस पर चक्रकोटय के सैनिको का उत्साह दुगुना हो उठा। वे उच्च स्वर मे सिहनाद करने लगे। दुर्ग की दीवारो पर भेरी नाद सुनाई दे रहे थे।

42

चक्रकोट्य के तीन कोस की दूरी पर इन्द्रावती के तट पर इन्द्रविहार नामक एक महान बौद्ध तीर्थ है। प्रति वर्ष यहां पर श्रावण मास मे अष्टमी पूर्णिमा तक महोत्सव मनाये जाते है। चक्रकोट्य तथा भ्रमरकोट्य से भी असंख्य यात्री इन उत्सवो मे शामिल होते है। चक्रकोट्य मण्डल भले ही युद्ध मे निमग्न हो, फिर भी उत्सव, तीर्थयात्रा तथा पूजाओ पर कोई निषेध नही होता है। हाँ, यात्रिको की संख्या थोडी अवश्य घटती है।

चक्रकोट्य दुर्ग को भेदने मे राजेन्द्रदेव तथा वेंगी सेनाओं को भगाने मे धारावर्ष निमग्न था। अडोस-पड़ोस के गाँवो से अनेक लोग इन दोनो सेनाओ मे आ मिले थे।

चक्रकोट्य मे रसद और अन्य सामाग्री के पहुँचने से राजेन्द्रदेव की सेनाओ ने निरोध किया। उधर धारावर्ष तथा उसक दण्डनाथ भी गुप्त रूप से राजेन्द्रदेव की सेनाओ को दूध, दही, शराब व रसद के पहुँचने से रोकने लगे। पर साधारण जनता के दैनिक कार्यकलापो मे कोई विघ्न उपस्थित नही करता था। किसान अपने खेतो मे हल चला रहे थे। मल्लाह अपनी नौकाओ को निर्विघ्न चला रहे थे। केवल चक्रकोट्य के समीप नौकाओ के आवागमन मे प्रतिबध था।

इन्द्रविहार मे यात्रियो के दल दिन प्रतिदिन जमा होते जाते थे। वहाँ पर प्रतिदिन एक वाहन पर बुद्ध भगवान की मूर्ति का जुलूस निकलता था।

उम समय भजन करते भक्त-वृन्द दीप स्तम्भो को हाथ मे ले उछल-कूद किया करते थे ।

कुछ लोग बुद्ध का नाम-सकीर्तन करते थे । कुछ लोग नृत्य प्रदर्शन करते थे तो कुछ और नडलियाँ बुद्ध की जातक कथाओ का प्रदर्शन करती पुतली खेलो का कही प्रदर्शन होता था, तो कही पर नाटको का प्रदर्शन होता था ।

व्यापारी-दल सभी प्रकार की वस्तुओ के विक्रय करा रहे थे । लोग विनोद के साथ पुण्य-सपादन करने की अभिलाषा से उन उत्सवो मे भाग लेते थे ।

साधारणत बोद्धो के उत्सव अत्यत मनोज्ञ होते हे । जनता के हृदयो को अवगत करने मे बौद्ध लोग निपुण होते हे । बौद्ध धर्मावलबियो मे चित्रकार शिल्पी, रगसाज, जुलाहे तथा अन्यान्य कारीगरो की सख्या अधिक थी । इसलिए उन समस्त कलाओ का प्रदर्शन इन्द्रविहार के उत्सवो मे आयोजित होता था । अत ये उत्सव देखते ही बनते थे ।

आज रात्रि को कठोत्सव का प्रदर्शन आयोजित था । शाक्य गौतम ने विरक्त हो घर से निकल जाने का निश्चय किया । उसी दिन यह समाचार मिला कि बुद्धदेव की प्रियपत्नी यशोधरा देवी ने प्रथम पुत्र को जन्म दिया हे । गौतम ने कहा---एक और राहुल--बेडी या जजीर-पैदा हो गया है । उसी रात को गौतम यशोधरादेवी, राहुल, पिता शुद्धोधन, राज्य, सुख-भोग सब को त्याग कर जगत के उद्धार के हेतु चल पडे । उसके सारथी चेन्न अकेले ने ही थोडी दूर तक उनका अनुगमन किया ।

गौतम के लिए अत्यत प्रेमपात्र अश्व कठक था । उसी कठक पर सवार हो गौतम कपिलवस्तु को छोड गये थे । बडी दूर जाने पर गौतम के मन मे अपने प्रियजनो के निद्रामग्न कपिलवस्तु को एक बार देखने की इच्छा पैदा हुई । तुरन गौतम ने कठक को पीछे की ओर मोड दिया और

दूर पर शोभायमान कपिलवस्तु को जी भरकर देखा। इसी को कथावस्तु बना कर बौद्ध लेखकों ने 'कठक निवर्तन' नाम से काव्य लिखे गीत रचे और चित्रों का अंकन किया।

कठोत्सव में यांत्रिक घोड़ा काम में लाया जाता है। इन्द्रविहार में जिस घोड़े का जुलूस निकाला जाता है, वह अत्यंत [illegible] होता है। उस अश्व के चरणों को उठाये चार यक्षों की मूर्तियां [illegible]। बौद्ध-कथाओं में वर्णित है कि गौतम के नगर-निष्क्रमण के समय अश्व की टापुओं की ध्वनि से जनता जागृत न हो। इसलिए चार यक्षों ने कठक के चरणों को अपनी हथेलियों में धारण किया था।

इन्द्रविहार से एक कोस की दूरी तक उत्तरी दिशा में इन्द्रावती नदी के तट पर निर्मित राज पथ पर उस वाहन का जुलूस निकाला जाता है। उस अश्व पर बुद्ध की उत्सव-मूर्ति तथा पार्श्व में चेन्न की मूर्ति भी है। उस समय जन समूह पृथ्वी पर तथा नदी पर नौकाओं में सवार हो कोलाहल करते जुलूस का अनुसरण करता है। लक्ष्य तक पहुँचने के पश्चात एक साथ यंत्र-नियंत्रित हो वह अश्व-मूर्ति वापस लौटती है।

उस समय कोलाहल से आकाश गूँज उठता है। भक्त वृन्द आवेश में आकर गीत गाते हैं, स्तोत्र करते हैं। कुछ लोगों के नयनों से आंसू की धारा बह पड़ती है। वे ऐसा अनुभव करते हैं कि उनके नेत्रों के सामने गौतम सचमुच नगर को त्याग चले जा रहे हैं। उस वक्त सभी वाद्य एक साथ बज उठते हैं। असंख्य नारियल फोड़े जाते हैं। सुगंध द्रव्य बिखेर दिये जाते हैं। जयघोष करते लोग उछलने लगे। जनता का विश्वास है कि कठक निवर्तनोत्सव देखने अथवा उस कथा का भक्तिपूर्वक श्रवण करने से पुनर्जन्म के बंधन से मुक्ति मिलेगी। राजाओं के लिए पराजय न होगी।

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी कठक निवर्तनोत्सव संपन्न हुआ। उस उत्सव को देख कुछ लोग भक्ति के आवेश में आ गये। तो कुछ अन्य लोग मदिरा के अति सेवन से होश खो बैठे।

अमरकोटच के आसपास से जो नौकाएँ आयी, वे भी उत्सव के पीछे चलीं। उत्सव के समय जो कोलाहल हो रहा था, उस समय न मालूम क्यों, वे नौकाए रुकी नहीं, वल्कि आगे बढ चली। पर किसी का ध्यान उस ओर न गया।

43

वेगी सेनाएं चक्रकोट्य के दुर्ग को घेरे हुये थी। तीसरे दिन चक्रकोट्य के सभी दण्डनाथो ने एक गुप्त सभा बुलायी। उसमे राजकुमारी विद्युन्ला-सिनि ने भी भाग लिया।

राजकुमारी ने सलाह दी कि दुर्ग के बाहर जाकर शत्रु का सामना करना उचित होगा। पर वृद्ध दण्डनाथ एव अमात्यो ने समझाया कि जल्द-बाजी मे आकर ऐसा काम नही कर बैठना है। आक्रमण के पूर्व हमे शत्रु की शक्ति का भलीभाति अदाज लगाकर ही आगे बढना है। गुप्तचरो द्वारा हमे शत्रु के जो रहस्य प्राप्त हुये है, उनकी समीक्षा हो रही है।

इसी समय यह समाचार मिला कि शत्रु सैनिक विविध प्रकार के मशाल तैयार करा रहे हैं। चक्रकोट्य के सेनापतियो की समझ मे न आया कि मशालो की तैयारियो के पीछे उनका उद्देश्य क्या है। क्या भागने की यह तैयारी है ? अथवा तोपो से अग्निवर्षा करने की योजना है ?

चक्रकोट्य के सेनापतियो ने भी नये किस्म के तोपो के निर्माण पर विचार किया। पर तोपो की तैयारी करने वालो ने बताया कि उनके निर्माण मे कम से कम दो-चार दिन लगेगे।

"भागने वालो के लिए न हो तो इतने सारे मशालो की क्या आवश्य-कता है ! एक एक पहर मे दो पत्थर फेकने वाले शतघ्नियो से वे कितने

मशाल हमारे दुर्ग पर फेंक सकते है ? मान भी ले कि वे मशाल फेंकते है। तब भी क्या उनकी आग मार्ग मध्य मे न बुझेगी ।"

विन्ध्यवासिनी ने कहा ।

"राजकुमारी का कथन समुचित है। यह प्रयत्न शतघ्नियो के प्रयोग के लिए न होगा ! किंतु हमे उनके उद्देश्य का निश्चित पता लगाकर व्यवहार करना होगा ।" वृद्ध अमात्य ने सलाह दी ।

गुप्त सभा मे मंत्रणा चलती ही रही कि दुर्ग के पश्चिमी भाग से भयंकर विस्फोट की ध्वनि सुनाई दी । लगा कि पृथ्वी काप रही है ।

धारावर्ष ने पहरेदार को बुला कर उस ध्वनि का कारण पूछा । पहरेदार ने बताया कि इंद्रविहाण के कठकोत्सव मे आयी नौकाएँ आतिश-बाजियाँ छोडते आगे बढती जा रही है ।

"युद्ध के समय नौकाओ का दुर्ग के प्राचीरो के समीप से जाना निषिद्ध है । इसलिए तुम उन नौकाओ को रोक दो और नाविको को बन्दी बनाने के लिए दण्डनाथ से कहो ।" धारा वर्ष ने कहा ।

दण्डनाथ जब घटनास्थल पर पहुँचा तो देखता क्या है, पहरेदार सैनिक उन नाविको पर बाणो की वर्षा करते उन्हे रोकने का प्रयत्न कर रहे है । कुछ सैनिक गुप्त मार्गो से नदी मे प्रवेश करके नौकाओ को आगे बढने से रोकने का प्रयास कर रहे थे ।

नौकाओ पर वेगी राज्य के सैनिक दुर्ग के निकट पहुँचने के प्रयत्न कर रहे थे ।

उधर स्कधावार नीरव एव निद्रामग्न प्रतीत हो रहा था । ज्योत्स्ना की काति मे स्कधावार की निस्तब्धता का पता चल रहा था । पर स्कधा-वार के पीछे सैनिको की टुकडियाँ पश्चिम एव उत्तर की ओर इन्द्रावती नदी के तट की ओर शीघ्र गति से फैलती जा रही थी ।

दुर्ग के भीतर गुप्त मंत्रणा चालू थी। समय बीतता जा रहा था, किंतु दण्डनाथ नाविकों को बन्दी बना कर अभी तक लौटे न थे। इसी समय अकस्मात दुर्ग के पूर्वी द्वार पर भयंकर कोलाहल सुनाई पड़ा। लगा कि सायकाल जिन वेगी सैनिकों का उत्साह मन्द पड़ गया था, उनका उत्साह निशाचरों की भांति इस रात्रि में दुगुना बढ़ गया है। एक ही साथ असंख्य हाथी पूर्वी दरवाजे में जा टकराये। उस धक्के से सारा दुर्ग गूंज उठा। इस बार वेगी हाथी ही दुर्ग को भेदने में लगाये गये थे।

चक्रकोटय के उत्तर तथा पश्चिमी प्राकार दुर्भेद्य थे। साथ ही वे प्राकार अधिक ऊँचे एव बलिष्ठ भी थे। उससे सट कर खंदक की भांति इन्द्रावती नदी बह रही थी। अगर कोई हिम्मत करके उस दिशा में दुर्ग के प्राचीरों को लाघने का प्रयास करे तो भी उनको समाप्त करने के लिए पर्याप्त सैनिक वहाँ पर तैनात थे।

इन कारणों से दुर्ग-रक्षकों ने अपनी दृष्टि पूर्वी द्वार पर ही केन्द्रित की थी। वही पर अधिक सैनिक एव दण्डनाथ जा पहुँचे। राजकुमारी विद्यवासिनी भी अपने पिता का आदेश पा कर वही पहुँची। राजकुमारी को देखते ही दुर्ग-रक्षकों की हिम्मत बढ गयी। राजकुमारी के प्रयत्नो के सामने वेगी वीरों के प्रयत्न फीके प्रतीत हुए।

पर इसी समय दुर्ग के पश्चिमी प्राकार समीप कोलाहल की ध्वनि तीव्र हो गयी। दुर्ग-रक्षक भय-विह्वल हो चिल्लाने लगे। रक्षा के निमित्त और टुकडियो की माँग करते सकेत एव समाचार भी आने लगे।

पश्चिमी प्राकार पर वेगी सैनिक निरतर इस प्रकार आने लगे मानो सीढियो पर चढकर आ रहे हो, अथवा पुल पर से आते हो। अनेक स्थलो पर सायुध सैनिक दुर्ग के प्राचीर को लाघने लगे। चक्रकोटय का दण्डनाथ इन्ही सैनिकों के हाथो मे मारा गया था।

चालुक्य सैनिक चतुर्दिक इस प्रकार फैलने लगे, मानो बाध टूटने पर नदी की धारा बढती है, अथवा जैसे दावानल हवा के सयोग से चारों तरफ

फैल जाती है। दुर्ग रक्षक उस सेना वाहिनी को रोकने मे असमर्थ रह गये।

दुर्ग के भीतर शत्रु सैनिको के प्रवेश का समाचार मिलते ही चक्र-कोटच के दण्डनाथो की आशाओ पर पानी फिर गया। मत्रणा सभा से दुर्ग-रक्षा के हेतु एक-एक करके अनेक दण्डनाथ बाहर आये। पर उनमे से एक भी प्राणो के साथ वापस न लौटा। कुछ लोग वीर-स्वर्ग को प्राप्त हुए तो बाकी सेनापति बदी हुए।

वृद्ध अमात्य ने स्थिति की गभीरता का परिचय कराते धारावर्ष महाराज से कहा——

"राजन, दुर्ग को घेरने वालो मे न केवल वेगी दण्डनाथ और सैनिक है, बल्कि उनमे चोळ दण्डनाथ भी है। वे साक्षात राक्षस है। ऐसे लोगो के हाथो से प्राणो की रक्षा करना कठिन है।"

"तो अमात्यवर, हमे क्या करना होगा?" महाराज धारावर्ष ने पूछा।

"महाराज, महारानी गुडमहादेवी इस वक्त गर्भवती है। उनको शत्रु के हाथो मे पड़ने से बचाने के लिए गुप्त मार्ग से वरशूरपट्टण मे पहुँचाना होगा। वरना उनके गर्भस्थित शिशु की रक्षा करना सभव नही। साथ ही मेरा यह भी अनुरोध है कि आप तथा राजकुमारी भी प्राण-रक्षा करे।"

"महामात्य, आप सबको खतरे मे डाल मैं कभी अपने प्राणो की रक्षा का प्रयत्न नही करूँगा।" धारावर्ष ने दृढ स्वर मे कहा।

इसके उपरात वृद्धामात्य ने रण-क्षेत्र से राजकुमारी को बुलवाकर सारा हाल सुनाया। तब महाराज धारावर्ष ने राजकुमारी से कहा——"बेटी तुम भी अपनी माँ का अनुगमन करो।"

विंध्यवासिनी का चेहरा रोष से लाल हो उठा। पर विनयपूर्ण स्वर मे बोली——

"पिताजी, मुझे क्षमा कीजिए। मैं आपको छोड़ नही जा सकती, परन्तु आपकी आज्ञा का उल्लघन भी नही कर सकती।"

"राजकुमारी! महाराज के शासन इससे अधिक स्पष्ट भाषा मे नही हो सकते।" अमात्य ने कहा।

"महामात्यवर, आपको प्रणाम करती हूँ। आपका कथन सर्वथा सत्य है। परन्तु ये मेरे महाराजा ही नहीं अपितु पितृदेव भी हे। इसीलिए मैं थोडी स्वतत्रता लेकर पुन अभ्यर्थना करती हूँ। जब तक वे स्पष्ट रूप से आदेश न देगे तब तक मैं उनका साथ छोड़ नहीं जा सकती।" फिर महाराजा की तरफ मुखातिब हो राजकुमारी ने कहा—

"महाराज! आप मुझे अपने सान्निध्य से दूर जाने का आदेश देंगे?"

विद्यवासिनी की बाते सुनने पर महाराज धारावर्ष ने पल भर सोचा, तब कहा—"महामात्य, आप शीघ्र महारानी जी को उचित परिवार के साथ गुप्त मार्ग से वरशूरपट्टण मे पहुचा दीजिए।"

इतने मे दूतो से समाचार मिला कि पूर्वी द्वार खुलता जा रहा है। फिर भी चक्रकोटय के सैनिक शत्रु सेना को भीतर घुस आने से रोकने का अथक प्रयत्न कर रहे है यह समाचार मिलते ही महाराज धारावर्ष राजकुमारी के साथ घटना-स्थल पर पहुँचा।

वेषी सैनिको के मशाल दुर्ग के प्राचीरो तथा भीतर भी क्षण-पर-क्षण अपनी रोशनी को फैलाये चारो तरफ सर्वत्र दिखाई दे रहे है। लगता था कि शत्रु सैनिक दुर्ग के प्रत्येक भाग से परिचित हो गये हे। उस वक्त चक्रकोटय दुर्ग प्रज्वलित एक महापर्वत की भाति प्रतीत हो रहा था।

इसी समय महामात्य तथा कुछ अन्य दण्डनाथ धारावर्ष की रक्षा के हेतु उनके निकट पहुँचे।

हालत को नाजुक देख धारावर्ष ने महामात्य की सलाह मागी।

वृद्ध महामात्य ने कहा—"महाराज, इस हालत मे व्यर्थ ही सैनिको का वध कराना समुचित नही लगता। हार स्वीकार करना ही श्रेयस्कर होगा।" ये शब्द कहते महामात्य के नेत्र सजल हो उठे।

अन्य दण्डनाथ तथा अमात्यो ने भी यही राय दी कि युवराज के साथ सधि के लिए दूत भेजना ही युक्ति सगत है।

विद्यवासिनी ने स्वय सधि का प्रस्ताव ले जाने की महाराजा से अनुमति माँगी।

कतिपय परिवार को साथ ले श्वेत ध्वज धरकर राजकुमारी विद्य-वासिनी युवराज के दर्शनार्थ स्कधावार की तरफ चल पडी।

इतने मे पूर्वी द्वार शत्रु के वश मे हो जाने का समाचार मिला

महाराज का आशीर्वाद ले राजकुमारी निर्भय आगे बढी। उभय सेनाओ के बीच जाने वाली राजकुमारी के हाथ श्वेत ध्वज को देख सब सैनिक दोनो तरफ हट गये।

44

चक्रकोटय की राजकुमारी सधि का प्रस्ताव लिए जब राजेन्द्रदेव के स्कधावर के समीप पहुँची, तब युवराज पटकुटी के बाहर ही रह कर सैनिकों की गतियों की जाँच करते उन्हे उचित आदेश दे रहा था। युवराज का पटकुटीर इतनी ऊँची जगह था, जहाँ से सारा युद्ध-क्षेत्र स्पष्ट दिखाई देता था। राजदूत के आने का समाचार मिलते ही युवराज ने प्रवेश करने की आज्ञा दी।

राजकुमारी ने वीर पुरुष के वेष मे निर्भीकता से प्रवेश कर राजेन्द्र देव तथा बगल मे बैठे नारायण भट्ट को भी प्रणाम किया।

"शीघ्रमेव कल्याण प्राप्ति रस्तु ! दीर्घ सुमगली भव !" नारायण भट्ट ने आशीर्वाद दिया।

विंध्यवासिनी ने तीक्ष्ण दृष्टि से नारायण भट्ट की ओर देखा। पर नारायण भट्ट ने अलक्ष्य भाव से मदहास किया।

युवराज ने पल-भर सोच कर समझ लिया कि दूत के वेष में नारी उपस्थित है। इस पर उस युवती के प्रति युवराज के मन मे आदर का भाव उदित हुआ।

"चक्रकोटय के महाराजा धारावर्ष ने व्यर्थ ही होने वाले जन-सहार को रोकने के निमित्त सधि का प्रस्ताव भेजा है।" राजकुमारी ने सक्षेप मे अपने आगमन का कारण निवेदन किया।

"हमे भी जन-सहार अगीकार नही है ." युवराज ने कहा ।

"महाराजा धारावर्ष की एक ही अभ्यर्थना है कि आप उनके साथ ऐसा व्यवहार करें, जैसे एक राजा दूसरे राजा के साथ करता है। यह आप वादा करे ।"

युवराज की भृकुटी तन गयी ।

राजकुमारी यह सोच कर घबरा उठी कि उसके जरिये कोई अवज्ञा तो नही हुई ।

"विजेता कही वादा भी करता है ?"

नारायण भट्ट ने कहा ।

"अमात्यवर, क्या आप नही जानते कि पराजितो के गौरव की रक्षा करते हुए मृत्यु का स्वागत करने वाले मार्ग आप ही के हाथो होते हैं ।'' राजकुमारी ने पूछा ।

"बेटी, प्रस्ताव का यह उपदेश तुम्हे बडो ने समझा कर भेजा है ?"

राजपुत्री ने क्षण भर मोचा ।

"नोलबवाडी मे चोळ सैनिको ने देवालयो को ध्वस्त किया, ब्राह्मणो की हिसा की, कन्याओ को बन्दी बनाया, क्या आपने नही सुना ?
क्षमा कीजिएगा ! यह भी सुना है कि युवराज ने . ब्रह्म ." वाक्य पूरा नही कर पायी ।

"हाँ, हाँ ! तुमने सुना होगा कि युवराज ने ब्राह्मण-वध किया है । राजकुमारी ! युवराज ने इसी ब्राह्मण की हत्या की है ! और रही, नोलबवाडी की खबर !"

"हाँ, सुनाइये !"

"वहाँ के जैन ब्राह्मणो ने अपनी वसतियो मे अनेक सिपाहियो को कन्याओ के वेष मे आश्रय दिया । उन वसतियो तथा देवालयो से ही कर्नाटक सैनिको ने चोळ सेना के साथ युद्ध किया था ।"

"मेरे अज्ञान को क्षमा कीजिए।"

"फिर भी चोळ सैनिक सूर्यवंशी राजाओं के हैं। यहाँ पर चन्द्रवंशी वेंगी चालुक्य महाराजा के सैनिक हैं। वह शत्रुओं का प्रदेश था, यह तो सामंत का प्रदेश है।"

"कहावत भी है न, कभी गाड़ी नाव पर, और कभी नाव गाड़ी पर! इसी भांति वीर क्षत्रिय भले ही एक समय सामंत हों, पर वे कभी न कभी अवश्य स्वतंत्र होंगे। क्या ऐसे शासकों को युवराज अविरोचित नहीं मानेंगे?"

युवराज ने कठोरता के साथ मुँह मोड़ कर कहा——

"हम ब्राह्मण-वधिक नाम से मशहूर हो गये हैं। हमने शिक्षा का अभ्यास भी चोळ राजाओं के दरबारी पंडितों के यहाँ किया है। मैं स्पष्ट बताना चाहता हूँ कि हम कन्या का अपहरण करने के विचार से ही यहाँ आये हैं मेरे आप्त व्यक्ति चन्द्रादित्य दण्डनाथ वक्ष पर बाणाघात से घायल हो चिकित्सा पा रहा है। राजकुमारी को उसके साथ विवाह करना होगा।"

"राजकुमार, आपकी बातें मेरी समझ मे नहीं आ रही है।" राजकुमारी ने पूछा।

"युवराज का उद्देश्य है कि तुम्हारे पिता किसी प्रकार के वादे की अपेक्षा किये बिना पहले युवराज के अधीन हो जाएँ।"

"मेरे पितृदेव बेशर्त अधीन होने को तैयार है! परतु कन्याहरण तथा दण्डनाथ से राजकुमारी का विवाह——ये बाते मेरी समझ मे नही आ रही है।"

"ओह, यह बात समझ मे नही आयी! तुम्हे चन्द्रादित्य दण्डनाथ के साथ विवाह करना होगा।" नारायण भट्ट ने उत्तर दिया।

विन्ध्यवासिनी ने कहा—"मेरे पितृदेव हृदय पूर्वक आपके अधीन होने को सहमत होगे। किंतु मुझे उस दण्डनाथ के साथ सौंपने की उन्हे पूर्ण स्वतत्रता नही है।"

"मेरे युवराज का विचार है कि तुम पिता के आदेश का पालन करना अपना परम धर्म समझोगी! क्या यह उनकी भूल थी?" नारायण भट्ट ने पूछा।

"भूल तो नही कहूँगी, पर इस विषय मे मेरे पिताजी मेरी प्रतिज्ञा के पालन मे बाधा नही डालेंगे।"

"क्या मै वह प्रतिज्ञा सुन सकता हूँ?"

"समान कुल-शील सपन्न व्यक्तियो मे से जो मुझे खड्ग युद्ध मे पराजित करेगा, उसी के साथ मेरा विवाह होगा।"

युवराज ने कठोर स्वर मे कहा—"यह हमे भी स्वीकार है। तुम पहले दुर्ग मे जाकर दुर्ग रक्षको से आयुध त्यागने को कह दो, तो हम भी युद्ध बद करने का आदेश देंगे, किंतु याद रखो कि हम इस के पूर्व किसी भी प्रकार का वादा नही कर रहे है।'

"जो आज्ञा!" कहते विन्ध्यवासिनी युवराज से अनुमति लेकर दुर्ग के भीतर चली गयी।

सवेरा होने को था!

प्रात काल का मलयानिल बह रहा था।

इसके थोडी देर बाद ही दुर्ग-रक्षको ने आयुधो का विसर्जन किया।

वेंगी के युवराज के आदेशानुसार आन्ध्र के वीरो ने युद्ध बद कर दुर्ग पर अधिकार कर लिया।

सूर्योदय के होते-होते सभी क्षेत्रो मे युद्ध बद हो गया।

वेंगी चालुक्यो का वराह ध्वज दुर्ग पर फहराने लगा!

वास्तव मे युद्ध के प्रथम और द्वितीय दिन मे करुणाकर नोडमान तथा जयगोंडार घायल न हुये थे। रात के समय युद्ध की तैयारियाँ करने के हेतु उनके घायल होने की अफवाह फैलायी गयी थी।

ये दोनो दुर्ग को अधीन करने के कार्य मे सजग थे।

सूर्योदय के होते होते मधुभाड अधिक सख्या मे मगाये गये। करुणाकर नोडमान ने वहाँ पहुँच कर सारा मधु उडेलवा दिया। क्योंकि युद्ध विराम के बाद मधुपान निषिद्ध था।

वेगी के सैनिको ने दुर्ग के आयुध तथा राजकोष पर अधिकार कर लिया। अत पुर को घेर कर उस के अन्तर्भाग पर अधिकार कर लिया और अत पुर की मर्यादा की रक्षा के हेतु उचित पहरा बिठाया गया।

जनता के धन, प्राण की रक्षा की गयी।

धारावर्ष के दण्डनाथो को वेगी के दण्डनाथ व सैनिकों ने निरायुध बनाया किंतु महाराजा धारावर्ष तथा राजकुमारी विंध्यवासिनी को निरायुध नही बनाया। उन्हे सूचित किया गया कि मध्याह्न के समय युवराज उन्हे दर्शन देने वाले है।

मध्याह्न के पूर्व ही युवराज धारावर्ष अमूल्य रत्न, धन, वस्तु, वाहनो को अपने परिवार के साथ ले युवराज के दर्शन के निमित्त विन्ध्यवासिनी समेत निकल पडा।

45

मध्याह्न के समय युवराज राजेन्द्रदेव पराजित राजा धारावर्ष को दर्शन देने के निमित्त दरबार लगाये बैठा था। अमात्य, दण्डनाथ आदि परिवार युवराज को परिवेष्टित किये हुये था। व्याघ्रचर्म बिछाये उन्नत आसन पर राजेन्द्रदेव आसीन था। युवराज चिह्न वज्रस्थगित कठिका उस के कंठ में लटकती उसकी मनोज्ञदेहकांति को दुगुनी बनाये हुये थी। दो यवननारियाँ चवर डुला रही थी। एक रोमक सेवक श्वेत पत्र को धारण किये खडा था।

युवराज के दक्षिण पार्श्व में एक उच्च आसन पर नारायण भट्ट उपविष्ट था। वामभाग में चन्द्रादित्य दण्डनाथ उचित आसन पर बैठा था। उसके वक्षस्थल पर पट्टी बधी हुई थी जो उसकी वीरता का प्रदर्शन कर रही थी। करुणाकर तोंडमान, जयगोंडार तथा अन्य अनेक दण्डनाथ यथास्थान बैठे हुये थे।

बन्दी जनों ने नारायण भट्ट द्वारा विरचित भ्रमरकोट्य तथा चक्रकोट्य के विजय वृत्तांत का गान किया।

दौवारिक ने सूचना दी कि चक्रकोट्य का मण्डलाधिपति धारावर्ष अपनी पुत्री तथा असंख्य उपहारों के साथ उपस्थित है।

युवराज के आदेश पर दौवारिक ने धारावर्ष तथा राजकुमारी को प्रवेश कराया। राजकुमारी पुरुष वेष धारण किये हुये थी।

धारावर्ष ने म्यान से अपना रत्नखचित खड्ग निकाल कर युवराज के चरणो पर रखा । तदनतर सर पर से किरीट निकाल कर उसे भी खड्ग के निकट रखकर युवराज को समर्पित किया । फिर झुक कर इस प्रकार प्रणाम किया जिससे उसका सर युवराज के चरण-पीठ का स्पर्श कर सके ।

उस वक्त जयभेरियां गूंज उठीं । घटानाद हुये । अश्वो की हिनहिनाहट तथा हाथियो के चिघाडो से चारो दिशाएं प्रतिध्वनित हो उठी । सभासदो ने जयनाद किये ।

तदनतर राजकुमारी विंध्यवासिनी ने भी अपना खड्ग युवराज के पाद-पीठ पर रख कर उसके चरणो की वदना की ।

इस के उपरात धारावर्ष ने अपने उपहार युवराज को समर्पित करते हुये कहा—

"युवराज, आपके हाथो मे विजित होना भी मै अपने लिए भाग्य की बात मानता हूँ । मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं भविष्य मे आपकी आज्ञा का पालन करता रहूँगा ।"

तुरत नारायण भट्ट का सकेत पाकर एक परिचारक ने धारावर्ष का खड्ग युवराज के पाद-पीठ से निकाल कर युवराज के हाथ मे समर्पित किया । धारावर्ष ने युवराज के समक्ष घुटने टेक दिये । युवराज ने वह खड्ग पुन धारावर्ष को प्रदान किया । धारावर्ष ने उसे आँखो से लगा कर पुन वही प्रतिज्ञा की । तदुपरात राजकुमारी ने भी युवराज से खड्ग पाकर अपनी प्रतिज्ञा दुहरायी ।

युवराज ने उन दोनो को उचित आसनो पर बिठाया, पर धारावर्ष का किरीट युवराज के पाद-पीठ के पास ही रह गया ।

सभा मे थोडी देर मौन छाया रहा नारायण भट्ट ने गभीर स्वर मे धारावर्ष को सबोधित कर कहा—

'आप की पुत्री की गुण-सपदा पर हम अत्यत आनदित है। हम सब का अभिमत है कि उसका विवाह चन्द्रादित्य दण्डनाथ के साथ हो। महामात्य वज्जिय प्रेग्गडा की भी यही कामना है। चन्द्रादित्य अपने वश, रूप तथा गुणो को लेकर सर्वथा आपके जामाता बनने योग्य है।"

धारावर्ष ने मौन धारण किया।

"हमारे अत्यत प्रियपात्र चन्द्रादित्य का विवाहोत्सव सबके समक्ष हमारे इस विजयोत्सव के साथ सपन्न होना शुभप्रद है।' युवराज ने कहा।

"ब्राह्मणोत्तम के अभीष्ट की पूर्ति करने तथा युवराज के आदेश का पालन करने से हमारे लिए आनद दायक दूसरा कोई विषय नही हो सकता। मैं धन्य हो गया हूं। किंतु यह बात मेरे हाथो मे नही है। सतान न पाकर जब मैं बिलकुल निराश हो चुका था, तब हमारे कुलदेवी की कृपा से इस कन्या का जन्म हुआ है। मैने इसीको पुत्र मानकर समस्त प्रकार की युद्ध-विद्याओ का अभ्यास कराया है। युक्तवयस्का होने पर भी इसने विवाह करने से इनकार किया। जब मैं इस बात की चिता करने लगा कि दौहित्र के अभाव मे मैं इस राज्य को किसे सौप दू, तब उसने इस शर्त के साथ विवाह करने की स्वीकृति दी कि जो कुलीन वीर उसे खड्ग विद्या मे पराजित करेगा, उसके साथ वह विवाह करेगी। मैने भी इसके लिए स्वीकृति दी। इसके पश्चात इस निर्णय का पालन करने की हमने घोर शपथ ली। मैं युवराज तथा अमात्य से अभ्यर्थना करता हूँ कि हमारी शपथ का आदर करे।"

धारावर्ष के मुह से ये शब्द सुनने पर राजकुमारी का चेहरा लाल हो उठा। चन्द्रादित्य का भी मुखमण्डल लाल हुआ। युवराज ने भी उन दोनो के चेहरे देख भाप लिया। नारायण भट्ट मदहास करते हुये बोला—

"हमारे वेगी वीर पुरुषो के साथ युद्ध करने मे कभी पीछा नही हटते, पर वे स्त्रियो के साथ युद्ध करने की हिम्मत नहीं रखते। क्योकि वे नारियो

के गुलाम है। चन्द्रादित्य दण्डनाथ के हृदय पर राजकुमारी का बाण ही घुस गया है। देखा है न ?"

ये शब्द कहते नारायण भट्ट ने एक भट के द्वारा वह बाण मगा कर सभा के समक्ष सब को दिखाया। उस बाण को देखते ही भारावर्ष का चेहरा खिल उठा।

नारायण भट्ट ने पुन कहा--

"हमारे दण्डनाथ की बात क्या कहूँ ? उस बाण को सुरक्षित रख कर उसकी पूजा करते हुये उस घाव को भी अपने लिए भाग्य की बात समझ बैठा है।"

ये शब्द सुनने पर राजकुमारी की देह मे नारीत्व जागृत हो गया ! चन्द्रादित्य को अवलोकित करने उसने अपना चेहरा उठाया। चन्द्रादित्य उसी की ओर देख रहा था। दोनो की दृष्टिया मिल गयी। पल भर के लिए छटपटायी।

दूसरे ही क्षण राजकुमारी ने सर झुकाया। वह आगे चन्द्रादित्य को देख नही पायी। चन्द्रादित्य की दृष्टि ने उसे पराजित किया।

चन्द्रादित्य दण्डनाथ उठ खडा हुआ। सारी सभा ने उसकी ओर व्यग्रता के साथ देखा। उसने युवराज को प्रणाम कर गभीर स्वर मे कहा--"मैं राजकुमारी के साथ तुरत खड्ग युद्ध करने को तैयार हूँ।"

पिछले दिन ही चन्द्रादित्य राजकुमारी के बाण से घायल हो गया था। अलावा इसके खड्ग विद्या प्रवीण विन्ध्यवासिनी के साथ तत्काल द्वन्द्व युद्ध करना खतरे से खाली न था। युवराज को यह कतई पसद न था कि इस प्रसन्नता की वेला मे उस का प्रधान दण्डनाथ खतरे का शिकार हो ! इसलिए उसने नारायण भट्ट की ओर असम्मति सूचक दृष्टि प्रसारित की।

"युवराज, युद्ध भिक्षा मागने वाली राजकुमारी को दान देने के लिए हमारे दण्डनाथ तैयार है, अत इसमे विघ्न उपस्थित करना न्याय सगत प्रतीत नही होता। इसलिए केवल क्रीडोपयोगी खड्गो से द्वन्द्व युद्ध करने की अनुमति देना समीचीन होगा।"

नारायण भट्ट के सुझाव को सबने स्वीकार किया। युवराज ने अपने मन की व्याकुलता को दबाते हुये मदहास पूर्वक अनुमति दे दी।

तत्काल द्वन्द्व युद्ध के लिए क्षेत्र, आयुध, तथा अन्य उपकरण तैयार किये गये। युवराज ने नारायण भट्ट को निर्णायक नियुक्त किया। धारावर्ष ने इसे प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार किया। उसकी भी कामना थी कि चन्द्रादित्य दण्डनाथ ही विजयी हो!

रग-मच, खड्ग आदि की परीक्षा स्वय नारायण भट्ट ने ही की। चन्द्रादित्य तथा विन्ध्यवासिनी उभय पक्षो मे तैयार हो गये। दोनो व्यक्तियो ने खड्गो को प्रणाम किये। सभासदो की उत्सुकता द्विगुणीकृत हो उठी।

वेगी वीर तथा चक्रकोट्य वीर वनिता के बीच जो मगलमय युद्ध होने वाला था, उस की पुरोहिताई नारायण भट्ट ने की। दोनो युद्ध के प्रारभ करने की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे।

नारायण भट्ट ने दोनो के मध्यभाग मे प्रवेश करके कहा- 'ठहर जाइये

"चन्द्रादित्य के वक्षस्थल पर व्रणबध है। यह सत्य है अथवा नही, निर्णायक को इसकी जाँच करनी है। क्या पता कि किसी आयुध को गुप्त रूप से उसमे छिपा रखे हो!" नारायण भट्ट ने पुन कहा।

नारायण भट्ट ने चन्द्रादित्य की पट्टी खोलने का आदेश दिया। युवराज का सकेत पाकर राजवैद्य ने उस व्रणबध को खोलकर घाव पर लगे इस को दिखाया।

चन्द्रादित्य मन्दहास करते निश्च[illegible] [illegible] हुआ था ।

नारायण भट्ट ने सभा-सम्मुख उ[illegible] न[illegible] [illegible] व[illegible] [illegible]दिया ।

दोनों को तैयार हो जाने का [illegible]रा [illegible]के नारायण भट्ट [illegible] [illegible] आ खड़ा हुआ । तदनन्तर युद्ध की आज्ञा दे दी ।

सभासद युद्ध देखने व्यग्र हो उठे ।

दोनों ने धीर भाव से रंग-मंच के म[illegible] भाग में प्रवेश कर खड्ग मिलाये ।

ये दोनों खड्ग परस्पर अनुरागपूर्वक मिलने वाले दो महा नागों का स्मरण दिला रहे थे । । बस, उनकी दृष्टि तथा रूपों ने एक दूसरे को पराजित कर दिया ।

तीन बार अप्रयत्न ही खड्ग भ्रमण समाप्त हुये ।

दर्शकों के मन में संदेह होने लगा कि ये दोनों क्या खड्ग विद्या के अभ्यस्त तो नहीं ! यह युद्ध दोनों के लिए उत्साहप्रद भी न था ।

अकस्मात् विन्ध्यवासिनी के हाथ से निकल कर खड्ग दूर जा गिरा ।

चन्द्रादित्य के खड्गाग्र का सिंदूर राजकुमारी के फाल भाग पर अंकित हो गया ।

नारायण भट्ट ने चन्द्रादित्य के विजयी होने की घोषणा की और युद्ध रोकने का आदेश भी दिया ।

चन्द्रादित्य के विजय समाचार सुनते ही अतिशय आवेश [illegible] कारण उसके वक्षस्थल पर के घाव से खून की धारा बह चली और वह बेहोश हो गया ।

राजवैद्यों ने तत्काल रक्त-प्रवाह को रोका और दो घड़ियों के अन्दर उसे होश में लाये । तब तक विन्ध्यवासिनी अश्रु बहाते बैठी हुई थी ।

दूसरे ही दिन उनके विवाह के लिए शुभमुहूर्त का निर्णय किया गया। वीरवैभव के साथ विन्ध्यवासिनी तथा चन्द्रादित्य का विवाह सपन्न हुआ। इस प्रकार सिह चिह्न वाले करिकाल चोळ वशज तथा काश्यप गोत्री चन्द्रादित्य तथा नाग-व्याघ्र चिह्न वाले भगवती पुराधीश्वर सैंधव की राजकुमारी विन्ध्यवासिनी का दापत्य प्रारभ हुआ।

धारावर्ष ने राजराजनरेन्द्र को दस गुने कर चुकाया और सारा युद्ध व्यय वहन करने की स्वीकृति दी।

इस पर पुन उसे महाराज की उपाधि तथा पूर्वार्पित किरीट राजेन्द्र-देव ने उसे लौटाया।

युवराज ने नारायण भट्ट तथा चोळ मित्रो से परामर्श करके चन्द्रा-दित्य को चक्रकोट्य मण्डल मे वेगी राज्य की ओर से कुछ विशेष अधिकारो सहित कतिपय सेना के साथ रक्षक सामत के रूप मे वरशूरपट्टण को राजधानी बनाये रहने की नियुक्ति की।

इसी समय समाचार मिला कि धारावर्ष के सामत वायिरा नगराध्यक्ष ने उत्तर कोसलो के साथ मिल कर स्वतत्रता की घोषणा की है। वायिरा नगर हीरे व हाथियो के लिए प्रख्यात है। युवराज ने वायिरा नगर पर अधिकार करके हीरे प्राप्त कर समीप के जगलो मे हाथियो का शिकार करने का उत्साह दिखाया। इसलिए धारावर्ष की सेनाओ के साथ अपनी सेनाओ को भी मिलाने का अगीकार किया। वायिरा नगर के लिए यात्रा की तैयारियाँ करने का दण्डनाथो को आदेश दिया। युवराज कतिपय सेना के साथ नारायण भट्ट समेत अपने पिता के दर्शन करने की अभिलाषा से राजमहेन्द्रपुर के लिए चल पडा।

46

राज राजनरेन्द्र का माला राजाधिराज इस समय चोळ सम्राट था। गद्दी पर बैठते ही उसे अपने पिता गगैंकोडा राजेन्द्र चोळ के साम्राज्य की रक्षा के हेतु अनेक युद्ध करने पडे। पर अकसर उसे विजय ही प्राप्त होते रहे।

सिहल मे किट्टि नामक बुद्ध महावश राजकुमार चोळ दण्डनाथो का सामना करके दक्षिण मे रोहण नामक पर्वतभाग पर शासन करने लगा। पूर्वी समुद्र मे स्थित टापुओ तथा पश्चिमी समुद्रवर्ती सादिमत्तीव ने भी क्रमश कर भेजना बद किया। उनको दण्ड देने मे कुतल चालुक्य रोडा बने हुए थे। अत कुतल चालुक्यो के साथ बराबर युद्ध होते रहे। इस वजह से वह प्रयत्न सभव नही हो पाता था।

कुतल चालुक्यो के साथ राजाधिराज ने अनेक युद्ध किये। उन दोनों राज्यो के बीच प्रधानत विवाद का कारण कृष्णा तथा तुगभद्रा का मध्य प्रदेश था। इन युद्धो मे अधिकाश भाग राजाधिराज ने ही जीते। पर कभी-कभी वह पराजित भी होता था। चोळ सम्राट कुतल चालुक्यो को कृष्णा तट तक भगा देता, तो मौका पाकर कुतल चालुक्य तुँगभद्रा तक के प्रदेश को अपने अधिकार मे ले लेते थे।

आज से चार वर्ष पूर्व राजाधिराज ने अपार सेना के साथ कुतल चालुक्यो पर आक्रमण किया। आहवमल्ल को पराजितकर उसकी राजधानी कल्याण कटक पर अधिकार कर लिया।

चोळ सेना को कुतल राज्य के मध्य देश मे घुसते देख मौका पाकर पीछे से जैनाचार्यो ने कुतल सम्राट के सैनिको की गुप्त रूप से सहायता की। उन्हे अपने देवालयो तथा वसतियो मे आश्रय दिया। उनमे से कुछ सैनिको ने नारियो का वेप धारण किया। इस प्रकार जैन मदिर, वसतियाँ तथा ग्राम भी कुतल सैनिको के केन्द्र बन गये। अत चोळ सैनिको को पीछे से सेना की सहायता, आयुध तथा रसद का आना दुष्कर हो गया। राजाधिराज चोळ ने निश्चय किया कि यह क्रम आगे भी जारी रहा तो उसे खतरे का सामना करना पडेगा।

राजाधिराज क्रोध से पागल हो उठा। उसने तुरन्त नोलबवाडी, बेलवोल इत्यादि जैन मण्डलो के समस्त जैनालयो तथा वसतियो को ध्वस्त करने का आदेश दिया। चोळ सैनिको ने कुछ गाँवो को भी जला डाला। अनेक सैनिक नारी वेषधारी थे, अत वे भी मारे गये। इस चण्ड शासन के अमल होते ही चोळ सैनिक आत्म-नियत्रण को खो बैठे। वे सब गाँवो पर हमला करके आबाल वृद्ध तथा नारियो का भी निर्दयतापूर्वक वध करने लगे। युद्ध के सामान्य धर्म मिट्टी मे मिल गये।

इसके पश्चात् राजाधिराज तथा उसकी सेना सुरक्षित चोळ राजधानी मे पहुँच गये। किंतु उस आक्रमण के समय चोळ सैनिको ने जो राक्षसी कृत्य किये, वे चोळ सम्राटो की कीर्ति मे शाश्वत रूप से कलक लगा गये। यही कारण है कि कुतल देश मे सर्वत्र राजाधिराज का नाम 'महापातक चोळ' के रूप मे प्रसिद्ध हो गया।

राजाधिराज ने काचीपुर पहुँचने पर 'आहवमल्ल कुलातक', कल्याणपुर गोड सोळ' इत्यादि उपाधियाँ धारण कर विजयोत्सव मनाये। फिर भी उसकी सेना ने जो असुर कृत्य किये थे, उनकी वजह से उसके अतरग मे वेदना प्रबल हो उठी।

राजाधिराज ने राजगुरु अधिकारगळ पाराशर्यन, वासुदेव नारायण नामक उळगळडशोळ ब्रह्मराय से प्रार्थना की कि उस महापाप की निवृत्ति

का उपदेश दे । राजगुरु ने परिषद बुलाकर अभिप्राय माँगा । उस परिषद मे सहस्राधिक वेद-वेदागविद तथा सोमपायी भी आये । उनके समक्ष राजाधिराज ने सारी स्थिति रख दी । परिषद के सदस्यो ने उस पर गंभीरता-पूर्वक विचार किया । आवश्यक प्रश्नो का उत्तर प्राप्त किया । अन्त मे एकमत से यह आदेश दिया कि अश्वमेध याग करना चाहिए ।

परिषद की आज्ञा पाकर राजाधिराज ने राजगुरु के नेतृत्व मे महा वैभव के साथ अश्वमेध याग किया । राजा की पट्टमहिषि लोकम्मम् उदयर् नक्रान्तियार तथा अन्य नारियों ने यज्ञायतन को अपूर्व शोभा प्रदान की । अपने भाई की अश्वमेध दीक्षा को देख राज राजनरेन्द्र की पट्टमहिषि अम्मगदेवी भी धन्य हो गयी ।

आज से दो वर्ष पूर्व मे ही पुन कुतल चालुक्य कृष्णा नदी को पार कर चोळ दण्डनाथो को तुगभद्रा तट तक धीरे-धीरे हटा देते थे । पूर्व युद्धो मे चोळ सैनिको ने जो राक्षसी कृत्य किये थे, वे उनके बल मे प्रतिबन्ध डालते थे ।

कुतल राजा आहवमल्ल सोमेश्वर ने एक बडी सेना समेत चामुण्डराय नामक दण्डनाथ को वेगी मण्डल की ओर भेजा, तदनतर एक ओर महा सेना के साथ कृष्णा नदी को पार कर डेरा डाला । इस प्रकार तुगभद्रा तट तक अपने राज्य को कायम करना चाहा । चामुण्डराय ने वेगी सीमावर्ती दुर्गो पर अचानक हमला करके चार दुर्गो पर अधिकार कर लिया और शेष दो दुर्गो को भी घेर कर उन पर अधिकार करने तैयार बैठा था ।

इसी समय कुतल राजा के स्कधावर को एक भयकर समाचार मिला कि चोळ सम्राट राजाधिराज एक महा सेना लेकर आ रहा है । उस सेना के दो विभाग करके एक को अपने छोटे भाई राजेन्द्र के नेतृत्व मे रख कर दूसरे भाग का नेतृत्व उसने स्वय वहन किया है तथा दोनो दो तरफ से कृष्णा—तुगभद्रा के मध्य प्रदेश मे पहुँच कर कुतल दण्डनाथो द्वारा कब्जा

किये गये प्रदेशो को पुन अपने वश मे करते तूफान की भाति आगे बढते आ रहे है ।

तुरन्त आहवमल्ल ने सभी प्रातो से अपनी सेनाओ को वापस बुलवाया । वेगी दुर्गो पर कब्जा किये चामुण्ड राय को भी उन्हे त्याग कर वापस लौटना पडा । इस प्रकार वज्जिय प्रेग्गडा की कल्पना के अनुरूप पश्चिमी सीमा की ओर अधिक सेना को भेजने की आवश्यकता न हुई ।

आहवमल्ल की सेनाओ ने कोप्पम के पास कृष्णा के दक्षिणी तट पर डेरा डाला और चोळ सेना के दोनो भागो के मिलने के पूर्व ही उसका सामना करने की तैयारी कर रही थी ।

कुतल सेना मे अनेक वीर शिखामणि थे । आहवमल्ल का भाई जय सिह सबसे श्रेष्ठ वीर था । उनके अलावा नन्नियरेवन, तुत्तान, कुदमपन इत्यादि राजकुमार भी उस सेना दल मे थे । साथ ही सुविख्यात पुलिकेशि दशपन्मन्, नन्निनुकुजन आदि दण्डनाथ भी थे ।

चोळ सेना ने सम्राट राजाधिराज द्वारा सचालित सेना दल ही पहले कोप्पम के निकट पहुँचा । उस सेना मे महाराजवाडी सप्त सहस्त्र विषया-धिपति अप्पिमय्य दण्डनाथ ही प्रधान दण्डनाथ था । वह बल्लूर को राजधानी बना कर राजराज ब्रह्माधिराज नाम से महाराजवाडी पर शासन करता था । उस दण्डनाथ ने चोळ सम्राट को मत्रणा दी कि राजेन्द्र के आधिपत्य मे आगे बढने वाले सेना भाग के मिलने तक शत्रु का सामना न करे । मगर तब तक चालुक्यो के अश्वदल चोळ सैनिको से टकराने लग गये थे । इसलिए चोळ सम्राट को अपने छोटे भाई के आने तक पीछे हटना पडना था । यह बात राजाधिराज को अपमानजनक प्रतीत हुई । कुतल सैनिको के सचालन को देखते चोळ सम्राट युद्ध करने लालायित हो उठा ।

वैशाख शुक्ला एकादशी शनिवार के प्रात काल मे कुनल सेनाओ पर हमला करने का चोळ सैनिको को सम्राट ने आदेश दे दिया। कोप्पम क्षेत्र मे महायुद्ध का यज्ञ प्रारभ हो गया।

उभय सेनाओ के आगे गज दल, पार्श्व भागो मे अश्व दल, पीछे पैदल सेना तथा धनुर्धारी थे। दोनो के दल समान बल रखते थे। दोनो दलो मे असख्य वीर तथा समर्थ दण्डनाथ थे। उभय दलो के सैनिक सुशिक्षित थे। दोनो दलो के सम्राट असाधारण पराक्रमी थे।

राजाधिराज एक विशाल हाथी पर सवार हो युद्ध-क्षेत्र मे वीर विहार करने लगा। उसके उत्तुग गज, श्वेतातपत्र, व्याघ्र केतु, शत्रु के लिए बडी आसानी से पहचानने योग्य थे।

राजाधिराज के मत्त गज तथा व्याघ्र केतु को देखते ही कुतल सेना के कतिपय दण्डनाथ तथा सैनिक भी क्रोध से अधे हो गये। पिछले युद्धो मे उनके निकट व्यक्ति चोळ सेना के घातुक कृत्यो के शिकार हुए थे। इसीलिए वे लोग चोळ सम्राट को 'महापातक चोळ' कह कर आवेश मे आ निंदा करते अपने सम्राट आहवमल्ल सोमेश्वर के निकट पहुँचे। उसे प्रणाम करके अपनी शपथ बतायी कि आज सध्या तक वे लोग निश्चय ही चोळ सम्राट राजाधिराज का अवश्य वध करेगे। शपथ करने वालो का एक विशेष दल बनाने की अनुमति मागी। सोमेश्वर ने बडी प्रसन्नता से उनकी इच्छा की पूर्ति की।

तत्काल ही एक विशेष दल राजाधिराज के वध के लिए तैयार हो उठा। अनेक जैनमतावलबी वीरावेश मे उस दल मे शामिल हुए। उन लोगो ने अपने सम्राट के समक्ष प्रतिज्ञा की—"महापातक चोळ राजाधिराज का आज सध्या तक वध करेगे। उसका वध किये बिना हम युद्ध क्षेत्र से नही हटेगे। श्रवण बेळगोळ मे प्रतिष्ठापित गोमटेश्वर को साक्षी बना कर हम यह शपथ करते है।"

आहवमल्ल का अत पुर भी युद्धभूमि मे एक गुप्त प्रदेश मे सुरक्षित था। वीरो की ये प्रतिज्ञाएँ सुनते ही रनिवास की दासियाँ रक्तचदन लायी। वीरो को अलकृत कर दासियो ने मगल गीत गाये।

उस दल को 'महापातक चोळ महाकाल' नामक उपाधि दे आहवमल्ल ने उसे युद्ध-क्षेत्र मे भेजा। महाभारत युद्ध मे अर्जुन का वध करने की शपथ करके सशप्तक जिस प्रकार वीर नाद करते युद्ध-भूमि मे गये थे, वैसे ही ये वीर महापातक चोळ की निदा करते रणक्षेत्र की ओर बढे।

दोनो दलो के बीच भयकर सग्राम चल रहा था। इसी समय 'महापातक चोळ महाकाल' दल राजाधिराज के मातग को लक्ष्य बनाकर निर्भयता पूर्वक आगे बढा। उस दल के धनुष धारियो ने एक साथ राजाधिराज के व्याघ्रध्वज पर बाणो की वर्षा की। ध्वज टुकडे-टुकडे हो हवा मे उसके चीथडे उडने लगे। चोळ सम्राट का छत्र टूट गया। देखते-देखते छत्रवाहक गिर पडे।

हाथी को चलाने वाले महावत एक के बाद एक क्रमश दस आहत हुये। फिर भी चोळ सम्राट राजाधिराज निर्भय आगे बढा चला जा रहा था।

चोळ दण्डनाथो को शीघ्र पता चला कि कुतल सैनिक चोळ सम्राट को लक्ष्य कर उनकी ओर बढ रहे है। बस, फिर क्या था, एक साथ असख्य सैनिको ने चोळ सम्राट के आगे आकर कुतल सैनिको को गाजर-मूली की भाति काटना शुरु किया। फिर भी 'महापातक चोळ महाकाल' दल अग्नि मे जल मरने वाले शलभो की भाति चोळ सैनिको की अग्नि की आहुति होने लगे। असख्य कुतल सैनिक मारे गये, फिर भी उनका उत्साह क्षण-प्रति-क्षण बढता ही जा रहा था।

चोळ दण्डनाथो ने अपने सम्राट को विश्राम लेने की सलाह दी किंतु चोळ सम्राट ने अपना दृढ निश्चय सुनाया कि वह शत्रु को पीठ नही दिखायेगा।

इस महायुद्ध मे चोळ सम्राट पर अनेक बाण आ गिरे। फिर भी उनकी परवाह किये बिना राजाधिराज अपनी सेना का सचालन कर रहा था।

अत मे कुतल सैनिको की बाण-वर्षा मे निहत हो चोळ सम्राट उस हाथी पर ही युद्ध-यज्ञ मे एकादशी के पुण्य काल मे वीर स्वर्ग को प्राप्त हुआ। राजाधिराज की पीठ पर एक भी बाण नही चुभा था।

राजाधिराज को गिरते देख जयनाद करते कुतल सैनिक उस का शव उठा ले जाने को आगे बढे, किन्तु अनेक प्रकार से प्रयत्न करने पर भी चोळ सम्राट का शव उनके हाथो मे न पड़ा। चोळ सैनिको ने कुतल सेना को रोका और उस हाथी समेत सम्राट को युद्ध-शिविर मे पहुँचा दिया।

'महापातक चोळ महाकाल' दल के शेष सैनिको ने अपने सम्राट आहवमल्ल सोमेश्वर को अपनी शपथ की पूर्ति होने का समाचार सुनाकर अमूल्य पुरस्कार प्राप्त किये।

चोळ दण्डनाथोने अपने सम्राट के शव को शत्रु के अधीन होने से बचाया, किंतु शत्रु की धाक से वे परेशान थे। इसलिए वे धीरे-धीरे पीछे की ओर हटते जा रहे थे। सूर्यास्त के समय तक लगता था कि सूर्यवशी चोळ सम्राट की विजयश्री भी मानो पश्चिमाभिमुखी हो गयी हो।

चोळ सेना को तितर-बितर होने से रोकना अप्पिमय्या राजराज ब्रह्माधिराज दण्डनाथ के लिए असाध्य सा प्रतीत हो रहा था। लगता था कि सैन्य बध किसी भी क्षण टूट सकता है!

विजयलक्ष्मी के करगत होते देख अतिशय हर्ष मे आकर कुतल सैनिक अलक्ष्य भाव से आगे बढने लगे। किंतु इस नियम-भग से भी उनकी कोई हानि न हुई।

इसी समय एक पार्श्व मे से दूर पर सेना का कोलाहल तथा भेरी एव डको का निनाद सुनाई पडा। तुरत अप्पिमय्या ने अपनी सारी सेना मे

घोपणा करवा दी कि हमारी सहायता के हेतु राजेन्द्र के नेतृत्व मे चोळ सेनाएँ आ रही है।

घडी भर मे सचमुच राजेन्द्र की सेनाएँ आ मिली। अप्पिमय्या ने तत्काल राजेन्द्र को युद्ध की स्थिति से अवगत कराया और सुझाया कि थके सैनिको को विश्राम देकर राजेन्द्र की सेना कुतल सैनिको का सामना करे।

कुतल सैनिक विजय को करतलामलक मान बैठे थे। इसलिए आहव-मल्ल का रनिवास भी गुप्त स्थानो को छोड युद्धभूमि मे प्रवेश कर आनद पूर्वक युद्ध का अवलोकन कर रहा था।

अतिरिक्त चोळ सेना के आगमन का समाचार सुनते ही कुतल सेना मे भय छा गया। क्योकि उस दिन के भीषण सग्राम मे कुतल सैनिक थक गये थे।

राजन्द्र भी अपने भाई की भाति एक मत्त हाथी पर सवार हो युद्ध कर रहा था। इसे देख आहवमल्ल ने पुन 'महापातक चोळ महाकाल' दल को राजेन्द्र पर आक्रमण करने भेजा। उस दल ने राजेन्द्र पर भी भीषण आक्रमण किया, पर उनका प्रयत्न इस बार भी व्यर्थ न गया।

'महाकाल' दल के बाणाघातो से राजेन्द्र के मत्त गज के फाल भाग पर सुशोभित मुखपट्ट टूट गया। उसकी देह से खून की धारा बहने लगी। राजेन्द्र की दोनो भुजाओ पर गहरे घाव हो गये।

किंतु 'महापातक चोळ महाकाल' दल अचानक एकाकी हो गया। उस दल का प्रमुख जयसिंह वीरगति को प्राप्त हुआ। साथ ही पुलिकेशि दशपन्मन्, नन्निनुळुम्बन नामक सुविख्यात कुतल सेनापति भी वीर स्वर्ग को प्राप्त हुये।

अत चालुक्य सेना पीठ दिखाने लगी। सेना मे भय के छा जाने पर उसे रोकना किसी के लिए भी सभव प्रतीत नही होता।

आहवमल्ल के रनिवास को सुरक्षित प्रदेश मे दूर देख अप्पिमय्या ने उन्हे बन्दी बनाने एक सेनादल को भेजा। पलायन करने वाली रनिवास की रानियो मे से सत्तियव्वै, सोंगप्पै नामक आहवमल्ल की दो रानियाँ अपने परिवार समेत चोळ सैनिकों के वश मे आ गयी।

आहवमल्ल सोमेश्वर युद्ध भूमि मे भाग गया। कृष्णा नदी को पार कर उसके उत्तरी तट पर अपने प्राणो की रक्षा की। राजकुमारो मे से नन्निय रेवन, तुत्तान, कुदमयन इत्यादि ने भी उसका अनुगमन कर आत्म रक्षा की।

उस महायुद्ध मे आहत हुए चालुक्य सैनिको की कोई गिनती न थी। असख्य सैनिक बन्दी भी हो गये। अमूल्य वस्तु समुदाय भी चोळ सैनिको के हाथो मे पड गया।

कुतल चालुक्यो का अति पवित्र वराह ध्वज भी चोळ सैनिको के हस्तगत हुआ।

उस दिन अत मे विजयलक्ष्मी ने चोळ राज्य का वरण तो किया, किंतु चोळ सम्राट की बलि ली। चोळ साम्राज्य की लक्ष्मी के वैधव्य को तत्काल दूर करने का राजेन्द्र ने निश्चय किया।

रण क्षेत्र मे ही राजेन्द्र ने विजय सभा बुलायी। युद्ध मे वीरता दिखाने वाले चोळ वीरो मे असख्य उपहार बाटे।

उस सभा मे मत्री, पुरोहित, सामत एव दण्डनाथ भी उपस्थित थे। बन्दीजन भी थे। वेद-वेदागो के पारगत ब्राह्मण तथा राज्य ज्योतिषी भी थे।

रण-भूमि मे ही सबने राजेन्द्र को चोळ साम्राज्य की लक्ष्मी को ग्रहण करने की अभ्यर्थना की।

राजेन्द्र ने परिषद की आज्ञा को शिरोधार्य किया। तुरन्त चालुक्य वीरो के रक्त से रजित कृष्णा के पवित्र जल से कोप्पम के रण-क्षेत्र मे

राजेन्द्र अपनी रानी किलानडिगळन समेत चोळ साम्राज्य का सम्राट अभिषिक्त हुआ।

इस प्रकार राजेन्द्र जहाँ विजयलक्ष्मी के साथ चोळ साम्राज्य लक्ष्मी का कर ग्रहण कर रहा था, उसी समय उसका जामाता वेंगी का युवराज राजेन्द्रदेव चक्रकोटय पर अधिकार करके विजयलक्ष्मी को ग्रहण कर चुका था और चन्द्रादित्य दण्डनाथ तथा विद्यवासिनी के शुभ विवाह के प्रयत्न कर रहा था।

कोप्पम के युद्ध क्षेत्र मे राजेन्द्र के अभिषेक के साथ राजाधिराज के शव का अग्नि सस्कार हुआ। राजाधिराज की पट्टमहिषि त्रैलोक्य उदयर नबिरात्तियार ने अपने पतिदेव की मृत्यु पर अश्रु गिराये बिना अपने पति के शव के साथ सहगमन किया।

47

कल के दिन राजमहेन्द्रपुर मे अत्यन्त वैभव के साथ नृसिंह जयंति मनायी गयी थी।

कल वैशाख पूर्णिमा है! बुद्ध जयंति! बौद्धों का महान पर्व! इसी दिन बुद्ध भगवान का जन्म हुआ था! उसी दिन भगवान बुद्ध ने पत्नी-पुत्र तथा राज्य को त्याग सन्यास ग्रहण किया था। उसी दिन बोधि वृक्ष के नीचे उन्होंने बुद्धत्व प्राप्त किया था। उसी दिन अंत मे महापरि निर्वाण प्राप्त किया था। इसलिए बौद्ध मतावलंबियों के लिए वैशाख पूर्णिमा से बढ कर कोई पवित्र पर्व दूसरा नहीं है!

बुद्ध जयंति यों तो कल है, फिर भी एक सप्ताह पूर्व से ही सारंगधर टीले वाले संघाराम मे उत्सव मनाये जा रहे है। इस वर्ष दो कारणों से उत्सव की शोभा अधिक बढ गयी थी।

उसमे एक विशेषता है चीनी पंडित का आगमन। तीन शताब्दियों से अधिक जीवित उस महायोगी द्वारा अवलंबित बौद्ध धर्म से बढकर कौन-सा अन्य धर्म होगा? वह मंत्र-तंत्र, शास्त्र एवं चिकित्सा शास्त्र मे भी पारंगत है। अतः उसके दर्शनों के लिए जनता उमड पडी।

दूसरा कारण सुवर्ण द्वीप की यात्रा के हेतु इकट्ठी होने वाली जनता। यात्री सब वैशाख पूर्णिमा का उत्सव देख दूसरे दिन ही मोटुपल्लि के लिए

रवाना हो जायेगे । वहाँ नावो पर सवार होगे । करीब पाँच-छे हज़ार सुवर्ण द्वीप के यात्री सघाराम के चतुर्दिक ठहरे हुये थे ।

कल बुद्ध जयति है, चन्द्रग्रहण भी, इसलिए एक दिन पूर्व ही सघाराम से बौद्ध देवता की मूर्तियो को हाथियो पर रखकर जुलूस के साथ गोदावरी नदी तक ले जायेगे और उन मूर्तियो का स्नान करायेगे ।

आज प्रात काल ही वह जुलूस निकला ।

आगे वृषभो पर ढक्के का निनाद करते कुछ लोग बढ रहे थे । तदुपरात मगल तूर्य बजाते एक दल निकला, भजन दल भी साथ चलने लगे ।

कुछ लोग लाठी व तलवार के पैतरे बदल रहे थे । अन्य अनेक दल विविध प्रकार के विनोद एव कौतुक प्रदर्शित करते चल रहे थे ।

उनके पीछे जेतारीनाथ तथा चीनी यात्री थे । अनेक बौद्ध श्रमण उनके पीछे सुत्त पिटक से सुत्त पढते चले जा रहे थे । उनके पीछे अश्वत्थ पत्रो से अलकृत स्वर्ण कलश धारण कर कुछ लोग चल रहे थे । उनके भी पीछे बौद्ध मूर्तियाँ थी । सब से उन्नत हाथी पर बुद्ध की मूर्ति थी, अन्य हाथियो पर मजुश्री इत्यादि देवताओ की प्रतिमाएँ थी ।

जुलूस करीब आधे कोस की दूर तक फैला था । उसके दोनो तरफ मनोज्ञ वर्णचित्रो वाली ध्वजाएँ धारण कर जनता कतारो मे खडी थी ।

कुछ लोग मूर्तियो पर फूल फेक रहे थे । कुछ लोग धूप से मूर्तियो को सुवासित बना रहे थे । कतिपय लोग कर्पूर की आरती उतारते थे । वीरकृत्य विनोद लीलाओ तथा भक्ति की परवशता के लिए भी उस उत्सव मे विरोध न था ।

वह जुलूस दुर्ग के प्रवेश द्वार के निकट से ही गोदावरी मे जाने का रवाज था । वह दुर्ग के प्रवेश द्वार के पास बडी देर तक रुकता भी था । उस समय रनिवास से बुद्धदेव का उपहार भेजने की परिपाटी थी ।

आज भी सदा की भांति दुर्ग के द्वार पर जुलूस रुक गया। जुलूस के आगे व पीछे के लोग भी गोपुर द्वार के सामने स्थित विशाल प्रदेश में खड़ा हो गये।

द्वार के सामने मूर्तियो का वहन करने वाले हाथी खड़े हो गये। रनिवास से उपहार लाने वाली दासियो को मार्ग छोड दोनो तरफ जुलूस के अश्वारोही पक्तिबद्ध हो खडे थे। अनेक खड्गधारी अपने खड्गों की चातुरी का परिचय करा रहे थे। धनुषधारी वाणो का कौशल प्रदर्शन कर रहे थे।

इसी समय दुर्ग के गोपुर द्वार खुल गये। असख्य रूप-लावण्यवती परिचारिकाएँ हल्दी, कुकुम, पुष्प, नारिकेल तथा आभूषण स्वर्ण थालो मे लाकर बुद्ध मूर्तियो को समर्पित करने लगी। तदनतर नवरत्नो से निर्मित थाली से आरती उतारी गयी।

समस्त वाद्य एक साथ रुक गये। अकस्मात कडालो की ध्वनि हुई। कुछ ही क्षणो मे राजमहेन्द्रपुर के चतुर्दिक कडालो की ध्वनियाँ होने लगी। इस विचित्र ध्वनि को सुन आरती उतारने वाली नारियाँ चौक पडी। उन लोगो ने दुर्ग के द्वार की ओर देखा।

एक ही साथ दोनो पार्श्वो मे पक्तिबद्ध खडे अश्वारोही खुले हुये गोपुर द्वारो के भीतर घुस पडे, धनुष, खड्ग, शूल, एव लाठियाँ धारण किये हुये लोग उन अश्वारोहियो के पीछे भयकर नाद करते दुर्ग मे घुस चले। उस धक्का-मुक्की मे पूजा द्रव्य लायी हुई परिचारिकाएं निर्दयता पूर्वक कुचल दी गयी।

जुलूस मे जाने वाले असख्य लोगो को उस कोलाहल का कारण तक मालूम न हुआ। सर्वत्र यह बात फैल गयी कि राजा के आदेश पर राजभटो ने बौद्ध-मूर्तियो का अपमान किया है। भक्त जन सब आवेश मे आ गये। वहाँ पर इकट्ठी जनता ने राजमहेन्द्रपुर के दुर्ग को घेर लिया।

जेतारीनाथ तथा अन्य श्रमण प्रकट रूप मे जनता को समझाने वाले स्वर मे कह रहे थे—"अच्छा, जाने भी दो! बुद्धदेव का अपमान करने वाले मनुष्य भी है? हिंसा नही करनी चाहिये।" पर उनकी बातें सुनने वाला कौन था? उस कोलाहल के बीच बौद्ध मूर्तियो को ढोनेवाले हाथियो को जल्दी जल्दी गोदावरी तक ले गये, घटो मे जल भर कर दूसरे मार्ग से सघाराम को चल पडे।

राजभटो ने बौद्ध मूर्तियो का अपमान किया है। यह खबर विचित्र रूप मे नगर-भर मे सर्वत्र फैल गयी। पर अपमान किसने किया! कहाँ किया? क्यो और कैसे किया? यह जानने का किसी ने प्रयत्न नही किया। सबने अपनी कल्पना के अनुरूप मिर्च-मसाला जोड कर यह समाचार चारो ओर फैला दिया।

बौद्ध मतावलबी भक्त जो भी हथियार हाथ मे आया, कुल्हाडी, लाठी, तलवार-भाला लेकर दुर्ग पर आक्रमण कर बैठे। अकेले जो भी राजभट या राजकर्मचारी सामने आया, उसे वही पर मार डाला गया।

क्रोधित जनता ने दुर्ग पर ही नही, बल्कि प्रधान राजपुरुषो के निवासो पर भी हमला करके उनमे आग लगा दी। इस प्रकार जनता ने जितने लोगो को मारा और जितने घर जलाये, कोई गिनती तक न थी।

नगर मे ब्राह्मण श्रेणी से लग कर दुर्ग की ओर नृपकाम दण्डनाथ का तथा उस के दूसरी ओर वज्जिय प्रेग्गडा के मकान थे। भीड नृपकाम के मकान के निकट तक नही पहुँच पायी, क्योकि वह दुर्ग के समान सुरक्षित था। वज्जिय प्रेग्गडा के महल पर भीड ने कई बार हमला किया, परतु सुशिक्षितभट समूह उस हमले की रक्षा कर रहा था, इसलिए वह भी उनके लिए दुर्भेद्य था।

ब्राह्मण श्रेणी के समीप वैश्य श्रेणी थी। उस प्रदेश मे कोई हलचल न हुई। दूसरी तरफ कुछ घर जलाये गये, किंतु तत्काल ही मुप्पराज नामक दण्डनाथ ने अपने भटो के साथ प्रवेश करके आग बुझवा दी।

उन दो श्रेणियो को छोड शेष सारे नगर मे हलचल मची हुई थी। राजकर्मचारियो ने सोचा था कि वह हलचल वैशाख पूर्णिमा के दिन होगी। इसलिए वे उसका सामना करने के लिए एक दिन पहले से ही तैयारियाँ कर रहे थे। किंतु एक दिन पूर्व ही हलचल प्रारभ होने के कारण उसे दबाना मुश्किल मालूम हो रहा था। फिर भी राजभट बडी मुस्तैदी के साथ उस विद्रोह का सामना कर रहे थे।

विद्रोहियो ने अकस्मात दुर्ग के भीतर प्रवेश किया इसलिए उन्हे बल के साथ साहस भी प्राप्त हुआ।

भीतर घुसने वाले विद्रोहियो का दुर्ग के भीतर पहरा देने वाले भटो ने सामना किया। पर विद्रोहियो की धाक के सामने उन्हे पीछे हटना पडा।

दुर्ग के भीतर प्रवेश किये हुये विद्रोही चार भागो मे विभक्त हुए। उनमे से एक दल कारागार की ओर बढा। उस दल ने बडी सरलता से द्वारपालो तथा भटो को मार डाला। कारागार के दर्वाजे खोलकर बंदियो को निर्मुक्त किया। उनमे फारस के तेल व्यापारी, परिचारक, सिंधुदेश का अश्व शिक्षक, शास्त्रार्थ के दिन गिरफ्तार हुये अनेक बौद्ध भी थे। वे सब विमुक्त हो विद्रोहियो मे जा मिले। वे ही नहीं, बल्कि राजा के द्वारा दंडित एव आत्महत्या का प्रयत्न करने वाला कामराज-पुत्र भी उसमे था। उसका घाव भर गया था। विद्रोहियो ने उसके बंधन खोल कर उसे कवच, शिर-स्त्राण, खड्ग, धनुष और बाण भी दिये। तत्काल ही उन शस्त्रो को धारण कर वह उस विद्रोही दल का नेतृत्व करने लगा।

एक दूसरा दल विजयादित्य के महल पर टूट पडा। महल का पहरा देने वाले भट विद्रोहियों को रोक ही रहे थे कि इस बीच विजयादित्य कवच व ढाल धारण कर हाथ मे खड्ग ले विद्रोहियो पर अधाधुंध आक्रमण कर बैठा। देखते-देखते वहा पर घोर सग्राम होने लगा।

इसी समय एक बाण कहीं से आया और विजयादित्य के बाहुबध मे जा चुभा। विजयादित्य गिर पडा। भट उसे महल के भीतर ले गये।

विद्रोहियो के शेष दो दलो मे से एक दल राजराजनरेन्द्र के महल पर तथा दूसरा रनिवास पर हमला कर बैठा।

उन दोनो महलो मे कवच, सिरस्त्राण, चर्म इत्यादि धारण कर हाथो मे शूल लिये यवन रोमक भट पक्तिबद्ध खडे पहरा दे रहे थे। वे सदा मौन ही दिखाई देते है। उनकी दृष्टि तीक्ष्ण होती है। वे जहाँ खडे होते है वह प्रदेश लोहे की दीवार की भाति दुर्भेद्य होता है। अश्वारोही तथा धनुप-धारियो ने यो तो बडी कोशिश की, लेकिन कोई फायदा न रहा। वह मनुश्य कुडय अविचल रहा। इस पर धनुर्धारियो ने महल के ऊपरी भाग पर जो भी दिखाया उस पर बाणवर्षा करना शुरू किया।

कारागार से विमुक्त लोग "कामराज महाराज की जय" नाद करते रनिवास की ओर बढे। उस समय अम्मग महादेवी महल के ऊपरी भाग पर खडे हो निर्भयतापूर्वक भटो को लडने का आदेश दे रही थी। वह एक शेरिनी सी प्रतीत हो रही थी।

महारानी को देखते ही कामराज पुत्र ने धनुष्य पर तीक्ष्ण बाण को चढा कर उस पर छोड दिया। हठात् बिजली की भाति एक रोमक भट बाण तथा अम्मगदेवी के बीच आ खडा हुआ। बाण की चोट से वह नीचे गिर पडा।

महारानी ने रोमक भट को भीतर ले जाने का अपने सेवको को आदेश दिया। वह बडी लापरवाही से युद्ध को देखती खडी रही। उसकी देह पर कई बाण आ लगे, लेकिन कवचावृत होने के कारण उसे एक भी चोट न लगी।

इसी समय राजमहल के परिचारको ने आकर महारानी को सूचित किया कि राजमहल मे महाराज दिखाई न दे रहे है।

थोडी देर पश्चात् दुर्ग मे सेना का सचालन करने वाले जननाथ नामक दण्डनाथ ने महारानी को प्रणाम करके निवेदन किया कि दुर्ग के भीतर से मैने विद्रोहियो को भगा दिया है। दुर्ग के बाहर भी समीप मे कोई न रहा। यह सूचना पाकर अम्मगदेवी ने घायलो की चिकित्सा का उचित प्रबन्ध किया। तदनन्तर भागने से बचने वाले कैदियो को कारगार मे राजभटो की निगरानी मे रखा।

कुमारसप्तक मे से शेष छे छाइयो ने भी उस दिन प्रकट रूप मे विद्रोहियो के दल का सचालन किया था। कतिपय राजभट भी उनमे जा मिले थे। अनेक स्थानो पर उन लोगो ने राज्य के सैनिको का सामना भी किया था। अकस्मात् हमला होने पर भी राजा के सैनिक चौकन्ने थे। इस कारण राज्य की कोई विशेष हानि न हुई।

राजमहल पर जिस वक्त हमला हुआ था, उसी समय राजमय्या नामक दण्डनाथ ने एक अश्वदल को साथ ले सघाराम को घेर लिया। जबर्दस्ती भीतर प्रवेश करके उस पर अधिकार कर लिया। उस वक्त उसने जिन वस्तुओ पर अधिकार किया वे अद्भुत है। पिछली रात को ही मँगाये गये दो हजार अश्व वहाँ पर विश्राम ले रहे थे, माल गोदामो मे पूजा के उपकरण नही बल्कि धनुष, बाण, खड्ग, शूल, कुन्त, गदा, तोमर, मूसल, कवच, शिरस्त्राण इत्यादि थे। वह देखने मे एक बहुत बडा आयुधागार प्रतीत हो रहा था। विद्रोहियो का प्रधान केन्द्र सघाराम ही था। उस पर कब्जा होते ही विद्रोहियो का आधार ही छिन गया। बोद्ध मूर्तियो के साथ आये हुए श्रमणो ने राजमय्या को सघाराम छोड जाने का आदेश दिया। उसको न जाते देख धमकी दी कि सम्राट से निवेदन कर कठोर दड दिलाया जायेगा। इस पर भी जब उसने लापरवाही दिखाई तब उन लोगो ने गिडगिडाया। विशेष धन देने का प्रलोभन दिया। फिर भी राजमय्या ने उनकी बात पर ध्यान न दिया। विद्रोही सैनिको को जबर्दस्ती उस पर अधिकार करने का राजकुमार मल्लप्पा ने उसे प्रोत्साहन भी दिया। किंतु राजमय्या ने उन सबको मार भगाया, बौद्ध श्रमणो को जेनारी नाथ, वज्रकीर्ति, चीनी पडित इत्यादि समेत निर्दयतापूर्वक बदी बनाया।

उस दिन नृपकाम दडनाथ अपने महल से वाहर न निकला, किंतु वृद्ध दडनाथ शीघ्रगामी अश्वारोहियो द्वारा राजभटो को आवश्यक सदेश देते हुए बडी समर्थता के साथ सेना का सचालन कर रहा था ।

दुपहर के होते-होते दो शुभ समाचार प्राप्त हुए । एक युवराज राजेन्द्रदेव ने चक्रकोटय दुर्ग पर अधिकार कर लिया है । कोप्पम् युद्ध क्षेत्र मे कुतल, चालुक्य सेना चोळ सेना के हाथो मे पराजित हो गयी है । तत्काल ही नृपकाम ने सारे नगर मे यह समाचार घोषित कराया ।

यह समाचार सुनते ही विद्रोहियो की हिम्मत टूट गयी । वे जहाँ-तहाँ भाग खडे हुए । तीसरे पहर तक राजधानी मे शाति छागयी ।

राजमहेन्द्रपुर मे उस दिन विद्रोह की जो अग्नि प्रज्वलित हुई वह केवल राजधानी तक सीमित न रही । वेगी राज्य के अनेक प्रदेशो मे यह विद्रोह हुए । कुछ प्रदेशो मे सैनिक, नाविक, कही-कही दडनाथ भी विद्रोहियो मे मिल गये थे । किंतु नृपकाम तथा वज्जिय ने बडी दक्षता के साथ स्थिति पर काबू कर लिया ।

भट्टिप्रोलु, घटसाल, अमरावती, जग्गय्यपेट, नागार्जुनकोंड इत्यादि कृष्णा तटीय प्रदेश बौद्धो के प्रधान केन्द्र रहे है । इसी भाति वेगी राज्य की प्राचीन राजधानी वेगीपट्टण भी विद्रोहियो के अधिकार मे चला गया । कृष्णा नदी पर कुछ नौकाएँ भी विद्रोहियो के वश मे हो गयी ।

मोटुपल्लि मे प्रातःकाल ही विद्रोह के लक्षण दिखाई दिए । शक्ति वर्मा ने अपने कठोर आदेशो के द्वारा शीघ्र ही विद्रोह को दबाया मोसलपुर तथा कृष्णा नदी मे भी राजसेना को छोड अन्यो के लिए नौकायान पर निषेध लगाया, इसलिए विद्रोही जहाँ के वही रह गये । राजसैनिक भिन्न प्रदेशो मे जाकर विद्रोह को दबाने मे सफल हुए । इस कार्य मे कुछ दिन लगे ।

राजमहेन्द्रपुर को छोड सारा गोदावरी तट शान्त था। राजधानी मे इतना बडा विद्रोह फैला था, फिर भी राज राजनरेन्द्र और वज्जियप्रेग्गडा का कही पता न था। यह अफवाह फैल गयी कि महाराजा और मत्री वेष बदल कर नगर का सचार कर रहे हे। उन्हे पहचान कर उनका सहार करने से नगर बडी आसानी से हमारे हाथ मे आ जाएगा। विद्रोहियो ने इस प्रकार सोचा। कई दफे—"लो यही राजा है!" "यह देखो यही मत्री है" कहते विद्रोही कई लोगो को मार डालते थे।

विद्रोह के कम होते ही राजपथ राजभटो से भर गये। सैनिक जनता को मार्गो पर आने से रोक रहे थे।

एक सप्ताह से दो विदूषक दो घोडो पर सवार हो हाथो मे लकडी के खड्ग धारण कर नगर की गलियो मे जनता को हँसा देते थे। आज के लोग ब्राह्मण श्रेणी मे घूम रहे थे। नगर मे जिस वक्त विद्रोह कम हो रहा था, उस समय राजभटो ने उनको देखा। तुरन्त विदूषको को खड्ग त्यागने का राजभटो ने कठिन आदेश दिया, पर उन लोगो ने न माना। राजभटो ने जबर्दस्ती उन खड्गो पर अधिकार कर लिया, तो देखते क्या है कि वे लकडी के खड्ग नही बल्कि उच्चकोटि के लोहे के तेज खड्ग थे। इस पर उन विदूषक वेषधारियो को राजभटो ने बदी बनाया और नृपकाम दडनाथ के सामने उपस्थित किया।

48

राजभटो ने विदूषको को बदी बना कर नृपकाम दण्डनाथ के सामने उपस्थित किया। दण्डनाथ ने मदहास करते उनसे पूछा——

"वृद्ध जयती, चन्द्रग्रहण कल है न ?"

वृद्ध विदूषक ने कहा——"दण्डनाथ, तुम्हारे भटो ने जल्दबाजी मे आ कर आज ही राजचन्द्र-ग्रहण किया है। हम क्या कर सकते है ?"

युवा विदूषक मुस्कुराते हुए एक ऊँचे आसन पर जा बैठा। सबके बैठने पर नृपकाम ने उस दिन का वृत्तात उन्हे सुनाया। यह देख राजभट थर-थर कापने लगे कि वे लोग भूल से राज राजनरेन्द्र तथा वज्जिय प्रेग्गडा को बदी बना कर ले आये है। यह जान कर वृद्ध विदूषक वेषधारी वज्जिय ने उन भटो को बुला भेजा। उन्हे न केवल अभय प्रदान किया, अपितु खूब पुरस्कृत भी किया।

उस दिन नृपकाम के महल से राज राजनरेन्द्र का सर्वालकार विभूषित हो पट्टगज पर सारे नगर मे वैभव के साथ जुलूस निकाला गया। उसके दोनो पार्श्वो मे नृपकाम तथा वज्जिय उत्तम अश्वो पर सवार हो निकले। उस जुलूस के उभय पार्श्वो मे गजारोही, अश्वारोही तथा हजारो की सख्या मे पैदल सैनिक महाराज की रक्षा कर रहे थे।

चक्रकोटय पर युवराज की विजय, कोप्पम युद्ध मे चोळ-विजय तथा राजमहेन्द्रपुर मे विद्रोह-मर्दन इत्यादि घटनाओ को पटो पर चित्रित कर लोग अनेक प्रकार से गान कर रहे थे ।

वदीजन स्तुति करते आगे बढ रहे थे ।

भेरी, शख काहळ इत्यादि विजय वाद्य बज रहे थे । सैनिको की वदना, पुरवासियो की मगल आरतियो एव पुष्पाजलियो को ग्रहण करते राज राजनरेन्द्र गर्व का अनुभव कर रहे थे ।

दूसरे दिन प्रात काल तक दुर्ग द्वार के सामने एक विशाल पडाल निर्मित किया गया । उसमे वितान के नीचे सिहासन पर राज राजनरेन्द्र आसीन हुआ । विद्रोहियो को दबाने मे जिन लोगो ने बडी सामर्थ्य और राजभक्ति दिखाई उन्हे अमूल्य पुरस्कार के साथ नई उपाधियाँ भी बाटी गयी । ऐसे पुरस्कृत व्यक्तियो मे नृपकाम, दण्डनाथ, जननाथ, राजमय्या और सुप्पराजु विशेष रूप से उल्लेखनीय है । उन्हे राज राजनरेन्द्र ने स्वय पुरस्कृत किये थे । अन्य साहसी वीरो तथा राजसेवा मे प्राण अर्पित करने वाले सिपाहियो के परिवारो को उचित रूप मे पुरस्कार और आजीविका का उचित प्रबन्ध किया गया ।

दुपहर के समय न्याय सभा बुलाने की घोषणा सम्राट ने स्वय न्याय निर्णय करने का निश्चय किया ।

वह सभा यमराज सभा का स्मरण दिला रही थी । सभी राजभट नीले वस्त्र धारण करके यमभटो की भाति दिखाई देते थे और वे बदियो को एक-एक करके प्रवेश करा रहे थे ।

कुमार सप्तक मे से बदी हुए राजकुमार विजयादित्य, विमलादित्य विक्रमादित्य तथा विष्णुवर्धन को दण्डनाथ राजमय्या ने राजा के सामने उपस्थित किया और उन पर अभियोग पढ कर सुनाया । राजद्रोहियों मे ये

चारो प्रधान व्यक्ति हैं। अपार जनसहार का कारण यही लोग है। इन चारो का शिरच्छेद करने का दड दिया गया।

कुमार सप्तक के अन्य राजकुमार मल्लप्पा, कामराज पुत्र और राजमार्ताड भाग गये। फारसी व्यापारी और मेधव भी हाथ न लगे।

इसके उपरात सघाराम के अध्यक्ष जेतारीनाथ को उपस्थित किया गया। जननाथ दण्डनाथ ने उस पर अभियोग पढ करके सुनाया कि जेतारी नाथ ने सघाराम को आयुधागार के रूप मे बदल डाला और राजमहल पर हमला करने की भीड को प्रेरणा दी।

जेतारीनाथ ने अलक्ष्यभाव से कहा--"सघाध्यक्ष के प्रति फैसला करने का अधिकार किसी भी राज्याधिपति को नही है।"

इसी समय रापति बेतय नायक ने उठकर कहा "महाराज! यह सब प्रकार से पतित है। पूजाकन के नाम पर मुग्धानारियो को धोखा देकर उनके परिवारो को तबाह कर रहा है। सुजाता नामक एक साध्वी उपासिका इस सबध मे उचित गवाही दे सकती है। अलावा इसके इसने नारायण भट्ट के सेवक को सघाराम मे बदी बनाया है।"

इसके बाद गवाही देने सुजाता को बुलाया गया। सुजाता ने शपथ करके अपनी विषाद गाथा यो सुनाई--"यह जेतारीनाथ जब कल्याणकटक आया, तब अनेक नारियो के साथ मै भी इस महानुभाव के दर्शन करने गई। उसने मुझे उपदेश दिया कि ससार बुद्बुदप्राय है। इसलिए मै अपने पति को छोडकर इसके साथ उपचार करते राजमहेन्द्रपुर मे आई। मार्गमध्य मे मत्रोपदेश देकर मुझसे घोर प्रतिज्ञा कराई कि गुरू की आज्ञा का उल्लघन नही करना चाहिए। इसके उपरात मेरी परीक्षा लेने के निमित्त कामभिक्षा मागी। मैंने जब तिरस्कार किया तब मुझे डरा धमकाकर कि मुझे भयकर नरक यातनाएँ भोगनी पडेगी, कुछ समय के बाद वह अपनी कामना में सफल

हुआ। मैने जो घोर प्रतिज्ञाएँ की थी उनके बद्ध हो मैने अपनी देह इसको समर्पित किया। आखिर मुझे पूजा इत्यादि के प्रति विरक्ति पैदा हुई। तब से मै रोगियो के उपचार करते हुए अपनी व्यथा को दूर करने का प्रयत्न कर रही हू। हाल ही मे इसने मेरे पति को सचाराम मे जोड समय के लिए बदी बनाया।"

यह सुनकर राजराजनरेन्द्र का मस्तक झुक गया। पर जेतारी-नाथ का सर उठा ही रहा। उसने कहा इस सभा मे मुझे कोई उत्तर देने की आवश्यकता नही है।

इसके उपरात राजमहेन्द्रपुर का सभापति उठ खडा हुआ। इसने कहा "श्रीमुख द्वारा आप लोगो ने सुना होगा कि शकर जयति के सदर्भ मे जगतगुरु स्वामीजी ने कृष्णशर्मा नामक एक ब्राह्मण को तुरीयाश्रम का उपदेश दिया था। वह निकृष्ट जिदगी बिता रहा था। इसलिए चातुर्वर्ण्य शिष्यवृन्द मे उसका बहिष्कार किया और उसके वक्षस्थल पर तप्त मुद्रा अकित करायी। वही वेष बदलकर यहाँ रह रहा है। वह कृष्णशर्मा ही यह जेतारीनाथ है। चाहे तो आप लोग वक्षस्थल को जाच कर सकते है।" सभापति की बाते सुनकर राजभटो ने उसके हृदय भाग से शाल को हटाया तो उसपर श्री विद्याभारती की मुद्रा तप्त हो अकित थी। लोग हाहाकर कर उठे। सम्राट भी कुछ निर्णय न कर सका। उसने प्रौडिवबाक् चीदमार्य की ओर देखा।

चीदमार्य ने कहा—"महाराज! इसे जो दड देना था, जगत्गुरु ने ही दिया है। मेरी दृष्टि मे इसके लिए उचित दड देश से निकालना ही है।"

सभा मे बैठे हुए लोगो ने कहा—"इसके टुकडे टुकडे करके चीलों ओर कौओ को खिलाना चाहिए।"

फिर भी किसीने चीदमार्य के धर्मनिर्णय का खडन करने का साहस न किया।" "तीन दिन के भीतर तुम्हे वेगी मडल को छोडकर जाना होगा।

नही तो तुम्हारे साथ कोई भी कुछ करेगा, उसके लिए राजदड न होगा ।"

राज भटो ने जेतारी नाथ के बधन खोल दिए । वह ऊर्ध्व बाहु को उत्तराभिमुखी हो तत्काल ही निकल पडा ।

इसके बाद वज्रकीर्ति को खडा किया गया । राजमय्या ने उसके अपराध पढ सुनाये । रार्वात बेलया ने यो कहा—"लगता है, यह श्रमण कुछ अलौकिक शक्तियाँ रखता है । मत्रतत्र आदि का लोभ देकर इसने कई लोगो को विद्रोह मे शामिल कराया है । वज्रकीर्ति ने भी यह कहकर मौन धारण किया कि राजसभा को उसके सबध मे फैसला करने का अधिकार नही है ।"

प्रौड्विवाक् ने कोई निर्णय न दिया । सम्राट ने कहा —"ऐसे दुष्टो को जो भी दड दिया जाय वह थोडे ही होगा । चूकि पवित्र सन्यास आश्रम के प्रति हमारे मन मे आदरभाव है । इसलिए सन्यास वेष धारण किए इस दुष्ट को भी देश निकाला दड दे रहे है । इसको भी तीन दिन के अदर हमारे राज्य की सीमा पारकर जाना होगा । वज्रकीर्ति भी जेतारीनाथ का अनुसरण करते उत्तराभिमुखी हो हाथ उठाकर निकल पडा ।"

इसके बाद सभी बोद्ध श्रमणो को वही दड दिया गया । फिर चीनी यात्री को खडा किया गया । मुप्पराज ने उस पर अभियोग पढकर सुनाया—"इसने वैश्य श्रेणी पर विद्रोहियो को भडकाकर घर जलवा दिए । सभी विद्रोहो का मूलकारक यही है । यह चीन का निवासी नही । चक्रकोटच मडल का गुप्तचर है । राजद्रोह के लिए अधिक धन एव उपकरण यही लाया है । यह श्रमण भी नही, मत्रतत्र बिलकुल नही जानता । इसके तीन सौ वर्ष की उम्र नही बल्कि तीस से ज्यादा नही ।"

"महाराज ! राजदूतो को जो दड दिया जाता है, वही दड मुझे दिया जाय" उसने निवेदन किया ।

"यह दूत नही, गुप्तचर है। गुप्तचर को मृत्यु दड ही उचित ही है।" चौदवीर्य ने कहा।

इस पर राजा ने अपना आदेश सुनाया—"इसको मृत्यु दड दिया जाय। इसका सर सघाराम के द्वार के पास एक ऊँची जगह पर लटकाया जाय।"

इसके उपरात तीन नागराजो को राजभट ले आये और बोले—"ये लोग त्रैलोक्य मल्ल के गुप्तचर है। इन लोगो ने वेगी जनता मे ही नही बल्कि राजभटो मे भी विद्रोह पैदा किया है। राजमहल पर हमला करने मे इनका प्रमुख हाथ है।"

इस पर सम्राट ने उन तीनो का शिरच्छेद करने तथा सघाराम के सामने लटकाने का आदेश हुआ।

इसके अलावा उस दिन और अनेक लोगो के अभियोग सुने गये। पर साधारणत. उस दिन शिरच्छेद का दण्ड ही सुनाया गया। सबको सघाराम के सामने ही शिरच्छेद करने का आदेश हुआ। जहाँ पर नागराजो की नागगाथाओ से वह मैदान गूज उठा था, वहाँ आज राजद्रोहियो के सरो के कटने की आवाज गूँज रही थी।

सबका फैसला होने के बाद राजदूत ने घोषणा की—

"सारगधर टीले वाले सघाराम को फिलहाल राजकर्मचारी अपने अधिकार मे ले रहे है। आज से पाँच वर्ष तक उसकी सारी आमदनी दाक्षाराम मे स्थित भीमेश्वर मदिर के उत्सवो मे खर्च कर दी जाएगी। इसके पश्चात योग्य बौद्ध भिक्षुओ के प्राप्त होने पर यह सारी जायदाद तथा सघाराम बौद्ध सघ के वश मे कर दिया जाएगा। तब तक उसमे प्रतिष्ठापित मूर्तियो का नित्य नैवेद्य, पूजा आदि राज कर्मचारी ही एक श्रमण के द्वारा करवा देंगे। बौद्ध भक्तो को किसी प्रकार की तकलीफ न होने पाए, इस खयाल से राजमय्या को वहाँ के अधिकारी नियुक्त कर रहे हैं।

"जो लोग राजद्रोही के रूप मे दण्ड पा चुके है, उनका सर्वस्व राज-कर्मचारी अपने अधीन मे ले लेगे। वह सपत्ति विद्रोह के समय धन, प्राण एवम् मान खोने वाले निर्दोषी लोगो मे बाट दी जाएगी। इसके अतिरिक्त हमारे खजाने से भी बडी राशि उन लोगो के लिए खर्च करने का हम अपने कोशाध्यक्ष को आदेश दे रहे है।

"कल के दिन तात्कालिक आवेश मे आकर कुछ लोगो ने उछल-कूद की है। ऐसे लोगो को महाराज आदेश देते है कि वे अपने मन तथा शरीर को अधीन मे रखे।

"सुवर्ण द्वीप की यात्रा करने की इच्छा रखने वालो के लिए मोटु-पल्लि मे राज्य की नावे तैयार हो रही है। विद्रोहियो के द्वारा मार्ग निष्कटक बनते ही उन्हे भिजवा देगे। तब तक गरीब लोग हमारे द्वार कोटिलिगाल क्षेत्र मे स्थापित धर्मशाला मे भोजन कर सकते है।"

ये घोषणाएँ सुनने पर जन-समुदाय के मन मे राजभक्ति का भाव उमड पडा और सबके नयनो से आनद बाष्प झलक उठे।

इसी समय गुरुनाथ श्रेष्ठी ने उठ कर राजा के पादपीठ की वदना की। कुमार सप्तक द्वारा प्राप्त वज्रकठिका को पादपीठ पर उपहार के रूप मे रख कर बोला--

"कुमार सप्तक ने मुझसे क्षमा माँगी। मैंने यह सोच कर उन्हे ऋण दे दिया कि ये लोग राजबधु हैं। परन्तु मुझे सदेह हो रहा है कि कल जो विद्रोहकाड हुआ, उसमे मेरा धन भी जनता के सहार मे कुछ हद तक सहायक बन गया है। मैंने अज्ञान वश यह भूल की है। फिर भी उसके प्रायश्चित स्वरूप मे कुमार सप्तक ने मेरे पास जो अमूल्य हीरो की कठिका गिरवी रखी है, उसे श्री विष्णुवर्द्धन महाराज को उपहार के रूप मे समर्पित करने की आज्ञा चाहता हूँ।"

शात स्वर मे सम्राट ने कहा--"श्रेष्ठी! केवल वह कठिका ही नही बल्कि हमारे द्वारा दी गयी समस्त उपाधियो को हम वापस ले रहे है।"

गुरुनाथ श्रेष्ठी ने अपनी सारी उपाधियाँ एव पथक निकालकर राजराज के पाद पीठपर समर्पित किया ।

इस पर राजराज ने ही गुरुनाथ श्रेष्ठी प्रतिस्पर्द्धी, धान्यश्रेणीपति सिरिवि सेट्टि को निकट आने का सकेत किया । वे समस्त उपाधियाँ उसको प्रदान की । ऐसा लगा कि वैशाख पूर्णिमा बुधवार के दिन गुरुनाथ की श्रेष्ठि लक्ष्मी उसे त्याग कर सिरिवि सेट्टि को वरन कर रही हो ।

राजा का आदेश पाकर कोशाध्यक्ष तथा हीरे के पारखियो ने वज्रकठिका की परीक्षा की । उन सबने एक मत हो निवेदन किया—"यह कठिका वेगी, चालुक्य राजाओ की परपरागत रूप से कुब्ज विष्णुवर्धन के जमाने से आनेवाली ह । इसे डेढ सौ वर्ष पूर्व कर्नाटक चालुक्यो ने हर लिया था . यह चक्रवर्ति के धारण करने योग्य है ।"

इसी समय गोदावरी जय भेरी का नाद सुनाई पडा । उस प्रदेश के समीप मे स्थित यह एक घाट पर एक सुशोभित नाव आ पहुँची । युवराज राजेन्द्रदेव नाव से उतर पडा । उसके पीछे पुरोहित तथा दक्षिण भाग मे नारायण भट्ट चल रहे थे ।

युवराज का आगमन जान कर राजराज ने उसके स्वागत के लिए पूर्ण कुभ भेजा । युवराज ने सभा मे प्रवेश कर अपने पितृदेव के चरणो का अभिवादन किया और धारावर्ष का सम्मति-पत्र समर्पित किया । राजराज ने युवराज को आशीर्वाद दिया और प्रेम से उसके शरीर का स्पर्श किया ।

"हीरे के पारखी बताते है कि यह वज्रकठिका चक्रवर्ति के धारण करने योग्य है । तुमने इतनी जल्दी चक्रकोट्य पर विजय प्राप्त की है । इसलिए तुम चक्रवर्ति बन सकते हो ।" इन शब्दो के साथ राजराज ने वज्रकठिका युवराज के कठ मे पहना दिया ।

"नारायणभट्टारक ! आज रात को आप हमारे अतिथि ह । इस चद्रग्रहण के समय हम आपको हमारे राज्य मे बदी बनाने का दान करना

चाहते है। हमारा निवेदन है कि आप इसे स्वीकार करें।" राजराज ने कहा।

नारायण भट ने स्वीकृति दे दी। लेकिन उसके चेहरे पर विषाद की रेखा झलक रही थी।

'तुम्हारी धर्मपत्नी और पुत्री सुरक्षित है। अभी हमे निश्चित सभाचार मिला है।" वज्जिय ने कहा।

नारायणभट्ट का मुखमडल धमक उठा

कोटिलिगाल क्षेत्र मे गोदावरी का स्नान करके राजराज ने नारायण भट्ट को नदमपूडि ग्राम को अग्रहार के रूप मे दान कर दिया।

49

वेगी राज्य मे तीन दिन के अदर विद्रोह दब गया। समस्त बौद्ध सघारामो पर राजभटो ने अधिकार कर लिया। अपराधियो को कठोर दड दिया गया। व्यधियो के फैलने से रोकने के लिए शवो को हटाकर यथाविधि दहन एव खनन आदि सस्कार कराये गए।

निर्वासित श्रमण वेगी राज्य को छोड चले गए। फारस के तेल व्यापारी, सैंधव देश के अश्व व्यापारी भी भाग गए थे।

वैशाख कृष्ण पचमी के दिन राजराजनरेन्द्र ने विजयसभा बुलाई। उसमे मत्री, पुरोहित, दडनाथ, सेनापति, युवराज, दौवारिक आदि उपस्थित थे। शक्तिवर्मा, विजयादित्य, सोमयाजि, वेदविद यथास्थान बैठे थे। वैसे वेगी राज्य के पडित उपस्थित थे ही, साथ ही घूर्जर पडित, वेदि कवि कृष्णमिश्र, भोज दर्बारी कवि क्षेमेन्द्र, चित्तप नामक आन्ध्र कवि, काश्मीर पडित बिल्हण भट्ट, उनके अतिरिक्त आथर्वणाचार्य वेमुलवाड भीमकवि इत्यादि अनेक पडित कवि उस सभा मे उपस्थित थे।

राजराजनरेन्द्र के सभा मे प्रवेश करते ही बदी-मागधियो ने स्तुति की राजराज के सिहासन पर बैठते ही नन्नयभट्टारक विरचित नवीन श्लोकों द्वारा वन्दी ने राजराज की प्रशस्ति का गान किया

"तस्मा द्विमलादित्याद्रविकुल लक्ष्म्याश्च कुदवा देव्या
निजगुणवशीकृताखिल राजन्यो राजविभु रजनि ।"

x x x x

इसके उपरात दो नदिया के बीच बसे नदमपूडि के निवासियो, राष्ट्र-कूट के प्रमुखो को राजदूत ने बुलाया । इस पर वे सब सभा मे उठ खडे हुये । सबके समक्ष सम्राट ने नदमपूडि अग्रहार शास्त्रीय विधि से नारायण भट्ट को दान मे समर्पित किया ।

पुन राजदूत ने राजा का शासन पढा--

"नन्नि नारायणाय भवद्विपये नदमपूँडि नाम
ग्रामोऽग्रहारी कृत्य सोमग्रहण निमित्ते धारा-
पूर्वक मस्माभिस्सर्वकरपरिहारेण दत्तमिति
विदित मस्तुव अस्य सीमान ।"

x x x x

"आज्ञप्ति रस्य कटकाधिराज
काव्याना कर्ता नन्निय भट्ट
लेखको गडाचार्य
द्वात्रिंशतमे विजय राज्यवर्षे वर्द्धमाने कृत
मिद शासनम् ।"

यह ताम्र लेख पाँच ताम्रपत्रो पर लिखवाकर उन पर वराह की मुद्रा अकित कर दी गई । राजराजनरेन्द्र ने उन्हे युवराज के हाथो द्वारा नारायणभट्ट को समर्पित कराया । नारायणभट्ट ने उनको ग्रहण कर आँखो से लगाया और युवराज को हृदय पूर्वक चक्रवर्ती बनने का आशीर्वाद दिया ।

इसके उपरात कृष्णमिश्र ने प्रबोध चन्द्रोदय के तीसरे अक का प्रसग "बौद्ध-जैन-कापालिक विजय' पढ सुनाया। पचम अक मे कुछ वाक्य—

"सौगतास्तावत् सिधु गाधार मगधाग पारसीक वग कलिगादीन म्लेच्छ प्रायान् जनपदान् प्रविष्टा पाषण्ड दिगबर कापालिकादयस्तु पामर बहुलेषु पाचाल माळवाभीरावर्त मागरान्पेषु निगूढ सचरति। न्यायाद्यनुगतया च मीमासया गाढ प्रहार जर्जरीकृता नास्तिक तर्का तेषामेवागमाना अनुष्द प्रयाताः।" पढकर समाप्त किया। सभा मे उपस्थित पडित वृन्द ने अत्यत आनद का अनुभव किया।

तदुपरात नौकाध्यक्ष पद को बडी समर्थता के साथ सभालने वाले शक्तिवर्मा को राजराज ने वह पद स्थाई कर दिया। उसकी प्रस्तुति करके विजयादित्य का कुशल-मगल जान लिया।

काश्मीर का युवकवि बिल्हण ने अपने मधुर कठ से कतिपय श्लोक पढ सुनाया, पर लगा कि सभा ने विशेष रूप से उन श्लोको का आनद नही उठाया।

भोजराज का दरबारी कवि क्षेमेन्द्र अपने रिश्तेदारो को देखने स्वदेश मे आया था। उसने भी अपने काव्यो तथा भोजराज कृत चपू रामायण से भी कुछ भाग पढ सुनाये।

इसके पूर्व वज्जिय प्रेग्गडा ने कुछ ब्राह्मणो को यज्ञ सपन्न करने मे अनुमति न दी थी। सभा के समक्ष उन ब्राह्मणो से क्षमायाचना करके वज्जिय ने उन्हे सूचित किया कि इस वक्त उन्हे यज्ञ करने की राजा की अनुमति प्राप्त हो गयी है। उस यज्ञ के निमित्त वज्जिय ने भी अच्छी दक्षिणा देने की घोषणा की। इस पर वह ब्राह्मण सोमयाजी ने वज्जिय को अशीर्वाद देते हुये कहा—"वैशाख शुक्ला पक्ष मे इन नौद्व महायज्ञ के समय न मालूम हमारा यज्ञ कैसे सपन्न हुआ होगा!"

इस पर नन्नय भट्टारक ने व्यास महर्षि कृत महाभारत मे से चार्वाक का प्रसग सुनाया। सभा समाप्त हुई।

तब वज्जिय प्रेग्गडा ने खड़े होकर सभा से निवेदन किया

"इस विजय सभा के सदर्भ मे व्यास महर्षि कृत महाभारत के श्रवण से मुझे बडी प्रेरणा प्राप्त हुई है–

"चन्द्रवशी राजाओ के चरित्र इस महाभारत मे वर्णित है। साथ ही इसमे वेद एव शास्त्रो का सारतत्व वेद व्यास ने सरल शैली मे प्रस्तुत किया है। आज साधारण जनता सस्कृत भाषा से सर्वथा अनभिज्ञ है। मुझे लगता है कि यदि जनता महाभारत के सार तत्व से परिचित होती तो वह बौद्ध धर्म के प्रलोभन मे पडकर ऐसे अकृत्य न कर बैठती। क्या इस सभा मे ऐसे समर्थ महाकवि न होगे जो महाभारत मे निबद्ध सार को तेलुगु भाषा मे प्रस्तुत करने की क्षमता रखते हो!"

वज्जिय के वचनो पर राज राजनरेन्द्र ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। किंतु सभासदो ने मौन धारण किया।

सस्कृत के पडितो को यह सुझाव पसद न आया। पपन भट्ट ने सस्कृत के पडितो का अभिप्राय यो व्यक्त किया

"साक्षात् वेद समान श्री महाभारत का तेलुगु मे रूपातर करने से बढकर कोई पाप कार्य हो सकता है ?"

नारायण भट्ट ने सभा को लक्ष्य करके विनयपूर्वक निवेदन किया ·

"व्यास कृत महाभारत का ,पुराण-प्रवचन तो कर रहे है न ? वह किस भाषा मे किया जा रहा है ? तब यह पाप नही लग सकता ?"

चीदमार्य ने उसकी व्याख्या दूसरे ढग से की

"वेद व्यास कृत महाभारत को उतनी ही उदात्त एव मनोहर शैली मे तेलुगु भाषा मे प्रस्तुत करना क्या सम्भव है ? उतनी समर्थता के साथ रचना कर सकने वाले क्या कोई इस सभा मे है ? वह तो वेदवाणी है! तिस पर भी कृष्ण द्वैपायन की पवित्र वाणी है! तेलुगु मे उसका रूपातर करने वाला साहसी कोई है ?"

उस सभा मे उपर्युक्त प्रश्नो का उत्तर दे मकने वाला कोई न था।

नन्नय भट्ट ने स्पष्ट कर दिया—"मैं इधर कुछ महीनो से महाभारत को तेलुगु काव्य का रूप देने का सकल्प तो करता आ रहा हूं। परन्तु इन्ही सदेहो के कारण मैं अनुवाद के उपक्रम का साहस नही कर पा रहा हूं।"

पडितो ने नन्नय के वाक्यो की प्रस्तुति की। नन्नय के औचित्य की प्रशसा करते हुए नारायण भट्ट ने पुन निवेदन किया :

"महाभारत के उपाख्यानो को ग्रहण कर कवि कुलगुरु कालिदास ने दो नाटक रचे। मीमासा के अग्रणी भवभूति ने श्रीमद् रामायण को दो नाटको का रूप दिया। इस कृष्ण मिश्र पडित ने उपनिषद के वाक्यो के सार को नाटक के रूप मे चित्रित किया। ये सब पडित एव कवियो के लिए सम्मत ही है न ?"

क्यो नही हो सकता! महाकवि कालिदास ऋषि है। उनके अभिज्ञान शाकुतलम् तथा रघुवश उसकी प्रामाणिकता घोषित कर रहे है! भवभूति भी ऋषिकल्प है। श्रीमद् रामायण की कथा को सजीव भाषा मे महावीर चरित तथा उत्तर रामचरित मे चित्रित किया है।

सबने उपर्युक्त कथनो का समर्थन किया। तदुपरात नारायण भट्ट ने कहा—

"व्यास एव वाल्मीकि कृत कथाओ को प्राकृत मिश्रित सस्कृत नाटको मे स्वतत्रतापूर्वक आवश्यक परिवर्तनो के साथ चित्रित करने मे इस पडित परिषद को कोई आपत्ति नही है। ऐसी हालत मे देशी भाषाओ मे व्यास महर्षि के मूल काव्य की रक्षा करते हुए पुराण-प्रवचन की अपेक्षा अधिक हृदयगम शैली मे काव्य का रूप देने मे क्या पडितो को आपत्ति हो सकती है?"

सभा मौन रह गयी।

वज्जिय ने प्रसन्न हो कहा—"महाराज पडित परिषदो मे मत्रित्व का भार वहन करने का अधिकार केवल नारायण भट्ट को ही है।"

नन्नय भट्ट के नेत्र आर्द्र हो उठे ।

भोजराज के दरबारी कवि चित्तप ने सदेह प्रकट किया——

"प्राकृत भाषा के कुछ हद तक लक्षण है । यदि तेलुगु के लिए भी हो तो उसमे महाभारत की रचना करने मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए ।"

वृद्ध भीमनभट्ट ने सभा से निवेदन किया ।

"नन्नय भट्टारक ने 'प्रक्रिया कौमुदी' नामातर 'आध्र शब्द चितामणि' नाम से एक व्याकरण ग्रथ लिखा है । साथ ही 'लक्षण सार' नामक छन्द-शास्त्र रच कर वे तेलुगु भाषा के शब्दानुशासक हो गये हे । इसलिए तेलुगु भाषा के लिए भी इस समय प्राकृत भाषाओ से कम प्रतिष्ठा प्राप्त नही है ।"

महाभारत के रूपातर पर अब सभा मे कोई आक्षेप न रहा । पर प्रश्न यह था कि रूपातर करने की क्षमता रखने वाले कवि कौन है ।

नारायण भट्ट ने परिषद् को पुन निवेदन किया——

"मेरे पूर्वज इसी वेगी मण्डल के निवासी थे । मेरे पिता, दादा, परदादा आदि ने यज्ञ किये थे । हम लोग कोनसीमा के निवासी थे । पर वहाँ भयकर अकाल पडा । अत हमारे पूर्वज कुतल देश के प्रवासी हुए ।

"कुतल देश के पप नामक जैनमतावलबी ने 'विक्रमार्जुन विजय' नाम से महाभारत की कथा को विकल बना कर कन्नड भाषा मे काव्य का रूप दिया हे । उसके अध्ययन करने पर कन्नडवासियो को व्यास महर्षि द्वारा प्रतिपादित मत रुचिकर प्रतीत नही हो रहा है । इसलिए किसी अधिकारी विद्वान के द्वारा तेलुगु मे महाभारत प्रस्तुत होना चाहिए । मैं इसी आशा से कुतल देश को छोड कर यहाँ पर आया हूँ ।"

नारायण भट्ट के विचार सुनने पर महाराजा राज राजनरेन्द्र ने कहा—

"हमने अनेक बार महाभारत की कथा सुनी है। फिर भी बार-बार सुनने की इच्छा बलवती होती जा रही है। व्यास महर्षि द्वारा प्रणीत महाभारत को मूल की रक्षा करते हुए तेलुगु मे प्रस्तुत करने की सामर्थ्य रखने वाले कवि का हमे अन्वेषण करना होगा।"

इस पर वेदविदो ने निवेदन किया—

"जो स्वाध्यायवेत्ता नही, वह रूपातर करने योग्य नही हो सकता!"

"वह नित्य नैमित्तिक कर्मों का अनुष्ठान करने वाला हो तथा अविरल जप, तप एव होम मे तत्पर भी हो!" सोमपीथियो ने कहा—

"यदि वह ब्रह्माड आदि नाना पुराणो का ज्ञाता न हो तो केवल महाभारत के पठन करने मात्र से भारत-सहिता को हृदयगम नही कर सकेगा।" पौराणिको ने सलाह दी।

"जो पाणिनीय का भाष्य युक्त अध्ययन न कर चुका हो, वह सर्वथा इसके अनुवाद के अयोग्य है।" वैयाकरणो ने कहा।

"अनुवाद कर्ता तेलुगु मे ही नही, बल्कि सस्कृत मे भी काव्य-रचना करने की सामर्थ्य रखे, यह बडी जरूरी है।" सस्कृत के कवियो ने इसका निर्धारण किया।

नीतिविदो ने बताया — "रूपातर कर्ता सद्विनुतावदात चरित हो।"

मीमासको ने कहा — "वह सत्प्रतिभाभियोग्य हो।"

अत मे नृपकाम दण्डनाथ ने मदहास करते निवेदन किया—

"महाराज, सभी शास्त्रो के पारगत विद्वानो ने महाभारत के रूपातर कर्ता के लिए असाधारण अनेक लक्षणो की आवश्यकता बतायी। मै यह सोच कर आपसे एक और गुण के होने की अभ्यर्थना करता हूँ कि हमारे दरबार मे सब प्रकार के असाध्य गुण रखने वाले व्यक्ति अवश्य होगे। साथ ही मेरा निवेदन है कि वह लोकज्ञ भी हो!"

इस पर महाराजा के साथ सभासदो ने भी अनुमोदन किया।

अभी तक दरबारी कवि मौन थे। नन्नय तथा नारायण भट्ट को छोड अन्य सभी इमी आशा मे बैठे थे कि महाभारत के रूपातर करने का गौरव उन्हे प्राप्त होना चाहिए। एक-एक गुण का उल्लेख करते ज्यो-ज्यो परिषद निवेदन करती गयी, त्यो-त्यो उनकी आशाएँ धराशायी होती गयीं।

नारायण भट्ट ने मौनभग करते हुय कहा—"प्रयत्न पूर्वक ही नही अपितु अप्रयत्न पूर्वक ही सही, जो व्यक्ति मिथ्या भाषण नही करता, उसी को यह भगीरथ प्रयत्न करना चाहिये। मेरी दृष्टि मे ऐसे ही व्यक्ति इस योग्य है।"

सभा मे गभीरता छा गयी।

राजराजनरेन्द्र ने सभासदो को सबोधित करते हुये कहा—

"जनमेजय चक्रवर्ति के लिए व्यास महर्षि गुरु है। हमारे भी कुलगुरु नन्नयाभट्टारक है। हमारा अभिमत है कि नन्नयभट्टारक जननुत कृष्ण-द्वैपायन द्वारा रचित महाभारत मे निरूपित अर्थ को अधिक धीयुक्ति के साथ प्रस्तुत करने की क्षमता रखते है।"

सम्राट के वचन सुनकर कवि एव पडित समुदाय ने नन्नय पर दृष्टि केंद्रित की।

नन्नय ने स्वप्न मे भी न सोचा था कि यह भार उस पर आ पडेगा उस महासभा मे महाराज ने उसके प्रति जो आदर भाव दिखाया, वह अत्यत भार-सा उसे प्रतीत हुआ।

उसकी मनोभूमि मे वेदव्यास की दिव्य मूर्ति भासित हुई।

अप्रयत्न ही नन्नय ने यह मगल श्लोक पढा "श्री वाणी गिरिजाश्चि-रायदधतो वक्षोमुखागेषु ये लोकाना स्थिति मावह त्यविहाता स्त्रीपुस

योगोद्‌भावाम् ते वेदत्रय मूर्तय त्रिपुरुषमास्मपूजिना वस्मुरैः भूयामु पुरुपोत्त-माबुजभव श्रीकधरा श्रेयसे ।"

पडित, कवि एव सभामदो ने एक साथ' तथास्तु ' कहा—

महाराज के आदेश को नन्नयभट्टारक को प्रत्यक्ष रूप मे स्वीकार करने की सूचना न दी गई । अत इसे राजादर का अविनय ममझने की मभावना है ।

अत वज्जिय ने कहा—

"महाराज, नन्नयभट्टारक पर आपने अकस्मात् महान भार रख दिया है । यो तो उनका मगल-श्लोक उनके अगीकार का बोध करता है । फिर भी महाभारत की रचना के लिए कवि वरण के निमित्त दशमी के दिन एक विशेष सभा बुलाना उचित होगा ।"

राजराज ने स्वीकृति दी । सभा समाप्त हुई । सम्राट आसन से उठ खडे हुये । कवि, सामत, दण्डनाथ, पडित इत्यादि ने नन्नय के निकट पहुँच कर आदर पूर्वक उसका अभिनदन किया ।

पर नन्नय के लिए यह सतोषदायक विषय न था ! क्या वह व्यासकृत महाभारत का भार वहन करने वाला गगाधर है ?

राजा का आदेश, विद्वज्जनो का अनुरोध, पूज्यश्री वज्जिय प्रेग्गडा का प्रोत्साहन, आत्म बधु नारायण भट्ट का इस मे सूत्र-धार होना, इन सब बातो पर विचार करते नन्नय ने नारायण भट्ट की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा ।

नारायण भट्ट ने नन्नय के निकट पहुँच कर उसकी पीठ पर दक्षिण हस्त रख कर कहा—

"इतने सारे पडित,कवि तथा महाराज के समझाने पर भी तुम अपनी शक्ति का पता नही पा रहे हो ? तुम सत्य ही हनुमान हो ।"

नारायण भट्ट के वचन सुन सब हँस पडे ।

नन्नय ने लज्जावश मस्तक अवनत किया।

अथर्वणाचार्य तथा वेमुलवाड भीम कवि इस सभा के भार को न वहन करने की दशा मे पहले ही चले गये। पावुलूरि मल्लना नन्नय का अभिनदन कर चला गया। वृद्ध भीमनभट्ट यह सोच कर दुखी हुआ कि यह आदर उसके पुत्र को प्राप्त नही हुआ। वेदनापूर्ण मन से नन्नय को आशीर्वाद दे वह भी चला गया।

क्षेमेन्द्र, चित्तप यह कह कर चले गये कि "आज लगता है कि हम लोग भोजराज की सभा मे है।"

कृष्णमिश्र, बिल्हण कवि आदि भी सस्कृत के श्लोको मे नन्नय का अभिनदन कर चले गये।

वेद-वेदाग विद सोमयाजी ब्राह्मण भी नन्नय को अशीर्वाद देते हुये चले गये।

नन्नय अत्यत प्रयत्न पूर्वक निग्रह करते सभासदो के आशीर्वाद एव प्रणामो का उचित रीति मे उत्तर देता रहा।

पर वास्तव मे नन्नय नारायण भट्ट के साथ एकात मे वार्ता करने को लालायित हो रहा था।

50

"नारायण, तुमने अपना भार मुझ पर क्यो डाल दिया ?" नन्नय ने पूछा ।

"तुमको मुझ पर इस बात का विश्वास है न कि मै उचितज्ञ हूँ ?" नारायण भट्ट ने पूछा ।

"साधारणतः उचितज्ञ ही हो, किंतु इस विषय मे मुझे शका हो रही है ।"

"अच्छी बात है ! मैने क्या युवराज के साथ तुमको चक्रकोट्य मे भेजने का राजा से अनुरोध किया ?"

"इस घटना के साथ उसका सबध ही क्या है, नारायण ?"

"क्यो नही ! मैं ही अगर योग्यता रखता तो कभी का महाभारत का रूपातर प्रारभ कर देता, समझे ?"

"नारायण, जो तुम्हारे लिए साध्य नही, वह क्या मेरे लिए साध्य हो सकता है ?"

"जो तुम्हारे लिए साध्य नही, ऐसे कुछ कार्य मेरे लिए साध्य हैं । क्या चक्रकोट्य के हमले मे तुम युवराज का साथ दे सकते थे ?"

"मैने स्वप्न मे भी तो युवराज के साथ जाने की कामना नही की थी ।"

"इसलिए तुम उचितज्ञ हो !"

"मै इनकार कब करता हूँ ?"

"नन्नय, काचीपुरम मे वेदाध्ययन करते समय हम लोग अनध्ययन के समय महाभारत का व्यग्रतापूर्वक अध्ययन किया करते थे। स्मरण है न ?"

"क्यो नही ? उन समय तुम मुझे ऐसी अनेक विशेषताएं समझाया करते थे, जो बिलकुल मुझे सूझती न थी ?"

"नन्नय, मेरे प्रति आदर भाव के कारण तुमने मुझे जो सूक्ष्म बाते बतायी थी, उनको भूल रहे हो ?"

"नारायण ! तुम स्नेहवश मुझे बडा बता रहे हो !"

"नही, नही ! अमात्य पद स्वीकार करने के पश्चात मेरी बुद्धि मलिनप्राय हो गयी है ! महाभारत की दण्डनीति की अपेक्षा धर्मनीति को जगत के सामने रखना अधिक आवश्यक है !"

"क्या तुम स्वीकार करते हो, इसका मै अधिकार रखता हूँ ?"

"ऐसा मैं कभी नही कह सकता ! सर्वज्ञ व्यास भगवान कृत महाभारत को पुनः लिखने का पूर्ण अधिकार किसी को नही है। किंतु उसका तेलुगु रूपातर करने के लिए तुमसे योग्य व्यक्ति अन्यत्र दुर्लभ है।"

"नारायण ! मेरे अवयव शिथिल हो रहे है ! मेरी जिह्वा सूखती जा रही है ! मेरे हाथ काप रहे है। मैं खडा नही हो पा रहा हूँ। ये सब क्या हो रहा है ?"

"नन्नय ! ये सब कारण तुम्हारे अधिकार को बल प्रदान कर रहे है !"

"इन शब्दो से मेरी बुद्धि को मोहित करते मालूम होते हो, नारायण! मुझे अपना शिष्य मान कर आदेश दो, नारायण !"

"नन्नय, नयन पुन आर्द्र हो उठे।

"हृदय की इस दुर्बलता को त्याग कर आज ही अग्निहोत्र के समक्ष काव्य-रचना प्रारभ कर दो, नन्नय! पचमी, सोमवार, उत्तराषाढ नक्षत्र का मुहुर्त बडा सुन्दर है! तुम्हारी भाति प्रारभ मे वैराग्य मे आ कर गाडीव को छोड कर विजय ने अत मे महाभारत युद्ध मे विजय प्राप्त की है। उस पार्थ को जो लक्षण दिखाई दिये, वे ही तुम्हे दिखाई दिये है।"

नन्नय भट्टारक के स्मृति पटल पर गीता के वाक्य चमक गये! उसे इस बात के स्मरण आते ही हँस कर गया कि वह तब तक अप्रसन्न ही भगवद्गीता के भागो का अनुवाद कर रहा है?

"तब तो, नारायण! जैसे पाकशासन को भारत के घोर रण मे नारायण ने जैसी सहायता की, वैसे ही तुम भी इस कार्य मे सहायता करने की प्रतिज्ञा करोगे?"

"अरे, इसके लिए प्रतिज्ञा करने की भी आवश्यकता है? मैं इस कार्य मे तुम्हारा आज्ञानुवर्ति हूँ। तुम रथिक हो, मैं सारथी हूँ।"

"नष्टो मोह स्मृतिर्लब्धात्वत्प्र सादान्मयाच्युत स्थितोस्मि गतसदेहः करिष्ये वचन तव!"

ये शब्द सुनकर नन्नय हँस पडा।

"नन्नय, हमसे बात करने के लिए तुम्हारी दीदी बडी देर से वहाँ पर खडी है। हमे व्याकुल देख वह भी बडी परेशान दीखती है।"

"दीदी जी, आप लोगो ने भी हमारी बाते सुनी है? इतनी तकलीफे उठा कर इतने दिनो बाद पत्नी, पुत्री को लौटे देख कर भी नारायण हमसे बोलते ही जा रहे है। इसलिए मैं भी व्याकुल हूँ।"

"आपके भाई के चमत्कारपूर्ण वचन तुम नहीं समझ सकती बहन!' सोमिदेवी ने कहा।

"नन्नय अकेले ही सत्य वचन बोलने वाला नही। मै भी जब तक मत्य बोलने का अभ्यास रखता हूँ।"

इसी समय सोमिदेवी ने कहा– "कुपमा आपकी प्रतीक्षा करते करते थक गई और थोडी देर पहले मार्कडेय म्वामी के दर्शन करने गई है।"

"आज पडित सभा मे क्या हुआ है, जानते है?" नारायण भट्ट ने पूछा

"हाँ! हाँ! नारायण भट्ट ने चोर जैसा व्यवहार किया।" नन्नय ने ठीक दिया।

"चुप रहो! नन्नय। राजराज ने स्वय तुम से व्यासकृत,महाभारत का अनुबवाद करने को परिषद की आज्ञा से नही कहा था। इसमे क्या है? यह आदर नही है।" सोमिदेवी ने पूछा।

"जल्दबाजी न करो। राजराज के पूछने पर नन्नय मौन ही रहा। मैंने उमकी ओर देखते सकेत किया, फिर भी यह बोलता तक नही। न मालूम कैसा आदमी है।" नारायण ने उलाहना किया।

"क्या! महाराज तो नाराज नही हुए?" अरुधती ने पूछा।

"कर्नाटक की राजसभा मे ऐसे कार्य के लिए शिरच्छेद का दड दिया जाता है।" सोमिदेवी ने कहा।

"ओ! तुमने स्वीकार किया कि ऐसा मौन रहना खतरनाक है। क्या मै झूठ बोलता हूँ।" नारायण ने कहा

"हाँ! अभी अभी आपने ही कहा था कि जब तब सत्यवचन भी बोलेंगे, हाँ बताइए, आखिर क्या हुआ।" सोमिदेवी ने पूछा।

"बेचारे वज्जियप्रेग्गडा ने उनको बचाया, प्रत्युत्तर देने के लिए इन्हे पाच दिन की अवधि दिलाई है।" नारायण ने कहा।

"तो मेरे भाई साहब क्या कहते हैं ? इससे बढकर महाराज भाई का क्या आदर कर सकते है ?" सोमिदेवी ने कहा।

"सुनते हो न नन्नय, तुम्हारी बहन भी मेरे कथन का समर्थन कर रही है।" नारायण ने कहा।

"अनुकूल दापत्य ऐसा ही होता है। आखिर मुझे तो मनाया ! मैं भी ओखली मे सर देने को तैयार हो गया।" नन्नय ने कहा।

दुग्गव्व के साथ कुपमा आ पहुँची। अपने पिता को देखते ही दौडकर उसका आलिगन किया और फूटफूटकर रोने लगी। नारायणभट्ट भी अपने ऊपर नियत्रण न कर सका। उसके अश्रुजल से कुपमा का सर भीग गया। इसे देख दुग्गव्व भी जोर से रो पडी।

"बेचारी इतने दिन अपने पिता के वास्ते कितनी चटपटाई होगी।" अरुधती के नयन सजल हो गए।

"यह बेचारी अपने पिता को छोड पल भर भी अलग नही रहती थी। इस यात्रा मे हम ने जो तकलीफे उठाई, वर्णन के बाहर हैं।" यह शब्द कहते सोमिदेवी भी आँसू बहाने लगी।

बडी देर तक पिता और पुत्री आँसू बहाते रहे। उस आवेग के कम होते ही नन्नय ने कहा—"नारायण पादप्रक्षालन कर आचमन करो।" सब लोग आश्चर्य चकित हुए।

नारायणभट्ट का मुखमडल विकसित हो उठा !

"नन्नय, तुम्हारी इस धर्म-निश्चल बुद्धि पर ही मैं हारी हूँ। आनद की वजह से ही सही अश्रु गिराया, इसलिए तुमने शाच का स्मरण दिलाया

है।" ये शब्द कहते अरुंधती के लाये जल से पाद-प्रक्षालन कर आचमन किया।

"कुपमा, मामाजी को प्रणाम करो।"

नारायण भट्ट के कहते ही कुपमा ने नन्नय का पादाभिवदन किया। इस पर नन्नय ने "शीघ्रमेव कल्याण प्राप्ति रस्तु!" आशीर्वाद देकर सर पर हाथ फेरा।

"अनेक वर्षो की मेरी कामनाएँ फलवती होती जा रही है। योग्य व्यक्ति ने महाभारत के रूपातर का भार लिया है, मुझे गोदावरी तट पर स्थाई निवास प्राप्त हो गया है।" नारायण भट्ट की बातो मे आकर सोमि-देवी ने पूछा—

"क्या कहा?"

"तुम नही जानती बहन! नारायण भट्ट अग्रहारिक बन गया है।" नन्नय ने कहा।

"भाभीजी, मैं कहना भूल गयी। चन्द्रग्रहण के दिन महाराज ने नदम्पूडि ग्राम अग्रहार मे दिया।" अरुंधती कहा।

सोमिदेवी का मुख मण्डल खिल उठा—

"ओह, हमे यहाँ पर स्थिर निवास उपलब्ध हो गया है! मुझे बडी प्रसन्नता हो रही है!"

"नदमपूडि कैसा सुन्दर प्रदेश है! उसके दोनो तरफ गोदावरी बह रही है। उस से सट कर ही पूर्वी दिशा मे हमारा गाँव विल्लेम पेदपूडि है।"

नारायण भट्ट ने दीर्घ निश्वास लेकर पुन कहा—"नम्नय, मेरी अब केवल एक ही इच्छा रह गयी है। उसकी पूर्ति भी तुम पर आधारित है।"

"मुझ पर ही आधारित हो तो मुझे आदेश देकर करा सकते हो न ?" नम्नय ने पूछा।

"हाँ, मेरी इस पुत्री को योग्य वर के हाथ सौंप कर मैं निश्चिन्त होना चाहता हूँ। तुम्हारे पुत्र से बढकर योग्य वर और कौन हो सकता है ?" नारायण ने कहा।

अरुंधती तथा सोमिदेवी ने परस्पर एक दूसरे के मुख का अवलोकन किया।

कुपमा लज्जा वश माँ की गोद मे छिप गयी।

"मैं अब तक कुपमा के लक्षणो को देख ही रहा था। वह किसी के भी घर गृहलक्ष्मी के रूप मे ज्योति बनकर चमकने के लक्षण रखती है। पर.......... ..." नम्नय अपने वाक्य पूरे न कर पाये।

"मैं अमात्य पद मे हूँ। इसलिए मेरे शिष्टत्व के क्षीण होने का सदेह करते हो ? मेरे प्रपितामह तक अविच्छिन्न रूप से सोमयाजी हो गये हैं। मैं भी शीघ्र यज्ञ-दीक्षा स्वीकार करने वाला हूँ।"

नारायण भट्ट ने कहा।

"तुम भले ही एक यज्ञ न करो, फिर भी तुम सोमयाजी हो। तुम से बढकर आर्ष सप्रदाय की कामना करने वाला पागल नही हूँ।" नम्नय ने कहा।

"तो, मैं यज्ञ के समय आर्ष पद्धति पर कन्यादान कर सकूँगा या नहीं, यही सदेह है।" नारायणभट्ट ने जवाब दिया।

"ब्राह्म कन्यादान से आर्ष कन्यादान को विशेष मनाते हो ? . . . लेकिन . " सदेह करते नन्नय ने मोमिदेवी की ओर देखा ।

नारायणभट्ट ने क्षण भर सोचा । तुरत बात उसकी समझ मे आई ।

"नन्नय ! तुम्हारी बुद्धि की दाद देता हूँ । ओह ! उसे अभ्रातृक समझ कर सदेह करते हो ? तब तक औरस पुत्र का जन्म न हो दत्तपुत्र को ही सही ग्रहण कर उसके बाद ही कन्यादान करूँगा । ठीक है न ?"

नन्नय ने मुस्कुराते हुए कहा—"क्या तुम्हे मेरे पुत्र को देखने की जरूरत नही ।"

तुम्हारा पुत्र कुरूपी भी क्यो न हो ? "मैने अपनी लडकी देने का निश्चय किया है ।" नारायण ने दृढ स्वर मे कहा ।

"यह मेरा भाग्य है । तथास्तु ।" नन्नय के मुह से निकल पडा । स्नान के उपरात नन्नय ने अग्नि के समक्ष महाभारत की रचना का श्री गणेश किया ।

51

नन्नय भट्टारक महाभारत की रचना मे निमग्न था। उधर गृह के मध्य भाग मे नारायण भट्ट सोमिदेवी, कुपमा, अरुधती दुग्गव्व, पोन्न अन्य परिचारक समाविष्ट थे। सब के चेहरो पर प्रसन्नता की रेखाएँ छाई हुई थीं। पोन्न अन्यमनस्क था। पूर्व कथाश्रवण से वे अपना समय बिता रहे थे।

सक्षेप मे सोमिदेवी की कहानी यो है ·· · ·

'सोमिदेवी, कुपमा दो परिचारको के साथ अनतशयन से होते कन्याकुमारी पहुँचे। उसके समीप नागरकोइल के पास कोट्टरुव् मे एक दडनाथ था जो वेंगी चालुक्य राजवशी होने के नाते आँध्र था। उसने इनकी रामेश्वर यात्रा के लिए सब प्रकार की सुविधाएँ कर दी। धनुष्कोटि के पास सेतुस्नान,करने तक नारायणभट्ट के यहाँ से उन्हे बराबर समाचार मिलते रहे।"

इसी समय पाँड्य राज्य मे विद्रोह हुआ। किट्टी नामक महावशी राजकुमार ने सिहल मे विद्रोह करके रोहण भाग पर अधिकार कर लिया। चोलों के सामत पाँड्य राजाओ के साथ राजकुमार किट्टी षड्यत्र कर [illegible] था। इसलिए यह विद्रोह हुआ। इस कारण से चोलो की सेना [illegible] मे सचार करने लगे। चोळ राजाओ के शत्रु आहवमल्ल के पास नारायण भट्ट प्रधानामात्य था। इसलिए उसके परिवार पर राजभटों ने सदेह किया

और उन्हें बदी बनाया । कोट्टुरुवु के वेगी, चालुक्य दडनाथ को जब यह समाचार मिला तब उन्हें मुक्त कराकर तीर्थयात्रा पर भेज दिया ।

दर्भशयन नव पाषाण का सेवन कर मदुरा पहुँचे । मदुरा में मीनाक्षी का दर्शन किया, वहाँ से तजाऊर पहुँचे । तजाऊर मे तब तक चालीस वर्ष पूर्व राजराजेश्वरालय नामातर बृहदीश्वरालय निर्मित था ।

तजाऊर से श्रवण बेळगोळ गए । वहा पर गोमठेश्वर की मूर्ति देखी । रास्ते मे गगेकोड चोळपुरम के दर्शन किए । वहाँ से श्रीरग क्षेत्रम् मे श्री रगनाथस्वामी, उसके समीप मे स्थित जबुकेश्वरस्वामी के दर्शन किए ।

वहाँ से कुभकोणम् आए । कुभकोणम् मे सोमिदेवी को धोखा खाकर अधिक धन व्यय करना पडा ।

वहाँ से वे लोग काचीपर मे आए । कामाक्षी देवी, एकाबरनाथ, बरदराजस्वामी के दर्शन कई बार किए । वे काचीपुर में गुरुकुल मे ठहरे थे । नारायण भट्ट के गुरु वृद्ध होने पर भी पाठो का प्रवचन कर रहे थे । सोमिदेवी और कुपमा के साथ उन्होने बडा वात्सल्य पूर्ण व्यवहार किया । नन्नय का पुत्र उस समय वही अध्ययन कर रहा था । उसने भी उनका बडा आदर किया ।

वहाँ से वे लोग तिरुमल पहुँचे । वहाँ के देवी-देवताओ की पूजा की ।

तिरुपति से होते हुये श्रीकालहस्ती गये ।

श्रीकालहस्तीश्वर के दर्शन के पश्चात विक्रम सिहपुर मे जाकर श्री रगनायक की अर्चना की । वहाँ से समीप मे स्थित कृष्णापट्टण गये । नौका पर सवार हो मोटुपल्लि पहुँचे । वहाँ पर साथ मे मिल कर यात्रा कर ही रहे थे, चोरो ने मार्ग-मध्य मे रोक दिया और उठा लेजाकर त्रेपल्ले में पहुँचा दिया ।

दुग्गव्व की सहायता से सोमिदेवी और कुपमा अमावास्या के उस अधेरे मे जगल से होते जा रहे थे, उनसे सौ गज दूर आगे एक शेर ने एक जानवर को मार गिराया और दहाड कर उठा ।

वे तीनो एक दम कॉप उठी । तरह-तरह की मनौतियाँ की ।

उन्हे दक्षिण की ओर जाना था, पर आकाश के नक्षत्रो द्वारा उन्हे पता चला कि वे पूर्वी दिशा की ओर जा रही है । इतने मे वे कृष्णा नदी के तट पर पहुँची,किंतु दुग्गव्व जिस गाँव मे जाना चाहती थी,उसमे कैसे जावे ।

उस असहाय हालत मे उन्हे नदी पर एक सर्वालकृत नाव दिखाई पडी । दरियाफ्त करने पर पता चला कि वह बज्जिय प्रेग्गडा के पुत्र की नाव है । गुप्त रूप से वृत्तात जानने के पद पर नियुक्त हो वह इधर कुछ समय से कृष्णा नदी के तट पर सचार कर रहा है ।

जब उसे मालूम हुआ कि उन नारियो मे नारायण भट्ट की पत्नी और पुत्री भी है तो उनके द्वारा वृत्तात जान लिया । तुरन्त राजभटो को ब्रेपल्ले मे भेज कर चोरो के सभी सरदारो को बन्दी बनवाया और उन्हे राज महेन्द्रपुर भिजवा दिया । तदनतर सोमिदेवी, कुपमा तथा दुग्गव्व को सुरक्षित नन्नय भट्टारक के घर पहुँचवा दिया । मार्ग मध्य मे सोमिदेवी के घायल सैनिक तथा पोन्न भी उनसे मिले ।"

सक्षेप मे नारायण भट्ट की पूर्व कहानी यो है––

"आहवमल्ल सोमेश्वर के पास नारायण भट्ट ने सात वर्ष प्रधानामात्य का कार्य किया । कर्नाटक चालुक्य नरेश वैदिक धर्म के अनुयायी थे, किंतु जैन धर्म के प्रचार के कारण वैदिक धर्म के प्रति उनकी निष्ठा कम होती गयी । नारायण भट्ट से सहा न गया । इसलिए चोळ मण्डल अथवा वेगी मण्डल में जाकर स्थाई निवास बनाने का सकल्प किया । इसलिए अमात्यपद को त्याग दिया ।

"तीन वर्ष पश्चात् उसने अपनी पत्नी व पुत्री को रामेश्वर की यात्रा पर भेजा। जब वे कर्नाटक राज्य की सीमा पार कर गयी, तब उसने अपनी सारी जायदाद बेचने का प्रयत्न किया। कर्नाटक राजा आहवमल्ल को जब यह समाचार मिला तब उसने नारायग भट्ट को बुलाकर समझाया कि किसी भी हालत मे उसे देश छोड कर जाने की अनुमति नही दी जाएगी। नारायण भट्ट ने प्रतिज्ञा की कि वह राज्य के रहस्यो को गुप्त रखेगा, किंतु राजा ने न माना।

"नारायम भट्ट की जायदाद खरीदने वाला कोई न था। राजभट निरतर उसका पहरा दे रहे थे। वहाँ की जिंदगी नारायण भट्ट के लिए दुर्भर प्रतीत होने लगी। उसने अपना वेष बदल लिया। थोडा धन और कुछ जरूरी मुख्य वस्तुओ को मात्र लेकर अपने सर्वस्व को वही छोड दिया। एक दिन अर्धरात्रि को गुप्त रूप से वह कल्याण कटक से चल पडा। उसके साथ अकेला पोन्न ही आया था।

'नारायण भट्ट को पोन्न के साथ कर्नाटक राज्य की सीमा को पार करने मे असख्य विघ्नो का सामना करना पडा। किसी भाति चोळ राज्य मे प्रवेश कर दक्षिणी यात्रा पर जाने वालो की भाति वेष बदलकर वेगी मण्डल मे जा पहुँचे। वहाँ से कोनसीमा मे आ पहुँचे। फिर भी कर्नाटक चालुक्यो के गुप्तचरो से वह परेशान था। इसके बाद नारायण भट्ट राज महेन्द्रपुर मे जा पहुँचा। वे वहाँ के हाट मे चलने वाले अनेक रहस्य जानते थे। पोन्न ने उन रहस्यो को रापति बेनय को बताकर फारसी व्यापारियो को बन्दी बनाया तो नारायण भट्ट ने सैंधव को पकडवा दिया।"

इस कथा श्रवण से सब निमग्न थे। अँधेरा फैलने को था। दरवाजे पर दुग्गव्व की चिल्लाहट सुन कर नारायण भट्ट उधर दौड पडा। अपने चरणो के पास बेहोश गिरी सुजाता का उपचार करते पोन्न आँसू बहा रहा था।

दुग्गव्व ने नारायण भट्ट को बताया कि पोन्न दुग्गव्व से बात कर रहा था। सुजाता अचानक आ पोन्न के पैरो पर गिर पडी। पोन्न ने आवेश मे आकर एक लात मारी। सुकुमार गात्रा सुजाता बेहोश हो गयी, फिर भी पोन्न लात मारे जा रहा था। दुग्गव्व चिल्ला पडी–"मार डालता है! मार डालता है।" दुग्गव्व की चिल्लाहट सुन कर देखा तो सुजाता बेहोश थी। इसलिए वह पश्चात्ताप के साथ रोते उसकी शुश्रूषा कर रहा था।

52

वह विजय नाम सवत्सर वैशाख कृष्ण दशमी शनिवार का दिन था ।

राज राजनरेन्द्र का दरबार लगा हुआ था ।

प्रधानामात्य वज्जिय प्रेग्गडा, पुरोहित, नृपकाम, सेनापति, मुप्पराज, जननाथ, राजमय्या इत्यादि दण्डनाथ, विजयादित्य, शक्तिवर्मा आदि राज बधु, नाण्यदेव वगैरह सामत मण्डलेश्वर भी परिवेष्टित थे । सुन्दर युवतियाँ चँवर डुला रही थी ।

युवराज राजेन्द्रदेव बायिरा नगर के लिए प्रस्थान कर चुका था, इसलिए सभा मे अनुपस्थित था । सारे वेगी मण्डल मे शाति स्थापित हो चुकी थी । इसलिए वज्जिय प्रेग्गडा के पुत्र को विश्राम मिल चुका था । वह भी वज्जिय के समीप बैठा था ।

उस सभा मे अपार शब्द पारगत वैयाकरण, भारत, रामायण इत्यादि अनेक पुराणो मे प्रवीण पौराणिक, मृदु मधुर रस, भाव गद्य-पद्य रचना विशारद नारायण भट्ट, भीमन भट्ट, चेट्टन भट्ट, मट्टन भट्ट, कृष्ण मिश्र, बिल्हण भट्ट, क्षेमेन्द्र, चित्तप इत्यादि महाकवि विविध तर्क शास्त्रो के पार-गत चीदमार्य, पपना आदि तार्किक, सम्राट से परिवेष्टित हो विद्या गोष्ठी मे उपस्थित थे ।

नन्नय भट्टारक विशेष रूप से एक उन्नत आसन पर उपविष्ट था ।

मागधो के राजा के वश कीर्तन किया। तदनंतर वन्दीजनो ने कहा–

स सर्वलोकाश्रय श्री विष्णुवर्द्धन महाराजाधिराज परमेश्वर जयतु जयतु! परम भट्टारक जयतु जयतु! परम माहेश्वर जयतु जयतु! परम ब्रह्मण्य जयतु जयतु! श्री राज राजदेवो जयतु जयते त राम!

इसके उपरात एक वन्दी ने नन्नय भट्टारक को प्रणाम कर श्लोक पढा।

तदनतर राज राजनरेन्द्र ने गभीर स्वर मे कहा – "नन्नय भट्टारक जनमेजय के लिए वेदव्यास की भाति आप हमारे कुल ब्राह्मण हैं, मेरी दृष्टि मे आप ही सब प्रकार से श्री महाभारत सहिता का तेलुगु रूपातर करने की क्षमता रखते है। इसलिए इस परिषद के समक्ष हम आपको चुन रहे है। यह परिषद ही आपकी योग्यताओ का विवरण प्रस्तुत करेगी!"

प्रारभ मे राजपुरोहित ने कहा –

"नन्नय अविरल जप होम तत्पर है!'

"ब्रह्माण्डादि नाना पुराण विज्ञानिरत है!" पौराणिको ने निर्धारण किया।

"यही इस रचना के पात्र है।" पपन भट्ट आदि मीमासको ने व्याख्या की।

"नन्नय सद्विनुतावदात चरित है।" नीतिविदो ने कहा।

"नन्नय उत्तम कोटि का लोकज्ञ हैं!" वज्जिय प्रेग्गडा ने कहा।

उभय भाषा-काव्य रचना पारगत हैं।" नारायणभट्ट ने प्रस्तुति की

इस प्रकार सबने अपने अपने ढग से नन्नय की योग्यताओ पर प्रकाश डाला।

सम्राट ने प्रसन्न होकर पुन' कहा—

"मैंने अनेक पुराण सुने, धर्मशास्त्रो का ज्ञान प्राप्त किया। उदात्त रसान्वित काव्य-नाटक आदि का श्रवण किया।...फिर भी सदा सर्वदा महाभारत सुनने की मेरी इच्छा बारबार प्रबल होती जा रही है।...

मेरे चन्द्रवश के कर्ता कुरु-पाडु राजाओ की विमल यशोगाथा सुनने की अभिलाषा तीव्रतर होती जा रही है!

मैंने सुना है कि महाभारत के श्रवण से असख्य गायो के दान करने का फल मिलता है।

उत्तम बहु वेदविदो को दान करने का फल भी प्राप्त होता है। सुनते है कि महाभारत के श्रवण से असख्य यज्ञो के फल की प्राप्ति भी होती है।

इस पर सारी सभा मे निश्शब्द छा गया!

नन्नय ने प्रसन्न वदन से कहा—

"फिर भी देव! आप के आदेशानुसार विद्वज्जनों के अनुग्रह से मैं यथाशक्ति इस महाकाव्य का प्रणयन करूँगा।'

नन्नय ने सरस्वती, विष्णु इत्यादि देवी-देवताओ का स्मरण किया। इस के उपरात व्यास महर्षि की स्तुति करते हुये कहा—

"पायक पाक शासनिकि भारत घोर रणबुनदु ना
रायणुनट्लु वासिक धरामर वश विभूषणुडु ना
रायणभट्टु वाड्मय धुरधुरुडुन् दन किष्टुडुन् सहा
ध्यायुडु नैन वा डभिमप्त स्थिति दोडयि निर्वहिपगन्"

अर्थात् महाभारत के भयकर युद्ध क्षेत्र में जिस प्रकार अर्जुन की श्रीकृष्ण ने सहायता की याने सारथ्य किया, उसी भाति मुझे इस महाभारत की रचना मे मेरे सहाध्यायी, वाड्मय के धुरधर विद्वान, मेरे हितैषी व

स्नेही नारायण भट्ट की सहायता प्राप्त हो, तो मैं यह कार्य सपन्न कर सकूगा ।

यह पद्य सुन कर राज राजनरेन्द्र ने आदर भाव से नारायण भट्ट का अवलोकन किया । इस पर सभा मे जयनाद हुए ।

सम्राट सिहासन से उठ खडे हुए । साथ ही सभासदो ने उनका अनुकरण किया ।

परिचारिकाओ ने चदन, ताबूल आदि आगे बढाये । सम्राट ने उन्हे ग्रहण कर नन्नय भट्टारक का सत्कार किया ।

इसी समय वज्जिय पुत्र ने एक असपूर्ण कृति लाकर नन्नय भट्टारक के हाथ मे दी । नन्नय ने उसे आँखो से लगा कर खोलना प्रारभ किया ।

"नन्नय ! यह क्या है !" सम्राट ने कुतूहलपूर्वक पूछा ।

"महाभारत का थोड़ा अश मैंने जो अनुवाद कर रखा था ।"

वज्जिय ने मदहासपूर्वक कहा– 'गुप्त वस्तुओ के अनुसधान मे निमग्न नारायण भट्ट के नन्नय सहाध्यायी है । यह बात उन्होने मुझसे भी गुप्त रखी है !"

"नन्नय, क्या अभी से काव्य-रचना प्रारभ कर दी है?" राजराज ने पूछा ।

"प्रभु ! जिस दिन आपका आदेश हुआ था, उसके दूसरे दिन ही नारायण भट्ट ने मुहूर्त निश्चय कर दिया था !" नन्नय ने सविनय निवेदन किया ।

"कहाँ तक रचना हुई है ?"

"तृतीय आश्वास तक ।"

"भट्टारक, थोडा अंश इस सभा के सम्मुख सुना सकते हो !" राज राज ने प्रश्न किया ।

"जो आज्ञा, प्रभु !" नन्नय ने कहा ।

मारी सभा मौन हो गयी !

नन्नय ने विषद स्वर मे मद्र स्थाई मे पठन करना प्रारभ किया...

'इस कथा का प्रारभ यो है......

महाभारत कथा के कथक ने मुनि समाज को प्रणाम किया और कहा—"मैं पुराण पुण्यकथा कथन मे दक्ष हूँ। व्यास महर्षि के शिष्य रोम हर्षण का पुत्र हूँ। मेरे द्वारा आप लोग कौन-सी कथा सुनने की अभिलाषा रखते हैं ?"

इस पर मुनि समाज ने यों उत्तर दिया :

जो कथा हृदय के लिए अपूर्व हो, जिस कथा के श्रवण से हम समग्र ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं, जिस कथा के श्रवण से हमारे पापो का परिहार हो सकता है, उसी को सुनना हम पसद करेंगे !"

महाभारत मे श्रीकृष्ण का माहात्म्य तथा पाडव आदि महाभारत के गुणों का वर्णन हुआ है। इस काव्य को—

धर्म तत्वज्ञुलु धर्म शास्त्रबनि
मध्यात्म विदुलु वेदात मनियु
नीति विचक्षणुल् नीति शास्त्र बनि
कवि वृषभुलु महा काव्य मनियु
लाक्षणिकुलु सर्वलक्षण सग्रह मनि
यैतिहासिकु लितिहास मनियु
बरम पौराणिकुल् बहु पुराण समुच्च
यबनि महिगोनि याडुचुड
विविध वेद तत्ववेदि वेद व्यासु
डादिमुनि पराशरात्मजुडु
विष्णु सन्निबुडु विश्व जनीनमै
परगुचुड जेसे भारतबु ।

अर्थात वेद व्यास महर्षि ने महाभारत को वह रूप दिया, जिससे इसे धर्म तत्वज्ञ धर्मशास्त्र बताने लगे, अध्यात्म विदो ने इसे वेदात बताया,

नीति शास्त्र के ज्ञाताओ ने इसे नीति शास्त्र की सज्ञा दी। कवि वृषभो ने महाकाव्य कहा। लाक्षणिको ने इसे सर्वलक्षण सग्रह नाम से अभिहित किया तो ऐतिहासिको ने इतिहास बताया। परम पौराणिको ने इसे पुराणो का सग्रह कहा। इस प्रकार इस पृथ्वी मे इस महाकाव्य की महिमा का गान होने लगा। इस प्रकार विविध वेदो के तत्ववेदी वेद व्यास जो पराशर मुनि के आत्मज हैं। विष्णु के प्रिय पात्र है, इस काव्य को उन्होने विश्व ख्याति प्राप्त होने योग्य रूप दिया।

अलावा इसके महाभारत के श्रवण से होने वाले असख्य लाभो का उल्लेख करते नन्नय ने पद्य पढ सुनाये। तत्पश्चात महाभारत के मूल मे अभिवर्णित विशेषताओ का प्रसग पढ सुनाया।

सम्राट ने नन्नय की कविता सुन कर प्रसन्नतावश कहा—"हमे लगता है कि इस सभा के मध्य मे नर और नारायण हमे प्रत्यक्ष हो रहे हैं।"

इस के पश्चात अंत पुर से महारानी अम्मगदेवी ने कविता का श्रवण कर परिचारिकाओ के जरिये पुरस्कार भेजा। उन्हे नन्नय और नारायण भट्ट को समर्पित किया गया।

x x x x

चीदमार्य, पपनभट्ट, क्षेमेन्द्र, चित्तप इत्यादि आश्चर्य चकित हो नन्नय की रचना की प्रस्तुति करते कह उठे—"क्या तेलुगु भाषा ऐसी मधुर भी हो सकती है।"

नन्नय की रचना की प्रशस्ति होते देख नारायण भट्ट फूले न समाते थे।

नन्नय भट्ट ने अपना काव्य-पठन इन कविताओ के साथ समाप्त किया।

"रजमहेन्द्र कवीन्द्र सुरक्षमाज राज मार्ताण्ड धरि
श्री जननुत चारित्र विराजित गुणरत्न राजराज नरेन्द्रा।"
"वीरावतार सुकविस्तुत नित्य धर्म
प्रारभ शिष्टपरिपालनसक्त राजा
नारायणाख्य करुणा रस पूर्ण वीर
श्री रम्य राजकुल शेखर विष्णुमूर्ती।"

अनतर जय जय नादो के साथ सभा विसर्जित हुई।

53

गोदावरी तट पर नदमपूडि का निवास नारायण भट्ट के सोमयाग के साथ प्रारभ हुआ। एक वर्ष के भीतर सोमिदेवी की इच्छा के अनरूप यज्ञेश्वर कचेन सोमयाजी के रूप मे उनका पुत्र हो अविर्भूत हुआ। इसके कुछ समय उपरात नन्नय के पुत्र के साथ कुपमा का विवाह सपन्न हुआ।

नन्नय महाभारत के वन पर्व मे जब शरत ऋतु का वर्णन लिख रहा था, तब नारायण भट्ट गोलोक वासी हुआ। नन्नय ससार से विरक्त हो सन्यासी बन ब्रह्मीभूत हो गया। इस प्रकार महाभारत की रचना रुक गयी।

तेलुगु महाभारत की अपूर्ति की व्यथा नारायण भट्ट को थी, इसलिए पुन तिक्कन सोमयाजी के रूप मे उसने जन्म धारण कर विराट पर्व से लेकर शेष महाभारत की पूर्ति की। परतु वह वन पर्व का शेषाश पूरा न कर पाया।

पुन वह एर्राप्रेग्गडा के रूप मे जन्म धारण कर वन पर्व के शेषाश की पूर्ति नन्नय के नाम कर पाया। भारत का शेषाश हरिवश की समाप्ति भी करके वह कृतार्थ बना।

कलियुग मे आन्ध्र भूमि पर नर-नारायण के अवतरित कथा को जो श्रद्धाभाव से पठन करते है, उन्हे वे पुराण ही आयु और आरोग्य प्रदान करते है!

इतिश्री।